हर्षिता प्रकाशन

ई–11/5, कृष्ण नगर दिल्ली–110051

दिमाग ही दुश्मन है

यू.जी. कृष्णामूर्ति

रूपांतर

डॉ. विजय अग्रवाल

दिमाग
ही
दुश्मन
है

विषय-सूची

यू.जी. के बारे में

(1)

अपने कार्यालय के कमरे में मुझे हताश, निराश और परेशान देखकर मेरे शुभचिंतक श्री फ्रेंक नरोन्हा बोले—"तुम कल सुबह ग्यारह बजे मेरे घर पर आओ।"

मैंने कहा—"कल मैं काफी व्यस्त हूँ। कहें तो परसों आ जाता हूँ।"

अब उन्होंने जोर देकर अधिकार के साथ कहा—"नहीं, तुम्हें कल ही आना है। मैं तुम्हें एक ऐसे अनोखे व्यक्ति से मिलवाऊँगा, जो तुम्हारी इन सारी चिंताओं और निराशाओं को छू-मंतर कर देगा।"

अगले दिन सुबह ग्यारह बजे मैंने अपने-आपको मँझले कद के एक गोरे-चिट्टे, पतले-दुबले, सामान्य से दिखने वाले व्यक्ति के सामने खड़ा पाया। इस व्यक्ति ने मुझमें कोई विशेष रुचि नहीं दिखाई। उनसे मिलने आने वालों का ताँता जारी था। वे उनसे बातें करते, कुछ पर नाराज भी होते। लेकिन लोग थे कि उन्हें सुनते ही रहते। अंत में शाम को जब मैं चलने लगा, तब उन्होंने मुझसे कहा—"पहले तुम यह निश्चित करो कि तुम चाहते क्या हो।"

इसके बाद मैं उन्हें प्रणाम कर अपने घर वापस आ गया। और मन-ही-मन यह सोचता रहा कि आज का पूरा दिन यूं ही बेकार गया। भला यह भी कोई बात हुई कि "पहले मैं यह निश्चित करूँ कि मैं चाहता क्या हूँ?" दिन बीतते गए। कुछ वर्षों बाद मेरे जेहन में अचानक यू.जी. कृष्णमूर्ति का यह प्रश्न अचानक एक विस्फोट की तरह उभरा कि "पहले तुम यह निश्चित करो कि तुम चाहते क्या हो?"

इसके बाद से मैने इस पर सोचना शुरू किया मैं इस तलाश मे लग गया कि सचमुच मैं चाहता क्या हूँ। इस तलाश में दिनों-दिन मेरी स्थिति विचित्र-सी होती गई। मैं इस प्रश्न के उत्तर को जितना सरल और सीधा समझता था, अब यह उतना ही कठिन और जटिल होता जा रहा था। मुझे लगा कि मैं एक साथ इतनी सारी चीजें चाहता हूँ कि उनके बीच से किसी एक चीज पर स्थिर हो पाना बहुत मुश्किल हो गया है। मैं आज कुछ चाहता हूँ, तो कल कुछ और चाहने लगता हूँ। इतना ही नहीं, बल्कि मैं आज जो चाहता हूँ, उसका भविष्य के मेरे चाहने से कोई तालमेल नहीं है। जैसे-जैसे मेरी यह खोज बढ़ती गई, वैसे-वैसे यू.जी. कृष्णमूर्ति के उस एक वाक्य की दीप्ति मेरे अंदर क्रमशः फैलती चली गई। मुझे ऐसा लगा, मानो इस प्रश्न के रूप में यू.जी. कृष्णमूर्ति ने मेरे अंदर यूरेनियम का कोई एक टुकड़ा रख दिया हो, जो समय-समय पर विस्फोटित हो रहा है। सचमुच, वह छोटा-सा सरल वाक्य कितना बड़ा और जटिल बन गया है।

इसके बाद से मेरी यह तलाश आज तक जारी है। अपने चाहने की तलाश की इस प्रक्रिया में मैंने न जाने कितनी चाहतों को निरस्त किया है, और कितनी नई चाहतें पैदा हुई हैं। इस प्रक्रिया ने निश्चित रूप से मुझे भटकने से बचाकर एक निश्चित दिशा दी है, और मेरे अंदर एक आत्मविश्वास पैदा किया है। एक ऐसा आत्मविश्वास पैदा किया है, जिसके पैर अपनी ठोस जमीन पर हैं। निश्चित रूप से इसमें यू.जी. के केवल उस एक वाक्य का ही नहीं, बल्कि उनकी पुस्तकों का भी बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। सबसे बड़ा योगदान मेरे वरिष्ठ श्री फ्रेंक नरोन्हा का है, जो लंबे समय तक यू.जी. कृष्णमूर्ति के घनिष्ठ सान्निध्य में रहे हैं। मैंने यू.जी. को अधिकांशतः उन्हीं के माध्यम से जाना है, और शेष जो कुछ जान सका, वह यू.जी. की पुस्तकों से। इसी से प्रभावित होकर मैंने यू.जी. की पुस्तक 'माइंड इज ए मिथ : डिस्क्वीटिंग कन्वरसेशंस विथ दि मैन काल्ड यू.जी.' का हिंदी में अनुवाद किया है।

(2)

इस पुस्तक में सन् 1983-84 के दौरान यू.जी. कृष्णमूर्ति से भारत, स्विटजरलैंड और केलिफोर्निया में की गई बातचीत का संकलन है। निस्संदेह

रूप से वह बातचीत ज्यो-की-त्यो पुस्तक मे नहीं आ पाई, जो उपयुक्त ही थी उसका पूरी सावधानी के साथ संपादन किया गया था, और उस संपादित पुस्तक को मैंने हिंदी के पाठकों के लिए सरल और सहज भाषा में प्रस्तुत करने की धृष्टता की है। अंग्रेजी के कुछ ऐसे शब्द हैं, जिनके वजन पर हिंदी के शब्द विशेष प्रचलित नहीं हो पाए हैं। इसलिए पाठकों की सुविधा की दृष्टि से मैंने कुछ ऐसे शब्दों की सूची भी दी है, ताकि पाठक भावों को अच्छी तरह समझ सके।

(3)

अब यू.जी. कृष्णमूर्ति के बारे में कुछ।

यू.जी. कृष्णमूर्ति यानी उप्पलूरी गोपाल कृष्णमूर्ति का जन्म 9 जुलाई, 1918 की सुबह एक मध्यमवर्गीय ब्राह्मण परिवार में दक्षिण भारत के मशूलीपत्तम गाँव में हुआ। उनके जन्म के समय ऐसी कोई आश्चर्यजनक घटना नहीं घटी थी, जो उप्पलूरी गोपाल कृष्णमूर्ति को यू.जी. कृष्णमूर्ति बना देती। जन्म होने के सात दिन बाद ही अपने इस एकमात्र बच्चे को छोड़कर माँ चल बसी। ऐसी स्थिति में उनके पालन-पोषण का दायित्व नाना ने सँभाला। पिता ने पुनर्विवाह कर लिया।

यू.जी. के नाना थियोसोफिस्ट थे। वे जे. कृष्णमूर्ति, एनी बेसेंट, कर्नल अल्कॉट तथा थियोसोफिकल सोसायटी के बहुत-से लोगों को जानते थे। अपने जीवन के आरंभ में यू.जी. मद्रास के थियोसोफिकल सोसायटी के मद्रास स्थित कार्यालय में जाते रहते थे, और इन लोगों से मिलते रहते थे। यहाँ तक कि उनके अपने घर में अनेक धार्मिक संतों, पंडितों, गुरुओं और महात्माओं के चित्र टँगे रहते थे। स्वाभाविक रूप से शुरू में बच्चे पर इन सबका प्रभाव पड़ा। बच्चे को ये लोग महान लगे। उनके नाना यू.जी. को लेकर भारत के न जाने कितने तीर्थ स्थानों पर गए। यहाँ तक कि यू.जी. ने अपने जीवन के सात वर्ष हिमालय की तराई में स्वामी शिवानंद के साथ योग सीखने में बिताए।

इसी समय यू.जी. को यह अनुभव हुआ कि कहीं-न-कहीं, कुछ-न-कुछ गड़बड़ है। एक दिन यू.जी. ने अपने योग शिक्षक को अचार खाते हुए देखा। ये योग शिक्षक दूसरों को इसके लिए मना करते रहते थे। यह देखकर बच्चे के मन

में यह प्रश्न आया कि भला यह आदमी ऐसा करके खुद को तथा दूसरों को धोखा कैसे दे सकता है? बच्चे ने तुरंत ही योग का अभ्यास छोड़ दिया।

बालक यू.जी. के मन में यह प्रश्न निरंतर बना रहा कि मुझे अपना काम अपने तरीके से करना है। उसके मन में अपनी परंपराओं, संस्कृति आदि के प्रति प्रश्नवाचक चिह्न उठने लगे। फलस्वरूप उसने अपना जनेऊ तोड़कर फेंक दिया।

21 वर्ष की उम्र तक पहुँचते-पहुँचते यू.जी. हर बात के बारे में प्रश्न करने लगे। उन्होंने मद्रास विश्वविद्यालय में मनोविज्ञान और पश्चिमी दर्शन का अध्ययन किया। इसी समय उनके एक मित्र ने उन्हें भगवान श्री रमण महर्षि के आश्रम में जाने के लिए कहा, जो उस समय दक्षिण मद्रास के तिरुवन्नमलाई में था। सन् 1939 में बड़े अनमने भाव से यू.जी. वहाँ गए। उस समय उनकी यह धारणा बनी हुई थी कि ये सारे धार्मिक पुरुष ढोंगी हैं। लेकिन भगवान रमण महर्षि को देखकर उन पर अलग ही प्रभाव पड़ा। यू.जी. ने उनसे तीन प्रश्न किए—"क्या ब्रह्मानंद जैसी कोई चीज है?" यू.जी. ने पूछा।

"हाँ, है।" रमण महर्षि ने उत्तर दिया।

"क्या इसका कोई स्तर होता है?"

महर्षि ने कहा—"नहीं, स्तर कतई संभव नहीं है। यह एक ही चीज है। या तो तुम वहाँ हो, या फिर नहीं हो।"

अब यू.जी. ने तीसरा और अंतिम प्रश्न किया—"क्या ब्रह्मानंद को तुम मुझे दे सकते हो?"

रमण महर्षि ने इस गंभीर युवा व्यक्ति की आँखों में झाँकते हुए उत्तर दिया—"हाँ, मैं तुम्हें दे सकता हूँ। लेकिन क्या तुम इसे ले सकते हो?"

उसी क्षण से यू.जी. के मन में लगातार यह प्रश्न चक्कर काटने लगा कि वह ऐसी कौन-सी चीज है, जिसे मैं धारण नहीं कर सकता। उन्होंने उसी समय संकल्प लिया कि रमण महर्षि ने मुझसे जो भी धारण करने के लिए कहा है, उसे मैं धारण करने के योग्य बन कर रहूँगा। इसके बाद वे रमण महर्षि के पास कभी नहीं गए।

25 वर्ष की आयु तक पहुँचते-पहुँचते उनमें काम वासना उद्दिप्त हुई। उन्होंने निश्चय किया कि इसका दमन करने से कोई फायदा नहीं हैं। परिणामस्वरूप

एक ब्राह्मण लड़की से उनका विवाह हो गया। यू.जी. बताते हैं कि ''सुहाग रात की सुबह जैसे ही मैं उठा, मुझे लगा कि मैंने अपनी जिंदगी की सबसे बडी गलती की है।''

17 वर्षों तक उन्होंने दांपत्य जीवन जीया और चार बच्चों के पिता बने। हालाँकि वे शुरू से ही विवाह नहीं करना चाहते थे, लेकिन फिर भी बच्चों के कारण यह 17 वर्षों तक निभ गया। उनका सबसे बड़ा लड़का वसंत पोलियो से ग्रस्त था। इसलिए उन्होंने सपरिवार अमेरिका जाकर उसका इलाज कराने का निश्चय किया। उनके मन में यह भी बात थी कि वे अपनी पत्नी के लिए वहाँ कोई नौकरी ढूँढ़ लेंगे, ताकि वह आत्मनिर्भर बन जाए। उन्होंने अपनी पत्नी को विश्वकोश के कार्य में लगा दिया और वे स्वयं सार्वजनिक स्थानों पर भाषण देने लगे।

कुछ समय बाद उन्होंने दांपत्य-जीवन से मुँह मोड़ लिया और 40 वर्ष तक पहुँचते-पहुँचते वे बिलकुल अकेले हो गए और यहीं से शुरुआत हो गई भटकने की। वे न्यूयार्क गए, लंदन गए। ठंड में ठिठुरते रहे। पैसे के लिए लोगों को भारतीय पाक-कला सिखाते रहे। वे पेरिस गए। वहाँ भी भटकते रहे। परेशान होकर अंत में उन्होंने भारत लौटने का निर्णय लिया। लेकिन प्रश्न था कि लौटने के लिए पैसा कहाँ से आए।

एक दिन अचानक वे जिनेवा में भारतीय काउंसिलेट के कार्यालय में घुस गए और लगे अपनी दुखद कहानी सुनाने। वे जितना कहते जाते, लोग उनकी बातों के प्रति उतने ही अधिक आकर्षित होते जाते। उसी कार्यालय में एक महिला थी—वैलेंतीने, जो दुभाषिए का कार्य कर रही थी। साठ वर्ष की इस महिला के पास जीवन के गहन अनुभव थे। यह महिला इस करिश्माई अजनबी से काफी प्रभावित हुई और उसे अपने घर ले गई। अब दोनों ही इस महिला के घर में रहने लगे।

सन् 1963 से 67 तक का समय यू.जी. के लिए अत्यंत शांति का समय रहा। वे दोनों इटली, दक्षिण फ्रांस, पेरिस और स्विटजरलैंड में घूमते रहे। बाद में ठंड के दिनों में वे भारत भी आने लगे। उस समय यू.जी. का काम था—सोना, पढ़ना, खाना तथा वेलेंतीने के साथ या फिर अकेले टहलने चले जाना। ऐसे वातावरण में रहते हुए अंत में यू.जी. अपने जीवन के 49वें वर्ष में पहुँचे—एक ऐसे वर्ष में, जो यू.जी. के लिए एकदम क्रांतिकारी वर्ष सिद्ध हुआ।

45 वर्ष की उम्र में ही यू.जी. को बहुत तेज सिर दर्द होने लगा था। व
नझ नहीं पा रहे थे कि ऐसा क्यों हो रहा है। इस समय उनमें एक शारीरिक
रवर्तन यह भी हुआ कि वे पहले से भी अधिक युवा दिखने लगे। 49 वर्ष की
वस्था में तो वे ऐसे दिखने लगे, मानो 17 या 18 साल के ही हों। सिर दर्द के
रान ही उन्हें कभी-कभी ऐसा अनुभव होता था, मानो धड़ पर से उनका सिर
गायब हो गया है। इसी समय यू.जी. के अंदर एक रहस्यमयी शक्ति भी पैदा
गई थी। यदि कोई भी व्यक्ति उनके सामने आता, तो वे उस व्यक्ति के संपूर्ण
तीत और भविष्य को इस प्रकार बाँच सकते थे, मानो वे उसकी जीवनी पढ़ रहे
। एक ही नजर में देखने पर वे उसका भाग्य बता सकते थे। हालाँकि इस
द्भुत शक्ति की शुरुआत तभी हो गई थी, जब वे 35 वर्ष के थे। किंतु उन्होंने
नके बारे में कभी किसी को कुछ नहीं बताया और इस शक्ति को अपने आप
ड़ने दिया।

9 जुलाई, 1967 की सुबह यू.जी. अपने एक मित्र के साथ जे. कृष्णमूर्ति
ा भाषण सुनने गए। वे यह भाषण स्वयं सुनने गए थे, ताकि जे. कृष्णमूर्ति के
रे में अपनी कुछ पुरानी स्मृतियों को जीवंत कर सकें, क्योंकि उन्हें एक
काशक के लिए अपनी जीवनी लिखनी थी। भाषण सुनते समय ही उन्होंने
चानक अपने आप से यह प्रश्न किया—"यहाँ मैं किसी को सुनकर आखिर
या कर रहा हूँ?" उसी समय उनकी चेतना में एक ऐसा विस्फोट-सा हुआ,
नो वे पूरी तरह स्वतंत्र हो गए हों। वे तुरंत ही उस स्थान से उठकर चले आए
ौर सानेन घाटी की तलहटी पर बहने वाली एक सुंदर नदी के किनारे की
ोटी-सी बेंच पर बैठकर हरी घाटी को निहारने लगे।

इसी समय यू.जी. को यह लगा कि मैं अभी तक यह जानने का प्रयास कर
हा था कि "क्या ब्रह्मानंद का अस्तित्व है? लेकिन दुर्भाग्यवश मैंने अपने इस
श्न के बारे में ही कभी कोई प्रश्न नहीं किया। क्योंकि मैंने यह सोच लिया था
क इस ब्रह्मानंद का अस्तित्व है। इसी सोच ने मेरे अस्तित्व की स्वाभाविक
थिति को जकड़ रखा था। सच तो यह था कि आध्यात्मिक या मनोवैज्ञानिक
ब्रह्मानंद जैसी कोई चीज होती ही नहीं। मैं अपने आपको अभी तक इस खोज
ें लगाकर मूर्ख बनाता रहा हूँ। आवश्यकता तो इस बात की है कि मेरी इस
खोज का ही अंत हो जाना चाहिए।"

यू.जी. को जैसे ही इस बात का अनुभव हुआ, वैसे ही उनके सारे प्रश्नों का अंत हो गया। उनके मस्तिष्क ने पृथकता के आधार पर काम करना बंद कर दिया। उनका शरीर शव के समान निर्जीव हो गया। उससे ऊर्जा की अनंत धाराएँ निकलीं और शरीर मृत हो गया।

लगभग एक घंटे बाद उनमें फिर से जीवन आया। और इस नए जीवन के बाद जो यू.जी. उठकर खड़े हुए, वे पहले से बिलकुल भिन्न यू.जी. थे। यह एक ऐसे यू.जी. थे, जिसके अंदर से धर्म, संस्कार, परंपरा, संस्कृति और इतिहास की सारी विरासतें समाप्त हो चुकी थीं। यहाँ एक ऐसा यू.जी. था, जिसके मस्तिष्क में कभी प्रश्न ही नहीं उठता। उनकी सारी खोजें समाप्त हो चुकी थीं और सारे प्रश्न जलकर नष्ट हो चुके थे। किसी भी प्रकार के मानसिक विलगाव का वहाँ कोई अस्तित्व ही नहीं रह गया था।

(4)

इस पुस्तक इसी यू.जी. के साथ की गई बातचीत के अंश हैं, जो किसी भी बात को बिलकुल उसी तरह कहता है, जिस तरह कही जानी चाहिए। अपने अतीत से पूरी तरह मुक्त यह यू.जी. विचारों की दृष्टि से एक ऐसे क्रांतिकारी विचार प्रस्तुत करता है, जो सुनने वाले के मन में अशांति पैदा करते हैं।

निश्चित रूप से यह पुस्तक उन लोगों के लिए नहीं है, जो इसे पढ़कर शांति, सत्य या ब्रह्म की प्राप्ति करना चाहते हैं। ऐसे लोगों को इससे निराशा ही हाथ लगेगी। लेकिन यह उनके लिए अवश्य है, जो अपने दिमाग की चालबाजियों को समझना चाहते हैं और स्वयं को उसके जाल में फँसने से बचाना चाहते हैं। यू.जी. के साथ किया गया यह वार्त्तालाप एक ऐसी यथार्थवादी और मौलिक दृष्टि प्रदान करता है, जिसकी ओर कभी भी हमारा ध्यान सपने में भी नहीं जाता। यू.जी. की बातें और उनके विचार हमें सहलाते नहीं, बल्कि थप्पड़ मारते हैं, घूँसा मारते हैं। सहलाने और थपथपाने में उनका तनिक भी विश्वास नहीं है। जो व्यक्ति अपने-आपके प्रति निर्भर हो सकता है, वही यू.जी. के इन विचारों से लाभ उठाकर अपने जीवन को एक नई दिशा प्रदान कर सकता है, हालाँकि यू.जी. का कहना यही है कि—''मेरे पास मानव जाति को देने के लिए कुछ भी नहीं है।''

सचमुच यह जानना बहुत दुखद लगता है कि हम अपने उस दिमाग को ही अपना दुश्मन मान रहे हैं, जिसे हम अब तक अपना सबसे बड़ा मित्र समझते थे। लेकिन सच्चाई क्या है, इसे इस पुस्तक को पढ़ने के बाद ही जाना जा सकेगा।

डॉ. विजय अग्रवाल

ई-3/168, अरेरा कालोनी
भोपाल-462016
फोन : (0755) 728557, 561254

यू.जी. और हम

यू जी.

मैं कभी भी मठाधीश बनकर बात नहीं कर सकता। यह बहुत बनावटी है। मठाधीश की तरह गद्दी पर बैठना और चीजों के बारे में काल्पनिक या अदृश्य ढंग से बात करना अपना समय नष्ट करना है। एक क्रोधी व्यक्ति कभी भी न तो बैठता है और न ही बात करके अपने क्रोध को सुख में बदलता है। इसलिए तुम मुझसे यह मत कहो कि तुम संकट में हो, तुम क्रोध में हो। क्रोध की बात क्यो करे? तुम एक आशा में जीते हो और मरते हो। तुम आशाओं के बोझ से दबे हुए हो और यदि तुम्हें यह जीवन निराशापूर्ण लगता है, तो तुम अगले जीवन की खोज करो। जीवन स्वयं नहीं आएगा।

● **यह सच है कि निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि आपकी बातें किसी को भी आशा देंगी। यदि आप किसी को दिलासा नहीं दे सकते या उसे रास्ता नहीं दिखा सकते, तो फिर आप बोलते ही क्यों हैं?**

□ मैं यहाँ बोल रहा हूँ। तुम आते हो, तो मैं बात करता हूँ। क्या तुम चाहते हो कि मैं तुम्हारी आलोचना करूँ, तुम पर पत्थर फेंकूँ? यह सब बेकार है। यह सब तुम्हारे लिए दुर्भाग्यजनक होगा। चूँकि तुमने अपने चारों ओर एक अभेद्य दुर्ग रच रखा है, इसलिए तुम कुछ भी महसूस नहीं करते। तुम अपनी स्थिति को समझ पाने में असमर्थ हो। तुम अपने चिंतन के आधार पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हो, जो तुम्हारी अपनी ही सोच और मनोभाव हैं। प्रतिक्रिया ही विचार है। जो दर्द तुम्हें वहाँ हो रहा है, वह बिना अनुभव के हो रहा है। यहाँ तो कोई अनुभव है ही नहीं। बस यही सब कुछ है। इस स्वाभाविक स्थति में तुम दूसरों का दर्द महसूस करते हो, भले ही तुम उन्हें व्यक्तिगत रूप से जानते हो या नहीं। हाल ही में मेरा बड़ा लड़का नजदीक के ही एक अस्पताल में कैंसर से मर

रहा था। मैं पास में ही रहता था और अक्सर उसके पास जाता रहता था। मित्रों का कहना था कि जब तक उसकी मृत्यु नहीं हो गई, तब तक मैं पूरे समय गहरे दर्द में रहा। मैं कुछ नहीं कर सका। यह (दर्द) जीवन की एक अभिव्यक्ति है। वे लोग चाहते थे कि मैं उसके कैंसर को समाप्त करने के लिए किसी तरह का कुछ करूँ। यदि मैं उसे छू दूँ, तो वह बच जाएगा। उसे जीवन देने से मेरी प्रसिद्धि बढ़ जाएगी। कैंसर ऊतकों की उत्तरोत्तर बढ़ोतरी है। यह एक प्रकार से जीवन की अलग तरह की अभिव्यक्ति है। इसलिए यदि मैं कुछ भी करता, तो वह जीवन को बढ़ाने वाला ही होता।

● **तो इस प्रकार आप दूसरे के दर्द की प्रशंसा कर सकते हैं और स्वयं उससे अभी तक मुक्त हैं। क्या यह नहीं है?**

☐ दर्द को झेलना एक अनुभव है और मेरे अंदर कोई अनुभव नहीं है। ऐसा नहीं है कि तुम अलग हो और जीवन अलग है। ये दोनों बिलकुल एक ही हैं। और यदि मैं इसे इसके सिवाय कुछ और बताता हूँ, तो वह भ्रम पैदा करने वाला होगा। तुम 'निज' नहीं हो, एक वस्तु नहीं हो। न ही अन्य वस्तुओं से घिरा हुआ पृथक अस्तित्व हो। क्षणों का एकत्व ऐसी वस्तु नहीं है, जिसका तुम अनुभव कर सको।

● **लेकिन बिना अनुभव के जीवन जीने की बात हम लोगों को अतार्किक मालूम पड़ती है।**

☐ जो कुछ मैं कह रहा हूँ, वह आपके इसी तार्किक ताने-बाने का विरोधी है। तुम इस तर्क का उपयोग इस ढाँचे के खंडित स्वरूप को बनाए रखने के लिए करते हो। बस इतना ही है। चूँकि तुम्हारे प्रश्न विचार हैं, इसीलिए प्रतिक्रियात्मक हैं। सभी विचार प्रतिक्रियात्मक होते हैं। तुम निराश होकर अपने विचारों के उस कवच को बनाए रखना चाहते हो और इस बात से डरते हो कि कहीं जीवन का कोई क्षण इसे नष्ट न कर दे। जीवन एक उफनती हुई नदी के समान है, जो अपने किनारों को छूती है, तटों को तोड़ती है। तुम्हारी वैचारिक संरचना और तुम्हारी सच्ची मनोवैज्ञानिक बुनावट सीमित है। लेकिन जीवन सीमित नहीं है। यही कारण है कि जीवन का स्वतंत्र रहना इस शरीर के लिए दुखदायी होता है। जीवन की ऊर्जा का जो अनंत स्रोत फूटता है, वह इस शरीर के लिए कष्टकारी होता है। तुम कल्पना भी नहीं कर सकते कि यह तुम्हारे स्वप्न में किस तरह आता है।

इसलिए यह तुम्हारे लिए भ्रम पैदा करने वाला होगा। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि मैं अपनी इस बात को किस तरह कहता हूँ।

● **हमारे गुरु और पादरी भी यही सिखाते हैं कि कोई खंडित संरचना नहीं है और यही हमारी समस्याओं का मुख्य स्रोत है। आप इनसे भिन्न कैसे हैं ?**

☐ तुम्हारे लिए और उनके लिए भी यह मात्र एक शब्द है। जीवन के एकात्मक क्षण के प्रति तुम्हारा विश्वास केवल आधारहीन विश्वास है, जिसमे निश्चितता (सर्टेनिटी) की कमी है। हमने बड़ी चालाकी के साथ उन बातों को तार्किक ढंग से स्वीकार कर लिया है, जो गुरुओं और धर्मग्रंथों ने हमें सिखाई हैं। तुम्हारा विश्वास इन लोगों के अंधानुकरण का परिणाम है, एक तरह के कचरे जैसा। तुम अपने विश्वास से अलग नहीं हो। जैसे ही तुम अपने इन अमूल्य विश्वासों और भ्रमों से छुटकारा पाओगे, वैसे ही तुम्हारे जीवन का अंत हो जाएगा। तुमसे मेरा बात करना तुम्हारे उस दर्द का उत्तर देने से अधिक कुछ नही है, जिसकी अभिव्यक्ति तुम अपने प्रश्नों, तर्कों तथा अन्य तरीकों से कर रहे हो।

● **लेकिन यह तो निश्चित है कि आपके साथ यहाँ बैठने और घंटों बातें करने से ऐसा लगता है कि आपके पास एक दर्शन है, दूसरों के लिए संदेश है, भले ही श्रोता उसे ठीक से समझ न सके।**

☐ ऐसा बिलकुल नहीं है। यहाँ ऐसा कोई नहीं है, जो बातें कर रहा हो, सलाह दे रहा हो, दर्द का या किसी भी चीज का अनुभव कर रहा हो। जिस प्रकार यदि एक गेंद दीवार पर फेंकी जाए, तो वापस लौट आती है, ठीक उसी तरह यह भी है। मेरा बात करना तुम्हारे प्रश्न का प्रत्यक्ष प्रमाण है। यहाँ मेरा अपना कुछ नहीं है। यहाँ न तो कुछ स्पष्ट है और न ही कुछ छिपाया जा रहा है। न तो कुछ नई चीज बताई जा रही है और न ही बेची जा रही है और न ही कुछ सिद्ध किया जा रहा है।

● **लेकिन शरीर नश्वर है और हम सभी एक तरह की अमरता चाहते हैं। स्वाभाविक है कि इसके कारण हम एक महान दर्शन, धर्म या आध्यात्मिकता की ओर उन्मुख होते हैं। यह निश्चित है कि यदि हम.....**

☐ यह शरीर ही है, जो अमर है। यह मृत्यु के बाद केवल अपना रूप बदलता है और एक नए रूप में इस जीवन के प्रवाह में उपस्थित रहता है। यह

शरीर 'जीवन के पश्चात्' या किसी भी तरह अमरत्व से संबंधित नहीं है। यह अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करता है और विकसित होता है। सच तो यह है कि 'मृत्यूपरांत' की तुच्छ कल्पना इस दिमाग ने भय के कारण गढ़ी है। और यह कमोबेश एक तरह से परिवर्तित रूप की ही माँग है। एक ही चीज की बार-बार माँग करना ही स्थायित्व की माँग करना है। यह स्थायित्व शरीर के लिए अनजाना है। चिंतन के द्वारा स्थायित्व की माँग के कारण शरीर बाधित होता है और उसकी कल्पना-शक्ति नष्ट होती है। चिंतन अपने आपको केवल अपनी ही निरन्तरता के संरक्षक के रूप में नहीं देखता, बल्कि शरीर की निरंतरता के रूप में भी देखता है। दोनों ही पूरी तरह से गलत हैं।

● **इससे तो ऐसा लगता है कि एक तरह का क्रांतिकारी परिवर्तन होना चाहिए। लेकिन बिना इच्छा के, हस्तक्षेप के........**

□ यदि यह अपने आपको नष्ट किए बिना घटता है, तो यह यहीं समाप्त हो जाएगा। तुम्हारे पास ऐसा कोई रास्ता नहीं बच सकेगा कि तुम इसे रोक सको और स्थिति को बदल सको। तुम इसके साथ चलने के अतिरिक्त कुछ नहीं कर सकोगे।

ये वे हैं, जिनसे तुम्हें मुक्त होना चाहिए। जिस तरह के बेकार प्रश्न तुम पूछ रहे हो, वे तुम्हारे द्वारा उद्देश्य को छोड़ देने से स्वयं ही गायब हो जाएँगे। ये सब एक-दूसरे पर आश्रित हैं। इसमें से कोई भी एक-दूसरे के बिना नहीं रह सकता।

● **इस तरह की बात तो असहनीय-सी है। हम विस्मृत एवं पूर्ण विनाश से डरते हैं।**

□ अगर तुम तैरते हो तो तैरते हो, डूबोगे नहीं। इसमें मेरे द्वारा दी गई सहायता के वचन का क्या अर्थ है? अर्थहीन है। तुम वही करते रहोगे, जो कर रहे हो। मैं तुमसे कहता हूँ, जब तुम आशा या इच्छा के लिए काम करना बंद कर दोगे, तो फिर भी वहाँ यह उम्मीद शेष रहेगी कि "वहाँ जरूर कोई रास्ता होगा। शायद मैं उसे सही तरीके से नहीं कर पा रहा हूँ।" दूसरे शब्दों में हमें किसी भी वस्तु पर आश्रित रहने के बेतुकेपन को स्वीकार करना होगा। हमें अपनी असहायता का मुकाबला करना चाहिए।

● **हम अपने आपको यह सोचने से नहीं रोक सकते कि हमारी समस्याओं का कोई-न-कोई समाधान होगा ही।**

□ तुम्हारी यह समस्या बनी रहेगी क्योंकि इसके लिए तुमने झूठा समाधान ढूँढ रखा है यदि उत्तर नहीं होंगे तो प्रश्न भी नहीं होगे ये दोनों एक दूसरे पर निर्भर हैं तुम्हारी समस्या और उसका समाधन दोनों क्योंकि तुम अपनी समस्याओं के समाधान के लिए कुछ उत्तरों का उपयोग करना चाहते हो, इसलिए वे समस्याएँ बनी रहती हैं। इन हजारों पंडित-पुरोहितों, मनोवैज्ञानिकों और राजनेताओं द्वारा जो अनेक समाधान बताए जाते हैं, वे समाधान हैं ही नहीं, यह बिलकुल स्पष्ट है। यदि इसका कोई सही उत्तर होता, तो कोई समस्या ही नहीं रहती। यह तुम्हें केवल अधिक काम करने में लगा देंगे, अधिक ध्यान में लगा देंगे, अधिक विनम्र बना देंगे, योगासन में लगा देंगे और इसी तरह के ढेर सारे कामों में उलझा देगे। यही सब कुछ है, जो वे कर सकते हैं। शिक्षक, गुरु या नेता, जो भी इन समस्याओं का समाधन बताते हैं, वे सब व्यर्थ हैं। वे कोई भी ईमानदारी का काम नहीं कर रहे हैं, सिवाय बाजार में अपनी सस्ती और बेकार की चीजें बेचने के। यदि तुम अपनी आशाओं, भय और भोलेपन को किनारे कर दो और इन सबसे एक व्यापारी की तरह व्यवहार करो, तो तुम देखोगे कि ये कोई अच्छा सामान नहीं देते और न ही कभी देंगे। लेकिन तुम हो कि इन्हें विशेषज्ञ समझकर इनके पास से फालतू की चीजें खरीदते चले जाते हो।

● **लेकिन यह सब कुछ इतना अधिक जटिल है कि हम लोगों के लिए उन लोगों पर विश्वास करना जरूरी मालूम पड़ता है, जिन्होंने गंभीरतापूर्वक अध्ययन किया है तथा अपना जीवन आत्मज्ञान और प्रज्ञा के लिए समर्पित कर दिया है।**

□ उन सबके दर्शनों की तुलना शरीर की अपनी सहज प्रज्ञा से नहीं की जा सकती। जिनको वे मानसिक क्रिया, आध्यात्मिक क्रिया तथा भावनात्मक क्रिया और अनुभव कहते हैं, सच तो यह है कि वे सब एक ही क्रियाएँ हैं। यह शरीर बहुत अधिक बुद्धिमान है, जो अपने अस्तित्व और पुनर्जीवन के लिए इस तरह के वैज्ञानिक या सैद्धांतिक उपदेशों की जरूरत नहीं समझता। तुम जीवन, मृत्यु और स्वतंत्रता के बारे में अपनी सभी कल्पनाओं को अलग कर दो, तो भी यह शरीर सुसंगत तरीके से काम करता रहेगा। इसे न तो तुम्हारी स्वतंत्रता चाहिए और न ही मेरी। तुम्हें कुछ भी नहीं करना है। तब तुम फिर कभी अमरता, मृत्य के बाद या मृत्यु के बारे में मूर्खतापूर्ण प्रश्न नहीं पूछोगे। यह शरीर अपने आप में अमर है।

● **आपने तो आशा की सभी भावनाओं को निर्दयतापूर्वक खत्म कर दिया। यहाँ तक कि दुःख से बचने की हलकी-सी संभावना को भी मिटा दिया। ऐसा लगता है कि अपने आपको नष्ट करने के सिवाय अब कुछ बचा ही नहीं। तो फिर हम आत्महत्या ही क्यों न कर लें?**

□ यदि तुम आत्महत्या कर लो, तो इससे समस्या को सुलझाने में कोई भी सहायता नहीं मिलेगी। आत्महत्या के बाद तुरंत यह शरीर नष्ट होना शुरू हो जाता है और जीवन के दूसरे रूप में वापस लौटने लगता है। जब तुम मरते हो, तब तुम जीवन की निरंतरता में ही कुछ जोड़ते हो। तुम कुछ भी समाप्त नहीं करते। जीवन का न तो प्रारंभ है और न ही अंत। मरा हुआ शरीर कब्र में भूखी चींटियों का पेट भरता है और वह सड़कर मिट्टी के रसायनों को समृद्ध करता है, अर्थात् वह जीवन के अन्य रूपों का पोषण करता है। तुम अपने जीवन का अंत नहीं कर सकते। यह असंभव है। यह शरीर अमर है। इसलिए अब फिर से इस प्रकार के बेकार प्रश्न मत पूछो कि "क्या अमरता होती है?" शरीर जानता है कि वह अपने एक रूप का अंत केवल दूसरे रूप की शुरुआत करने के लिए करता है। मृत्यु के बाद जीवन संबंधी प्रश्न हमेशा भय के कारण पूछे जाते हैं।

जो गुरु तुमसे आध्यात्मिक जीवन की बात करते हैं, वे ईमानदार नहीं हो सकते। वे भविष्य की जीवन-संबंधी कल्पना तथा तुम्हारे डर को भुनाकर अपना पेट पालते हैं।

और तुम्हारे जैसे शिष्य मानवता के भविष्य में सचमुच कोई रुचि नहीं रखते। तुम्हारा मतलब केवल अपने क्षुद्र भविष्य से होता है। यह केवल एक कर्मकांड-सा बन गया है कि तुम लगातार कई घंटों तक मानवता, करुणा और इसी तरह की बातों पर बोलते चले जाते हो। यह तुम हो, जो इनमें रुचि रखते हो; अन्यथा अपने भविष्य के जीवन के बारे में और उसके अपरिहार्य मृत्यु के बारे में इस तरह का बचकाना प्रश्न नहीं करते।

● **लेकिन हम लोगों में से बहुतों के लिए जीवन एक पवित्र वस्तु है। हम अपने बच्चों और पर्यावरण की रक्षा करने के लिए संघर्ष करते हैं, साथ ही अगले युद्ध को रोकने......।**

□ क्या तुम सचमुच जानना चाहते हो? क्या तुम सचमुच मानवता के भविष्य में रुचि रखते हो। क्रोध, दया और करुणा जैसी तुम्हारी बातों का मेरे लिए

कोई मतलब नहीं है। ये सब आदतें हो गई हैं। तुम केवल बैठ जाते हो और बातें करते हो। यहाँ तक कि पूरी तरह क्रोधित भी नहीं होते। अगर तुम इस समय गुस्से में होते, तो तुम यह प्रश्न नहीं पूछते। यहाँ तक कि अपने से भी नहीं। तुम लगातार बैठे रहते हो और क्रोध के बारे में बातें करते रहते हो। क्रोधित व्यक्ति इसके बारे मे बात नहीं करता। शरीर ने तो अपना काम पहले से ही कर लिया है और इस क्रोध को अपने अंदर समा लिया है। उसके लिए क्रोध तुरंत ही समाप्त हो गया। तुम कुछ नहीं करते, बल्कि यह शरीर उसे अपने में समा लेता है। यही सब कुछ है। यदि यही तुम्हारे लिए बहुत अधिक है, यदि यह तुम्हें बहुत अधिक निराश करता है, तो भी तुम किसी पुजारी के पास मत जाओ। गोलियाँ खाओ, कुछ भी करो, लेकिन यह उम्मीद कभी मत करो कि यह धर्म का व्यापार तुम्हारी सहायता करेगा। यह स्वयं को नष्ट करना है।

● **तो आप चाहते हैं कि मैं सब चीजों को छोड़ दूँ और संन्यास....।**

□ जब तक तुम यह सोचते रहोगे कि तुम्हारे पास त्याग के लिए कुछ है, तब तक भटकते रहोगे। धन तथा जीवन की अन्य जरूरतों के बारे में न सोचना एक बीमारी है। अपनी जिंदगी की आधारभूत जरूरतों की अवहेलना करना अस्वाभाविक है। तुम सोचते हो कि अपने ऊपर जबरदस्ती संन्यास लादकर तुम अपना विवेक बढ़ा लोगे और इसके बाद उस विवेक का उपयोग प्रसन्न रहने के लिए कर सकोगे। इसकी कतई संभावना नहीं है। तुम्हें तभी शांति मिल सकेगी, जब तुम विवेक संबंधी अपने सभी विचारों को छोड़ और एक कम्प्यूटर की तरह काम करना शुरू कर दो। तुम्हें एक मशीन बनना होगा और उसी की तरह स्वचालित ढंग से अपना काम करना होगा। अपने काम के बारे में न तो पहले प्रश्न करो, न तो काम करते समय और न ही काम हो जाने के बाद।

● **तो क्या आप योग साधना, धार्मिक कर्मकांड और नैतिक मूल्यों को अस्वीकार करते हैं? निश्चित रूप से आदमी मशीन से कहीं कुछ अलग है।**

□ सभी नैतिक, आध्यात्मिक और चारित्रिक मूल्य झूठे हैं। व्यावहारिक रास्ता ढूँढ़ने वाले सभी मनोवैज्ञानिक अब अपने ज्ञान के अंतिम छोर पर पहुँच गए हैं और वे अपने उत्तर के लए धार्मिक गुरुओं के पास जा रहे हैं। वे भी भटक गए हैं। उत्तर उनके अंदर से ही मिलना है, न कि इन धार्मिक व्यापारियों की जड़ एवं

अर्थहीन परम्पराओं से।

● यह तो हम सबको अब असहाय बना रही है। इसीलिए लोग मसीहा, महात्मा और पैगंबरों पर भरोसा करने लगे हैं।

□ इन तथाकथित मसीहाओं ने दुनिया को दुःख के सिवाय कुछ नहीं दिया है। यदि अभी कोई आधुनिक मसीहा तुम्हारे सामने आ जाए तो वह भी तुम्हारी सहायता करने में असमर्थ होगा। यदि वह सहायता नहीं कर सकेगा, तो कोई भी नहीं कर सकेगा।

● यदि ये ज्ञानी पुरुष, संत और महात्मा सहायता नहीं कर सकते, तो फिर जैसा कि धार्मिक ग्रंथ कहते हैं 'सत्य को जानना चाहिए, क्योंकि सत्य ही हमें मुक्त करेगा', तो हमें यही करना चाहिए।

□ सत्य एक गीत है। तुम इसे पकड़ नहीं सकते, बाँध नहीं सकते, व्यक्त नहीं कर सकते और अपने लाभ के लिए इसका उपयोग नहीं कर सकते। जिस क्षण तुम इसे पकड़ लेते हो यह सत्य नहीं रह जाता। सत्य मेरे लिए एक ऐसी चीज है, जिसे किसी भी परिस्थिति में बताया नहीं जा सकता। इसकी निश्चितता दूसरे को बताई नहीं जा सकती। इसलिए सारा धार्मिक व्यापार पूरी तरह बेवकूफी ही है। यह अभी की ही बात नहीं है, बल्कि हमेशा से हो रहा है। अपने आपको नकारकर आप पुजारियों को अमीर करते हैं। आप अपनी आधारभूत जरूरतों को नकारते हैं, जबकि यह पुजारी रॉल्स रॉयल कार में घूमता है, राजाओं की तरह खाता है और जगद्गुरु की तरह पूजा जाता है। धर्म के इस व्यापार में वह तथा अन्य लोग दूसरों की मूर्खता और अंधविश्वास पर जीते हैं। इसी तरह राजनेता मनुष्य की नादानी पर जी रहा है। हर जगह इसी तरह से चल रहा है।

● आपका जोर हमेशा नकारात्मक पक्ष की ओर ही रहता है। क्या आप इस बात की ओर इशारा नहीं कर रहे हैं कि यदि हम अपना स्वाभाविक जीवन अधिकार पाना चाहते हैं, तो धर्मग्रंथों, गुरुओं तथा इसी तरह के अन्य बेकार के बोझ को अपने पर से हटा दें।

□ नहीं, क्योंकि गुरु, मंदिर और धर्मग्रंथों से अलग होकर स्वतंत्रता की चाह रखना तुम्हारे लिए हास्यास्पद है। तुम किसी भी उत्तर की खोज केवल इसलिए करते हो, ताकि तुम्हारी समस्या सुलझ जाए, तुम्हें दुःख न मिले। लेकिन यहाँ जीवन दुःख के सिवाय कुछ नहीं है। तुम्हारे जन्म लेने की प्रक्रिया ही

दुख:मय है। जन्म लेने वाली हर चीज दु:खपूर्ण होती है। यहाँ यह पूछने का कोई औचित्य नहीं कि ऐसा क्यों होता है। बस यही कि ऐसा होता है। तुम समझते हो कि इन गुरु और पुजारियों से अलग होने के बाद तुम्हारी अलौकिक शक्ति कम हो जाएगी। लेकिन दु:ख को सहने से तुम्हारी आध्यात्मिकता में मदद नहीं मिल सकती। इसका कोई रास्ता नहीं है।

● मैं जानता हूँ कि आप केवल भाग्यवादी और सनकी नहीं हैं। आप केवल आज की दयनीय स्थिति की ही चर्चा नहीं कर रहे हैं, बल्कि मनुष्य के एक अलग भाग्य की ओर इशारा कर रहे हैं। क्या ऐसा नहीं है ?

□ तुम्हारी इस समस्या का समाधान है—मृत्यु। तुम जिस सहायता की चाह रखते हो, वह केवल मृत्यु के समय ही प्राप्त हो सकती है। प्रत्येक को अंतत: मोक्ष मिलता है। मोक्ष से पहले हमेशा मृत्यु होती है और प्रत्येक व्यक्ति की मृत्यु होती है।

● लेकिन जैसा कि मैं समझ रहा हूँ, मृत्यु से आपका मतलब किसी काव्यात्मक और अलंकारात्मक अर्थ में नहीं है। आप जिस मृत्यु की चर्चा कर रहे हैं, वह मनोवैज्ञानिक, रोमेंटिक या वायवीय नहीं है, बल्कि वास्तविक और दैहिक मृत्यु है। ऐसा नहीं है क्या ?

□ हाँ, ऐसा ही है। जब व्यक्ति मरता है, तब शरीर जमीन पर लेटा रहता है। वह काम करना बंद कर देता है और यही जीवन का अंत है। लेकिन ऐसी स्थिति में शरीर अपने आपको पुनर्जीवित भी करता है। यह अब रोज की बात है। इस पूरी प्रक्रिया को स्थिर होने में सालों लगे हैं। मेरे लिए जीवन और मृत्यु दो अलग-अलग चीजें नहीं, बल्कि एक ही हैं। मैं तुम्हें सावधान करता हूँ कि तुम जिस मोक्ष की ओर इशारा कर रहे हो, यदि वह सचमुच हुआ, तो तुम मर जाओगे। तुम्हारा शरीर मर जाएगा, क्योंकि मोक्ष की स्थिति को पाने के लिए इस शरीर का मरना जरूरी है। यह उसी तरह है, जिस तरह तुम अपनी साँस को रोककर और छोड़कर एक तरह का आनंद पाते हो। लेकिन यदि तुमने साँस को लंबे समय तक रोका, तो तुम मर जाओगे।

● तो क्या आप यह कहना चाहते हैं कि हम अभी तक मृत्यु को, जो एक ध्यान, रहस्य और रोमांश के रूप में समझते थे, उसके बारे में हमें सजग रहना चाहिए ?

□ जिस स्थिति को तुम संपूर्ण सजगता की स्थिति कहते हो, वह मन बहलाने की बात है। सजगता! स्वयं को तथा दूसरों को मूर्ख बनाने के लिए कितना अच्छा गढ़ा गया शब्द है। तुम हर पग पर सजग नहीं रह सकते। यदि तुम ऐसा करते हो, तो बहुत अधिक सतर्क हो जाओगे तथा डगमगा कर चलने लगोगे। मैं ऐसे आदमी को जानता हूँ, जो एक बंदरगाह पर कप्तान था। वह 'तटस्थ सजगता' के बारे में पढ़ता था और उसे लागू करने की कोशिश करता था। जिस जहाज को वह चला रहा था, उसे वह नष्ट करते- करते बचा। चलना स्वाभाविक है। और यदि तुमने हर कदम पर सजग रहने की कोशिश की, तो तुम पागल हो जाओगे। इसलिए ध्यान जैसी कोई चीज मत ढूँढ़ो। तुम किसी ध्यान योग के उपाय की खोज मत करो। चीजें अपने आप में ही बहुत बुरी हैं। फिर ध्यान योग तो इनसे भी बुरा है।

● **लेकिन आप हर उस चीज को; जिसे हम पवित्र समझते हैं, इस तरह नकार नहीं सकते।**

□ मैं नकार सकता हूँ। यह सब केवल रोमेंटिक कूड़ा है। जो भी उपाय मैं सुझाऊँगा, वह तुम्हारी खोज का ही हिस्सा हो जाएगा और इस प्रकार वह पहले से भी अधिक रोमेंटिक कूड़ा बन जाएगा। इसलिए मैं यह कहते हुए कभी नहीं थकता कि मेरे पास तुम को बेचने के लिए नया या पुराना कुछ भी नहीं है कि तुम अपनी खोज को लगातार जारी रख सको। मैं इस खोज को ही पूरी तरह नकारता हूँ। तुम्हें यहाँ कुछ नहीं मिलेगा। तुम दूसरी जगह कोशिश करो।

● **लेकिन आप एक मनुष्य हैं और मनुष्यता की सेवा करना चाहते हैं, भले ही दया के कारण क्यों न सही।**

□ किसने मुझे उद्धारक चुना है? तुम्हारे पास अनेक संत, पैगंबर और मुक्तिदाता हैं, जो तुम्हारी सेवा करना चाहते हैं। तुम उनमें एक और जोड़ना चाहते हो? ईसा मसीह ने कहा था—"खटखटाओ और द्वार खुल जाएगा। तुम सभी आओ, और मुझे सुनो।" किन्हीं कारणों से मैं ऐसा नहीं कर सकता हूँ। आज के लिए बहुत हो गया। अच्छा होगा कि अब हम कल बात करें।

धन्यवाद।

● जैसा कि आपने कल कहा था, उससे तो यह साफ लगता है कि हमें आप जैसा बनने के लिए प्रकृतिस्थ (सेन) होना होगा। और वह मृत्यु है। जब हमने कल की बात खत्म की थी, तब आप कह रहे थे कि यदि किसी को मुक्ति की खोज करनी है, तो उसे सही में मरना पड़ेगा। इस तरह का कठोर कदम कोई रोमेंटिक और कोई पागल आदमी नहीं उठा सकता। ऐसा तो वही आदमी कर सकता है, जो अपने स्वार्थ से ऊपर उठा हुआ हो। क्या इसे सिखाया जा सकता है?

□ मैं सिखाने में विश्वास नहीं करता। तुम किसी को गणित पढ़ा सकते हो। मशीन की टैक्नीक पढ़ा सकते हो। लेकिन किसी के प्रति निष्ठा पढ़ाई नहीं जा सकती। भला तुम एक मूर्ख, लालची और स्वार्थी समाज में किसी को अलालची और परमार्थी होने की शिक्षा कैसे दे सकते हो? यदि तुम ऐसा करते हो, तो उन्हें और पागल ही बनाओगे। देखो, तुम चार सौ बीस हो। धर्म के प्रति तुम्हारी महत्त्वाकांक्षा एक व्यापारी की महत्त्वाकांक्षा है। यदि तुम सच में चार सौ बीसी नहीं कर सकते, तो जरूर कोई गड़बड़ी है। क्या तुम समझते हो कि एक आदमी कैसे धनी बन जाता है? क्या अलालच और परमार्थ के भाषणों द्वारा? नहीं, बिलकुल नहीं। यह सब कुछ उसने किसी को ठगकर पाया है। समाज की शुरुआत ही अनैतिकता से हुई है। वही समाज अब चार सौ बीसी को अनैतिक बताता है, तथा ईमानदारी को नैतिक कहता है। मैं इनमें कोई अंतर नहीं समझता। अगर तुम पकड़े गए, तो जेल में डाल दिए जाओगे। तब तुम्हें वहाँ रोटी, कपड़ा और सिर पर छत दी जाएगी। इसलिए चिंता क्यों करते हो? यह तो तुम्हारा अपराधबोध है, जो तुम्हें अलालच के बारे में बात करने के लए मजबूर करता है। जबकि तुम लगातार लालच भरी जिन्दगी जीते रहते हो। तुम्हारे दिमाग द्वारा अलालच की खोज किया जाना अपने आप में ही लालची होने का प्रमाण है। तुम्हारे उस अलालच की खोज दिमाग ने की है। जो है तुम उससे संतुष्ट नहीं

हो। लेकिन यदि इससे अधिक कुछ है ही नहीं, तो तुम कर ही क्या सकते हो? बस यही है। और तुम्हें इसी के साथ जीना होगा। तुम इससे बच नहीं सकते। दिमाग केवल अपने आपको बार-बार दोहरा ही सकता है। वह केवल यही कर सकता है। और किसी भी चीज को बार-बार दोहराना सनकीपन है।

● **लेकिन ध्यान-योग दूसरे साधारण विचारों की तुलना में कुछ गहरा तथा कम दोहराए जाने वाला लगता है। इसके बावजूद वह संतोषजनक नहीं है।**

□ यदि तुम्हारे ध्यान-योग, साधना के सिद्धांत और तकनीकी कुछ मायने रखते, तो तुम मुझसे यहाँ ये प्रश्न पूछते ही नहीं। ये सब तुम्हारे लिए परिवर्तन के साधन मात्र हैं। मैं फिर से कहता हूँ कि परिवर्तन या सुधार करने लायक कुछ नहीं है। परिवर्तन करने के लिए कुछ है, इसे तुम एक विश्वास के रूप में स्वीकार करते हो। तुम यह कभी नहीं पूछते कि किसका परिवर्तन किया जाना है। ज्ञानोदय (enlightenment) का सारा रहस्य स्वयं को परिवर्तित करने के विचार पर टिका हुआ है। मैं अपनी इस दृढ़ता को तुम्हें कैसे बताऊँ कि तुम और तुम्हारे शताब्दियों पुराने सभी उपदेशक झूठे हैं। वे और उनके द्वारा बेचे जाने वाले धार्मिक सामान बिलकुल झूठे हैं। यह मेरे लिए बनावटी और निरर्थक होगा, यदि मैं अपने इस दृढ़ विश्वास को किसी आसन पर बैठकर व्यक्त करूँ। मै अनौपचारिक तरीके से बातचीत करना पसंद करता हूँ।

● **फिर आप बात ही क्यों करते हैं?**

□ असामाजिक बनने में कोई विशेष आकर्षण नहीं है। मैं लोगों को वह नहीं देता, जो वे चाहते हैं। जब उन्हें यह पता लगता है कि वे अपनी मनचाही चीजें यहाँ से नहीं पा सकते, तो वे तुरंत चले जाते हैं। जब वे मुझसे आखिरी बार मिलकर जाते हैं, तब भी मैं उन्हें यही चेतावनी देता हूँ कि "तुम्हें यह कहीं नहीं मिलेगा।"

जब लोग मेरे पास बात करने के लिए आते हैं, तो उनका सामना एक चुप्पी से होता है। इसलिए जब भी यहाँ कोई आता है, तो वह आने के बाद खुद ही चुप हो जाता है। यदि वह इस शांति को बरदाश्त नहीं कर पाता और बातचीत करने पर जोर देता है, तो वह मुझसे असहमत होकर चला जाता है। यदि तुम देर तक रुकोगे, तो तुम खुद भी चुप हो जाओगे। ऐसा इसलिए नहीं, क्योंकि मेरी बातें

तुम्हारी बातों की अपेक्षा अधिक तार्किक और अधिक सम्मोहक हैं। बल्कि इसलिए, क्योंकि वहाँ की किसी भी हलचल को यहाँ पहले से ही व्याप्त चुप्पी शांत कर देती है।

वह चुप्पी यहाँ उपस्थित सारी चीजों को भस्म कर देती है। सारे अनुभव जलकर नष्ट हो जाते हैं। इसीलिए लोगों से बातचीत करने में मुझे कोई थकावट नहीं होती। यह मुझे ऊर्जा देती है। यही कारण है कि मैं पूरे दिन बिना थके बात कर सकता हूँ। पिछले अनेक वर्षों से हजारों लोगों से बातचीत करने का मुझ पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा है। मैं या वे जो कुछ भी कहते हैं, मुझ तक पहुँचकर नष्ट हो जाते हैं। उनका कोई चिह्न नहीं रहता। दुर्भाग्य है कि तुम्हारे साथ ऐसा नहीं होता।

● **इन सबके साथ मेधा (इंटेलीजेंस) का क्या तारतम्य है ? शायद आप यह कहना चाह रहे हैं कि एक सहज मेधा होती है, जिसका ज्ञान के संग्रह और तकनीकी से कोई मतलब नहीं होता।**

□ अपनी सीमाओं को जानना ही मेधा है। तुम अपनी इन स्वाभाविक सीमाओं से अपने आपको मुक्त करना चाहते हो और यही तुम्हारे दु:ख और दर्द का कारण है। तुम्हारे कार्य ऐसे हैं कि एक कार्य दूसरे कार्य को सीमित करता है। इस समय का तुम्हारा एक काम किसी दूसरे काम को सीमित कर रहा है। यह कार्य एक प्रतिक्रिया है। कार्य से मुक्त होने का प्रश्न ही पैदा नहीं होता। इसलिए किसी भी भाग्यवादी दर्शन की कोई जरूरत नहीं है। 'कर्म' शब्द का अर्थ है— बिना किसी प्रतिक्रिया के कार्य करना। तुम्हारा कोई भी काम अगले होने वाले काम को सीमित करता है।

तुम्हारे विचार के चेतन-स्तर पर जो भी क्रिया होती है, वह एक प्रतिक्रिया है। शुद्ध तथा सभी पूर्व क्रियाओं से स्वतंत्र स्वत:स्फूर्त क्रिया अर्थहीन है। इस जीवित शरीर की एकमात्र क्रिया यही है कि वह अपने चारों ओर के वातावरण के प्रति तत्क्षण संवेदनशील होता है। तत्क्षण-संवेदनशीलता की यह प्रक्रिया एकत्व घटना है। क्रिया और प्रतिक्रिया में तब तक कोई विभाजन नहीं है, जब तक कि विचार हस्तक्षेप करके उन्हें बनावटी रूप से अलग नहीं करता। अन्यथा यह एक स्वचालित और अखंड प्रक्रिया है और यहाँ ऐसा कुछ नहीं है कि तुम इसे रोक सको। इसे रोकने की जरूरत भी नहीं है।

सच्चाई यह है कि जिस प्रकार क्रिया और प्रतिक्रिया में कोई अंतर नहीं है, उसी प्रकार वस्तुओं के स्वाभाविक जगत में धार्मिक व्यक्ति के लिए कोई जगह नहीं है। जीवन की ताजी ऊर्जा उसकी शक्ति के स्रोत और प्रतिष्ठा को चुनौती देती है। इसके बावजूद वह धार्मिक व्यक्ति सेवामुक्त नहीं होना चाहता। उसे उठाकर बाहर फेंक दिया जाना चाहिए। धर्म, चाहे वह निजी हो या सार्वजनिक, कोई संधिगत व्यवस्था नहीं है। इसका सामाजिक संरचना या उसकी व्यवस्था से कुछ लेना-देना नहीं है। धार्मिक नेता और संस्थाएँ लोगों पर लगातार अपनी पकड़ बनाए रखना चाहती हैं। लेकिन धर्म पूरी तरह से एक निजी मामला है। ऋषियों और मुनियों को केवल इसी बात में सफलता मिली है कि उन्होंने तुम्हारे जीवन को दर्द और तकलीफों से भर दिया है। जीवन के प्रति तुममें भ्रम पैदा किया है और तुम्हारे अंदर यह अनुभव भर दिया है कि तुम्हारे इस जीवन के अतिरिक्त भी कोई एक अर्थपूर्ण और रुचिकर जीवन है। जीवन ही वह तत्त्व है, जो प्रमुख और महत्त्वपूर्ण है, न कि यह कि ''कैसे जीया जाए''। यह स्थिति हमने पैदा की है कि ''कैसे जीया जाए''। तुम्हारे विचारों ने ही ये समस्याएँ पैदा की हैं कि ''क्या खोया जाए, क्या पाया जाए और कैसा व्यवहार किया जाए।'' शरीर को इसकी कोई परवाह नहीं है। मैं सीधे तरीके से अपनी इस बातचीत की अर्थहीनता की ओर इशारा कर रहा हूँ। यदि तुम इसे थोड़ा भी समझ सको, तो तुम तुरंत चले जाओगे। मेरे पास लोगों को देने के लिए कुछ भी संदेश नहीं है।

हमने ऐसी शक्तियाँ पैदा कर ली हैं, जिन्हें अब बदला नहीं जा सकता। हमने आकाश, जल, यहाँ तक कि सारी चीजों को प्रदूषित कर दिया है। प्राकृतिक नियम केवल दंड देना जानते हैं, पुरस्कार देना नहीं। पुरस्कार केवल यही है कि तुम प्रकृति के साथ सामंजस्य बनाकर रह रहे हो। सभी समस्याएँ तभी पैदा होनी शुरू होती हैं, जब मनुष्य यह फैसला कर लेता है कि यह समस्त ब्रह्मांड केवल उसी के आमोद-प्रमोद के लिए बनाया गया है। हमने विकासवाद और प्रगति के अपने सिद्धांतों को प्रकृति पर जबरदस्ती लाद दिया है। हमारा मस्तिष्क कोई निजी मस्तिष्क नहीं है। उस 'मस्तिष्क' ने ही, जो मनुष्य के ज्ञान और अनुभव का संपूर्ण संग्रह है, मनोविज्ञान और विकास की ये धारणाएँ बनाई हैं। टैक्नोलोजी के विकास से मानवजाति अपने और विश्व के विनाश के कगार की ओर बढ़ती जा रही है। मनुष्य की चेतना ही पूरे उस विश्व को विनाश की

ओर ले जा रही है, जिसे प्रकृति ने इतना मेहनत से बनाया है। मनुष्य की सोच में कोई गुणात्मक परिवर्तन नहीं आया है। हम अपने पड़ोसी से ठीक उसी तरह से भयभीत हैं, जिस तरह का भय आदिम मनुष्य के मन में था। परिवर्तन केवल यही हुआ है कि हममें अपने पड़ोसी को और उसकी संपत्ति को नष्ट करने की क्षमता बढ़ गई है।

हिंसा विकास की प्रक्रिया का अविभाज्य अंग है। यह अहिंसा प्राणी जगत के जीवन के लिए जरूरी है। तुम हाइड्रोजन बम को बुरा नहीं बता सकते, क्योंकि यह पुलिसमैन का तथा सुरक्षित होने की इच्छा का विस्तार है। इनके बीच तुम विभाजन रेखा कहाँ खींचोगे? तुम ऐसा नहीं कर सकते। इन सारी चीजों को बदलने का तुम्हारे पास कोई रास्ता नहीं है।

● **मानवतावादी इस बात पर जोर देते हैं कि मनुष्य में प्यार करने की क्षमता, और विनाश से बचने के लिए यही एक तरीका हो सकता है। क्या इस तरह की कोई चीज है?**

□ वस्तुत: प्यार और घृणा दोनों बिलकुल एक ही हैं। दोनों का सम्मिलित परिणाम नरसंहार, हत्या और युद्ध होता है। यह इतिहास की बात है, मेरी नहीं। बौद्ध धर्म का परिणाम जापान में हुए विनाश में हुआ। यह एक-सी ही बात सब जगह है। हमारी सभी राजनीतिक पद्धतियाँ उसी धार्मिक विचार से पैदा हुई है, चाहे वह पूर्व हो या पश्चिम। जहाँ ऐसी सच्चाई हो, वहाँ भला तुम किसी भी धर्म पर विश्वास कैसे कर सकते हो? संपूर्ण अतीत, अर्थहीन अतीत की फिर से समीक्षा करने में भला क्या फायदा? ऐसा इसलिए, क्योंकि तुम्हारे जीने का तुम्हारे लिए इसके अतिरिक्त कोई और अर्थ नहीं है कि तुम अतीत की बात करो। तुम भटक भी नहीं रहे हो। तुम्हारे पास कोई दिशा ही नहीं है। तुम केवल बहते जा रहे हो। स्पष्ट रूप से तुम्हारे जीवन का कोई उद्देश्य ही नहीं है। अन्यथा तुम अपने अतीत में नहीं जीते।

जिसने तुम्हारी सहायता नहीं की है, वह किसी और की भी सहायता नहीं कर सकता। मैं क्या कह रहा हूँ, उसका कोई मतलब नहीं है। मैं जो कुछ भी कह रहा हूँ, उसके माध्यम तुम हो। जो मैं कह रहा हूँ, उसे तुम पहले ही पकड़ चुके हो और उस आधार पर कुछ प्राप्त करने के लिए एक नया वाद, सिद्धांत या तरीका बना रहे हो। मैं यह करने की कोशिश कर रहा हूँ कि तुम्हें अपनी आत्मा

के लिए ही कुछ खोज करनी चाहिए। लेकिन इस भ्रम में मत रहो कि तुम्हें जो कुछ मिलेगा, वह समाज के भी काम का होगा या उससे विश्व को बदला जा सकता है। तुम समाज के साथ ही मिट जाओगे। बस यही होगा।

● **प्रत्येक के द्वारा जो कुछ भी खोज की जाएगी, क्या वह ब्रह्म या ज्ञानोदय नहीं होगी?**

□ नहीं। ईश्वर अंतिम सुख, अबाधित आनंद है, इस तरह की किसी भी वस्तु का अस्तित्व नहीं है। तुम ऐसी चीज चाह रहे हो, जिसका अस्तित्व ही नहीं है और यही तुम्हारी समस्या की जड़ है। रूपांतरण, मोक्ष, मुक्ति और इसी तरह की अन्य बेकार की बातें एक ही वस्तु—'स्थायी आनंद' के भिन्न रूप हैं। शरीर इसे ग्रहण नहीं कर सकता। उदाहरण के लिए काम-सुख (सेक्स प्लेज़र) स्वभाव से ही अस्थायी है। शरीर इस सुख को अबाधित रूप में लंबे समय तक नहीं रख सकता। यदि वह ऐसा करता है, तो नष्ट हो जाएगा। इस शरीर पर स्थायी आनंद जैसी क्षुद्र इच्छाओं को लादना ही एक गंभीर स्नायुतांत्रिक (न्यूरोलोजिक) समस्या है।

● **लेकिन धर्म तो सुख की खोज के विरुद्ध सतर्क करता है। प्रार्थना, ध्यान तथा अन्य साधनाओं द्वारा व्यक्ति सुखातीत की ओर जाना चाहता है।**

□ वे तुम्हें अध्यात्म की नशीली दवाइयाँ (पैथेड्रिन, मार्फिन) बेचते हैं। तुम वे दवाइयाँ लेते हो और सो जाते हो। आज वैज्ञानिकों के पास विशुद्ध आनंददायक दवाइयाँ हैं, जिनका सेवन करना ज्यादा आसान है। तुम्हारे दिमाग में यह यह बात कभी नहीं आती कि तुम जिस अंतिम सुख की खोज में हो, जिसे तुम ज्ञानोदय और ब्रह्म कहते हो, वह सुख कमोवेश उसी तरह का है, जिसकी खोज तुमने अपने इन दुःखों से छुटकारा पाने के लिए की है। तुम्हारे दुःख और पागलपन का कारण एक ही समय में दो विरोधी वस्तुएँ पाने की इच्छा रखना ही है।

● **लेकिन किसी तरह आप तो इस तरह के सभी विरोधाभासों से मुक्त हैं। हालाँकि आप यह दावा करते हैं कि आप शाश्वत आनंद की स्थिति में नहीं हैं, फिर भी मूल रूप से आप खुश दिखाई देते हैं। यह आपके जीवन में किस प्रकार हुआ, जबकि दूसरों के साथ ऐसा नहीं है?**

□ यदि मैं अपने जीवन की कहानी बताने लगूँ, तो यह उसी तरह से

होगा जैसे मैं किसी दूसरे के जीवन की कहानी बता रहा हूँ जब मैं अपने जीवन के बारे में सोचता हूँ, तब मेरे अंदर कोई भी आसक्ति संवेदना और भावना नहीं होती। अगर तुम ऐसा सोचते हो, तो यह गलत है कि मैं अपने अतीत के बारे में कोई निजी तथा मूल्यवान विचार या अनुभूति रखता हूँ। पहली बार एक व्यक्ति ने धार्मिक पृष्ठभूमि से अपने आपको बिलकुल अलग किया (जिद्दु कृष्णमूर्ति का उल्लेख करते हुए) और अब उनकी भी सीख पुरानी तथा भ्रम पैदा करने वाली है। जिद्दु कृष्णमूर्ति ने अपनी व्याख्या के लिए मनोविज्ञान का सहारा लिया, जो पहले ही पुराना पड़ चुका है। तुम जे. कृष्णमूर्ति को नकार नहीं सकते। लेकिन उन्होंने दिमाग के जिस स्वरूप की रचना की है, वह पहले ही पुरानी और बेकार हो चुकी है। वस्तुतः समस्या मनोवैज्ञानिक नहीं, बल्कि शारीरिक है। यह शरीर पिछले हजारों सालों से मूल रूप में नहीं बदला है। इसका (शरीर का) नेताओं की ओर झुकाव होना, अकेलेपन से बचना, लड़ाई में संलग्न होना तथा समूह में शामिल होना जैसी सारी बातें इसके आनुवंशिक गुण हैं, इसके जैविकीय उत्तराधिकारी (इनहैरीटेंस) के अंग हैं।

● **ठीक है, इस शरीर के अच्छे और बुरे गुणों की बात छोड़ते हैं। लेकिन क्या ध्यान, योग तथा मानवता जैसी धार्मिक साधनाएँ मनुष्य को उसकी जैविकीय सीमाओं का अतिक्रमण करने में सहायक नहीं होतीं?**

□ ध्यानावस्था स्वयं में ही एक बुराई है। यही कारण है कि जब तुम ध्यान करने की कोशिश करते हो, तो ये सारे बुरे विचार उभरने लगते हैं। अन्यथा तुम्हारे पास ऐसा कोई साधन नहीं है कि तुम जान सको कि कौन-से विचार बुरे है और कौन-से विचार अच्छे। ध्यानावस्था एक युद्ध है। गुरु युद्ध की समाप्ति के बाद तुम्हें शांति प्रदान करने का वायदा करते हैं। लेकिन तुम केवल दर्द का ही अनुभव करते हो। मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि तुम्हारी संस्कृति ने तुम्हारे लिए ध्यानावस्था और मोक्ष का जो लक्ष्य निर्धारित किया है, वह अंत में तुम्हें दुःख के सिवाय कुछ नहीं देगा। हाँ, यह जरूर है कि तुम थोड़ी-सी क्षुद्र रहस्यमयी अनुभूति पा लोगे, जिसका कोई मूल्य न तो तुम्हारे लिए है और न ही किसी और के लिए।

● **भले ही आपकी इस तरह की किसी भी क्षुद्र अनुभूति में रुचि न हो, लेकिन हम तो मुक्ति चाहते हैं......।**

☐ इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि तुम्हें यह मुक्ति, या आनंद मिलता है या नहीं। यदि ऐसा हुआ भी, तो उसका लाभ पाने के लिए तुम वहाँ नहीं रहोगे। यह स्थिति तुम्हारा क्या संभावित हित कर सकती है ? यह स्थिति तुमसे वे सारी चीजें छीन लेगी, जो तुम्हारे पास हैं। इसीलिए इसे 'जीवन–मुक्ति' कहा जाता है, अर्थात् मुक्ति में जीना। जब तुम इसे जीते हो, तो शरीर मर चुका होता है। इस शरीर की मृत्यु के अनुभव के बाद भी इसे जीवित रखा गया है। यह न तो आनंद है और न ही दुःख। आनंद जैसी कोई वस्तु है ही नहीं। तुम इसकी इच्छा नहीं कर सकते। तुम सभी चीजें चाहते हो, जबकि 'जीवन–मुक्ति' की स्थिति में तुम्हें सारी चीजें खोनी पड़ती हैं। तुम सभी चीजें चाहते हो, जो संभव नहीं है। इस धर्म ने तुम्हें इतनी सारी चीजें देने का वायदा किया है—गुलाब और बगीचे, लेकिन अंत में तुम्हें केवल काँटे ही मिलते हैं।

● **लेकिन जे. कृष्णमूर्ति जैसे अनेक गुरु खोज की यात्रा की बात करते हैं कि जागरूकता और मुक्त चिंतन द्वारा कुछ पाया जा सकता है........।**

☐ यदि क्रांतिकारी परिवर्तन नहीं है, तो कोई रूपांतरण नहीं हो सकता। वह जोकर (जे. कृष्णमूर्ति) तुम्हें सर्कस के पंडाल में ले जाता है और वहाँ खोज की यात्रा के बारे में बताता है। यह झूठा भव्य विमान है। इस तरह की कोई यात्रा नही होती। इसकी खोज वैदिक सोमरस का पान करने से प्रभावित किसी शराबी दिमाग ने की है। जे. कृष्णमूर्ति उन लोगों से भी अधिक सिरफिरे हैं, जो उन्हें सुनने जाते हैं।

● **यदि आपका पुरानी धार्मिक शिक्षाओं में विश्वास नहीं है, तो क्या आप आधुनिक मनोविज्ञान पर गंभीरतापूर्वक विश्वास करते हैं ?**

☐ मनोविज्ञान की सभी शाखाओं ने हजारों साल से मनुष्य के चिंतन को गलत दिशा दी है। फ्रायड बीसवीं सदी का बहुत बड़ा धोखेबाज था। जे. कृष्णमूर्ति मस्तिष्क में क्रांति की बात करते हैं। लेकिन मस्तिष्क जैसी कोई चीज है ही नहीं। मस्तिष्क है ही कहाँ कि जिसमें जादू से परिवर्तन लाना है ? जे. कृष्णमूर्ति के अनुयायी इस स्थिति में पहुँचे हैं कि वे केवल अर्थहीन वाक्यों को ही दोहरा सकते हैं। वे सभी उथले और रीते लोग हैं। जे. कृष्णमूर्ति अपने आसपास जो भीड़ इकट्ठी कर लेता है, उतनी भीड़ तो कोई भी इकट्ठी कर सकता है।

लेकिन आप भी तो उसी तरह की बात कर रहे हैं......।

□ हाँ, मैं भी 80 प्रतिशत उन्हीं शब्दों और वाक्यों का प्रयोग कर रहा हूँ, उन्हीं वाक्यों का; जिनका उपयोग वे वर्षों से गुरु, संत और अपने जैसे महात्माओं की आलोचना करने के लिए करते आ रहे हैं। वह (जे. कृष्णमूर्ति) खुद अपने शब्दों का शिकार है। एक बात यह कि मैंने ऐसा कभी नहीं कहा कि वह चरित्रवान व्यक्ति नहीं है। उसका चरित्र महान है। लेकिन मैं व्यक्ति के चरित्र मे जरा भी रुचि नहीं रखता। यदि वह यह देखे कि विश्व का मसीहा बनकर अपनी झूठी भूमिका के द्वारा उसको कितना नुकसान पहुँचाया है और फिर सभी चीजों को खत्म कर दे, तो मैं वह पहला व्यक्ति होऊँगा, जो उसे सलाम करेगा। लेकिन वह यह सब कर पाने के लिए अब बूढ़ा और सनकी हो गया है। उनके अनुयायी यह देखकर आश्चर्यचकित हैं कि मैं उसे उसकी ही दवाई की खुराक दे रहा हूँ। इस बात की तुलना मत करो कि मैं क्या कह रहा हूँ, या दूसरे धर्म गुरुओं ने क्या कहा है। यदि मैं जो कुछ भी कह रहा हूँ, उसे तुम आध्यात्मिक या धार्मिक बात समझ रहे हो, तो तुम गलत कर रहे हो। इन सबको छोड़ना पड़ेगा।

लेकिन इसके बावजूद हम लोगों को ऐसा लगता है कि जे. कृष्णमूर्ति तथा इतिहास के कुछ अन्य लोगों के पास भी कहने के लिए कुछ है। जे. कृष्णमूर्ति कुछ इस तरह का कहते हुए मालूम पड़ते हैं, मानो वे दावा कर रहे हों कि वे मुक्त व्यक्ति हैं।

□ उनके पास कुछ है। मैं कहना चाहूँगा कि उन्होंने शक्कर की गोलियाँ तो देखी हैं, लेकिन उन्हें चखा नहीं है। वह, मैं या अन्य कोई व्यक्ति मुक्त है या नहीं, यह तुम्हारी समस्या नहीं है। यह पलायनवादी मस्तिष्क का दकियानूसी विचार है। यथार्थ समस्याओं को टालने का लालचपूर्ण तरीका है, जो हमारी पराधीनता है। तुम्हें एक बात निश्चित रूप से समझ लेनी चाहिए कि अपने आपको मुक्त कहने वाला व्यक्ति धोखेबाज है। इस बारे में तुम्हें तनिक भी भ्रम नहीं रहना चाहिए। तुम्हें उस मुक्तता से मुक्त होना है, जिसका विचार वह व्यक्ति (जे. कृष्णमूर्ति) तथा अन्य गुरु करते हैं। तुम्हें "प्रथम और अंतिम मुक्ति" (जे. कृष्णमूर्ति की पुस्तक) से तथा इनके बीच में आने वाली मुक्तियो से मुक्त होना होगा।

यदि करुणा, शांति और मुक्ति आदि सार्वभौम अधीनता से बचने

के लिए किए गए क्षुद्र प्रयास हैं, तो फिर इनके पीछे भागो ही क्यों ? यदि चिरकालिक परम ब्रह्म जैसी कोई वस्तु नहीं है, व्यक्ति जिसके शरणागत होते हैं, तो फिर हम जीवित ही क्यों रहना चाहते हैं। क्या केवल खाना-पीना और साँस लेना ही जीवन है ?

□ यही सब कुछ है। जाओ। देखो। मैं तुमसे यही कह रहा हूँ कि यदि तुम्हारे ऊपर कोई अर्थहीन रहस्यपूर्ण विचार थोपे गए हैं, तो उनके पीछे अपने आपको ढूँढ़ो। वे पवित्र हृदय, सार्वभौम मस्तिष्क, पवित्र आस्था जैसे सभी भाववाचक रहस्यात्मक शब्दों का प्रयोग लालची तथा सहज विश्वसनीय लोगों के लिए करते हैं। जीवन की व्याख्या भौतिक और शारीरिक दृष्टिकोण से की जानी है। इसे अरहस्यात्मक तथा अमनोवैज्ञानिक बनाना है। नाड़ी और चक्र आदि की बातें मत करो। ये नहीं, बल्कि ग्रंथियाँ (ग्लैंड्स) मनुष्य के शरीर को नियंत्रित करती हैं। वे ग्रंथियाँ ही हैं, जो इस शरीर को कार्य करने के निर्देश देता हैं। लेकिन तुमने अपने इस शरीर की क्रियाओं पर विचारों से हस्तक्षेप कर दिया है। स्वाभाविक स्थिति के समय विचार शरीर को नियंत्रित नहीं करते। विचार तभी हरकत में आते हैं, जब उसके सामने कोई चुनौती आती है और वह अपना काम पूरा करके उस समय पृष्ठभूमि में चला जाता है, जब उसकी कोई ज़रूरत नहीं होती।

● **अर्थात् हम क्या करते हैं, इसका कोई मतलब नहीं हुआ। क्या इसका अर्थ यही हुआ कि हम जो भी करते हैं, वह अस्वाभाविक तरीके से करते हैं ?**

□ इसीलिए तो मैं इन बातों की ओर इशारा कर रहा हूँ। आदर्श समाज और आदर्श मानव की बात भूल जाओ। केवल अपने कार्य करने के तरीके को देखो। यही एक महत्त्वपूर्ण बात है। इस शरीर को पूरी तरह पल्लवित-पुष्पित होने में जो बाधा है, वह है—तुम्हारी संस्कृति। इसने एक आदर्श व्यक्ति की कल्पना के रूप में मानव जाति के सामने एक गलत वस्तु रखी है। सभी विचार मानव जाति की छली-चेतना से पैदा हुए हैं। इससे हिंसा के अतिरिक्त कुछ भी नहीं मिला है। यही कारण है कि कोई भी दूसरा गुरु या महात्मा एक-दूसरे से सहमत नहीं होते। प्रत्येक अपने मूर्खतापूर्ण उपदेशों पर ज़ोर देता है।

● **तो वह कौन-सी चीज है, जो हम लोगों को आपको सुनने के**

लिए आकर्षित करती है? जो आप कहते हैं, उसे हम सुनना चाहते हैं।

□ तुम उसी कारण से मेरे पास आते हो, जिस कारण से दूसरों के पास जाते हो। तुम कुछ जानना चाहते हो। तुम्हारा विश्वास है कि यदि तुम मेरी कहानी जान सके, तो जैसा मेरे साथ हुआ है, तुम वैसा ही अपने साथ भी कर सकोगे। जीवन भर तुमने अपने दिमाग की सफाई कराई है और ऐसा दिमाग केवल अनुसरण करने की बात ही सोच सकता है। तुम केवल यही सोच सकते हो कि जो कुछ मेरे साथ घटा है, तुम उसको अपने साथ दोहराओ। यहाँ आने का तुम्हारा उद्देश्य यही है। यह किसी भी उपाय या हस्तांतरण से तुम्हारे साथ नहीं घट सकता। मैं जो कुछ भी कह रहा हूँ, वह ऐसा नया तरीका नहीं है, जिससे तुम धार्मिक लाभ ले सको। यह पूरी तरह अलग है। इसका सभी तरह के रोमेटिक, आध्यात्मिक और धार्मिक कर्मकांडों से किसी तरह का कोई संबंध नहीं है। मैं जो कुछ कह रहा हूँ, यदि तुम उन्हें धार्मिक रूप से ग्रहण कर रहे हो, तो तुम मेरी बात से पूरी तरह अलग हो रहे हो। 'धर्म', 'ईश्वर', 'आत्मा', 'परमानंद', 'मोक्ष' आदि ये सभी शब्द मात्र हैं, जिनका उपयोग तुम्हारे मनोविज्ञान की सत्ता को बनाए रखने के लिए किया गया है। यदि ये विचार नहीं रहेंगे, तब केवल इस शरीर के विभिन्न अंगों की सामंजस्यपूर्ण भौतिक गतिविधियाँ ही शेष रह जाएँगी। (अर्थात् शरीर अपने स्वाभाविक तरीके से काम करने लगेगा—अनु०)। मैं यहाँ यह बता चुका हूँ कि यह शरीर किस प्रकार काम करता है, क्योंकि तुम्हारे प्रश्न ने मेरे सामने एक चुनौती खड़ी कर दी थी। तुम्हारे प्रश्न ने ही वह स्थिति पैदा कर दी थी, जिसके कारण उत्तर जरूरी हो गया था। इसलिए यह खुद अपनी बात कह रहा है। लेकिन यह वह तरीका नहीं है, जिसके अनुसार यह काम करता है। यह अनजान स्थिति में काम करता है। मैं अपने आप से कभी नहीं पूछता कि मेरा शरीर किस प्रकार काम करता है। मैं अपने किसी भी कर्म के पहले, उसके दौरान या उसके पूरा होने के बाद कभी प्रश्न नही करता। क्या कभी कंप्यूटर यह पूछता है कि वह किस प्रकार काम करता है?

● **लेकिन कंप्यूटर के पास न तो अनुभव होता है, न मनोविज्ञान होता है और न ही उसकी कोई आध्यात्मिक चाह होती है। इसलिए आप भला उसकी तुलना........?**

☐ तुम मुझे धार्मिक ढाँचे में कभी भी फिट नहीं कर सकते। जो कुछ भी मै कह रहा हूँ, उसको यदि तुम धार्मिक आधार पर ग्रहण करने की कोशिश करोगे, तो तुम मेरी बात को समझ नहीं पाओगे। मैं उस तरह का एक पवित्र आदमी नहीं हूँ, जो यह कहता है कि "मैं सलीब पर टँगा हुआ हूँ, इसलिए आओ और मेरे साथ तुम भी टँग जाओ।" यह सब बेकार की चीजें हैं, पागलपन है।

● **जीवन और मृत्यु के बारे में जानने में ऐसा क्या पागलपन है... ?**

☐ जिस प्रकार यह पागल औरत कह रही है कि वह पागल नहीं है, उसी प्रकार तुम भी इस बात पर जोर दे रहे हो कि मृत्यु है और तुम्हारी मृत्यु होगी। तुम दोनों ही गलत हो। यथार्थ पर आधारित मस्तिष्क की दृष्टि से तुम दोनों एक जैसे ही गलत हो।

● **मुझे लग रहा है कि मैं आपको एक बुद्धिजीवी के रूप में समझना शुरू कर रहा हूँ।**

☐ क्या मुझसे यह कहना मजाक नहीं है कि तुम मेरी बातों को समझ रहे हो। तुम कह रहे हो कि तुम कम-से-कम मुझे बौद्धिक रूप से तो समझ रहे हो, मानो समझने का कोई और भी तरीका होता है। तुम्हारी बौद्धिक समझ; जिसमें तुमने ढेर सारा निवेश किया है, उसने अभी तक तुम्हारे लिए एक भी अच्छा काम नहीं किया है। तुम यह सब जानते हुए भी हमेशा इसे बौद्धिक रूप से समझकर बढ़ाने पर जोर देते रहते हो, जबकि इसने अभी तक तुम्हारी कोई भी मदद नहीं की है। यह आश्चर्यजनक है। यदि आशा एवं समझने की कोशिश को खत्म कर दिया जाए, तब जीवन अर्थपूर्ण हो उठता है। जीवन और तुम्हारे अस्तित्व में इसके बारे में अबाध क्षमताएं हैं। प्रेम, परमानंद, महापरमानंद और शांति जैसी तुम्हारी सारी भावनाएँ तुम्हारे अस्तित्व की इस स्वाभाविक ऊर्जा में केवल रुकावट ही पैदा करती हैं। मैं तुम्हें किस प्रकार समझाऊँ कि जो कुछ भी मैं बता रहा हूँ, उसका कहीं भी कोई भी संबंध धार्मिक बकवासों से नहीं है। तुम हजारों शवों को देखते हो। इसके बाद भी अपनी मृत्यु के बारे में कल्पना नहीं कर सकते। और तुम्हारे लिए अपनी ही मृत्यु का अनुभव प्राप्त करना असंभव है। यह सचमुच बहुत बड़ी चीज है। इन सब बकवासों को मेरे ऊपर लाद देने से कोई फायदा नहीं है। जो कुछ भी मेरी ओर उछाला जाता है, वह शीघ्र ही जल जाता है...... यही स्वाभाविक ऊर्जा इधर (यू.जी. के पास) है।

आध्यात्मिक लोग सबसे बेईमान लोग हैं। मैं उस बुनियाद पर जोर दे रहा हूँ, जिस पर आध्यात्मिकता की पूरी इमारत खड़ी की गई है। मैं इस बात पर जोर दे रहा हूँ कि आत्मा (स्प्रीट) जैसी कोई चीज नहीं होती। यदि आत्मा ही नहीं है, तो फिर अध्यात्म की सारी बातें बकवास हो जाती हैं। तुम तब तक अपने सत्त्व को नहीं पा सकोगे, जब तक उन सारी चीजों से मुक्त नहीं हो जाते, जो विचार आत्मा को घेरे हुए हैं। अपने आपको पाने के लिए आध्यात्मिक जीवन के उन सारे आधारों को नष्ट करना होगा, जो गलत हैं। इसका यह मतलब नहीं है कि तुम पियक्कड़ों की तरह उग्र या हिंसक हो जाओ, मंदिरों को जला दो, मूर्तियों को तोड़ दो, धार्मिक ग्रंथों को फाड़ दो। इसका यह मतलब बिलकुल नहीं है। तुम्हें अपने अंदर एक आग पैदा करनी होगी, जिसमें मनुष्यों द्वारा पैदा किए गए सभी विचार और अनुभव जलकर खत्म हो जाएं। दुनिया में जो इतनी अधिक हिंसा है, वह सब ईसा मसीह और बुद्ध जैसे लोगों की देन है।

● **लेकिन इतना तो निश्चित है कि सभ्य बनने के लिए हमें 'जंगल के नियमों' से ऊपर उठना होगा?**

□ जो ब्रह्म पर विश्वास करते हैं, जो शांति का उपदेश देते हैं, प्रेम की बातें करते हैं, उन्होंने ही यह मनुष्यों का जंगल बनाया है। मनुष्यों के इस जंगल की तुलना में प्रकृति का यह जंगल अधिक सरल और संवेदनशील है। प्रकृति में जानवर अपने ही लोगों को नहीं मारते। यह प्रकृति की सुंदरता है। इस दृष्टि से मनुष्य दूसरे जानवरों से भी बदतर है। यह तथाकथित सभ्य आदमी अपने आदर्शों और विश्वासों के लिए हत्या करता है, जबकि पशु केवल जीने के लिए ही दूसरों को मारते हैं।

● **मनुष्य के पास अपने उच्च आदर्श और विश्वास हैं, क्योंकि वह सत्य चाहता है। जबकि जानवरों के पास ये सब नहीं होते।**

□ सत्य जैसी कोई चीज होती ही नहीं। सही बात केवल यह है कि यह तुम्हारा तार्किक कथन मात्र (लाजिकली एसरटेड प्रेमिस) है, जिसे तुम सत्य कहते हो।

● **लेकिन फिर से मैं पूछना चाहूँगा कि सभी महान उपदेशकों ने साधना, परमार्थ तथा परित्याग के द्वारा सत्य की प्राप्ति के महत्त्व पर जोर दिया है।**

□ मैं केवल उसी चीज को त्यागने के पक्ष में हूँ, जिसके त्यागने से कोई फायदा हो....... और वह है विचार, जिन्हें त्यागा जाना चाहिए। परित्याग जैसी कोई बात होती ही नहीं। परित्याग के बारे में तुम्हारे गलत विचार हैं। ये तुम्हें सत्य और ब्रह्म आदि के प्रति विचित्र स्वप्नजीवी बनाते हैं।

● **क्या यह सोचकर खुशी नहीं होती कि हम पशु से भी गए गुजरे हैं?**

□ मनुष्य जानवरों से बदतर है। इसलिए उसके सामने नैतिक संकट पैदा हुआ है। जब मनुष्य ने पहली बार अपनी चेतना के विभाजन का अनुभव किया, जब उसने अपनी स्वचेतना का अनुभव किया, तब उसने अपने आपको पशुओं से बेहतर समझा, जो वह नहीं है। और उसके बाद उसने अपने विनाश के बीज बोए।

● **यदि मैं आपको सही समझ रहा हूँ, तो आप यह कह रहे हैं कि क्योंकि हमने अपने जीवन को आत्म तथा अनात्म में गलत विभाजन अपने अंदर और अपने सभी प्रबंधों में एक नैतिक समस्या पैदा कर दी है, इसलिए हमारी मूल कठिनाई हमारे विचार हैं......।**

□ तुम विचारों के अतिरिक्त अन्य किसी भी माध्यम से अनुभव प्राप्त नही कर सकते। तुम अपने विचारों की सहायता के अतिरिक्त अन्य किसी भी माध्यम से अपने शरीर का अनुभव नहीं कर सकते। यहाँ केवल इंद्रियां का बोध ही है। तुम्हारे विचारों ने शरीर को रूप दिया है और इसकी व्याख्या की है। अन्यथा इसके अनुभव करने का तुम्हारे पास दूसरा कोई तरीका नहीं है। शरीर विचारों के सिवाय और कुछ नहीं है। विचार केवल एक ही होता है। दूसरी सारी चीजें इसी एक विचार से जुड़ी हुई हैं। यह विचार है—'मैं'। तुम विचारों के आधार पर जो कुछ भी अनुभव करते हो, वह सब एक भ्रम है।

● **क्या ऐसा नहीं है कि भ्रम केवल तभी तक बना रहता है, जब तक कि हमारे अंदर जागरूकता का विकास नहीं होता?**

□ 'जागरूकता' शब्द भटकाने वाला शब्द है। जागरूकता कोई खंडित स्थिति नहीं है। 'जागरूकता' एवं कुछ अन्य बातें; ये दोनों दो स्थितियाँ नहीं है। यहाँ कोई भी दो वस्तुएँ नहीं हैं। ऐसा नहीं होता कि तुम किसी वस्तु के बारे में जागरूक हो। 'जागरूकता' मस्तिष्क के कार्य की सामान्य स्थिति है। जिस

जागरूकता की बात तुम आनंद प्राप्ति के लिए करते हो, किसी तरह के रूपांतरण के लिए करते हो या ईश्वर जाने किस चीज के लिए करते हो, मेरे लिए वह सब बकवास है। जागरूकता से कभी भी न तो तुम्हारे अपने अंदर, और न ही तुम्हारे आसपास की दुनिया में कोई परिवर्तन लाया जा सकता है।

चेतन और अवचेतन, जागरूकता और आत्मा जैसी सभी बेकार की बातें आधुनिक मनोविज्ञान की पैदाइशी हैं। यदि तुम जागरूकता को अपने मनोविज्ञान के विकास का माध्यम समझ रहे हो, तो यह बहुत नुकसानदेह है। सैकड़ों सालों से हम अपने आपको उस मनोवैज्ञानिक कूड़े-कचरे से आजाद नहीं कर पा रहे हैं, जिसे फ्रायड और उसके गिरोह ने रचा है। चेतना से तुम्हारा सही मतलब क्या है? तुम केवल विचारों के माध्यम से ही चेतन और जागरूक रहते हो। अन्य पशु; जैसे कुत्ता अपने मालिक को विचारों के जरिए आसानी से पहचान लेता है। वह पहचानने के लिए भाषा का उपयोग नहीं करता। मानव ने विचारों की संरचना में कुछ-कुछ जोड़कर उसे अधिक जटिल बना दिया है। विचार न तो तुम्हारे होते हैं और न ही मेरे, बल्कि यह हम सबकी साझा विरासत होती है। तुम्हारे मस्तिष्क और मेरे मस्तिष्क जैसी कोई चीज नहीं होती। केवल मस्तिष्क ही होता है, जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी मनुष्य द्वारा जानी गई तथा अनुभव की गई वस्तुओं का नाम है। हम सभी विचारों के घेरे में उसी तरह सोचते और काम करते हैं, जिस प्रकार कि वातावरण में एक साथ सांस लेते हैं। विचार इसीलिए है, ताकि हम इस दुनिया में संतुलित और बौद्धिक तरीके से काम कर सकें, संप्रेषित कर सकें।

● **फिर भी वस्तुतः हम ऐसा महसूस करते हैं कि हमारे अंदर एक विचारक है, जो हमारे विचारों के बारे में उसी तरह सोचता है, जिस प्रकार 'मशीन में जिन्न' अपना काम करता है। लेकिन हमारा सोचना स्वचालित स्मृतियों की प्रतिक्रिया नहीं है।**

☐ जानकारी ही सब कुछ है। 'मुझे', 'मन', 'मस्तिष्क', 'मैं' या 'तुम' इसे जो कुछ भी कहना चाहो, जानकारी की उस संपूर्ण विरासत के अतिरिक्त कुछ नहीं है, जो हमें पीढ़ियों से, विशेषकर शिक्षा के माध्यम से दी गई है। तुम अनुकरण करने के तरीके से बच्चे को रंगों में भेद करना सिखाते हो। ऐसा सभी संस्कृतियों के साथ है। अमेरिकी, अमेरिकी तरीके से सीखते हैं और भारतवासी

भारतीय तरीके से सीखते हैं। शरीर, हाथ और मुख की मुद्राएँ प्रथम भाषा होती हैं। बाद में उसमें सब जुड़ जाते हैं। हम अभी भी बोलने के दौरान मुद्राओं का प्रयोग करते हैं, क्योंकि हमें ऐसा लगता है कि केवल शब्द हमारे भाव और विचारों को पूरी तरह व्यक्त नहीं कर सकेंगे।

इसका यह मतलब नहीं है कि हम सचमुच विचारों के बारे में कुछ जान सकते हैं। हम नहीं जान सकते। विचारों के बारे में तब चेतते हो, जब तुम विचारों के बारे में सोचने लगते हो। अन्यथा तुम यह जानते भी नहीं कि तुम सोच रहे हो। हम विचारों का उपयोग तभी कर सकते हैं, जब हम कुछ समझना चाहते हैं, कुछ याद करना चाहते हैं या कुछ पाना चाहते हैं। अन्यथा हम यह जानते तक नहीं कि विचार हैं भी या नहीं। विचार विचारों की गतिशीलता से अलग नहीं हैं। विचार एक क्रिया है और बिना इसके तुम काम नहीं कर सकते। विशुद्ध, स्वतःस्फूर्त तथा विचार-शून्य कर्म जैसी कोई चीज नहीं होती। कुछ करना ही सोचना है।

तुम्हारे पास अपने आप शुरू होने वाला, अपने आप उसे जारी रखने वाली मशीन है, जिसे मैं 'आत्मा' कहता हूँ। इसका यह मतलब नहीं है कि सचमुच कोई है। मैं इसे इसके सिवाय कोई दूसरा अर्थ नहीं देना चाहता। जिस 'अहम' या 'आत्मा' की तुम बात कर रहे हो, वह कहाँ है। तुम्हारी अस्तित्वहीन आत्मा ने किसी से आध्यात्मिकता और परमानंद के बारे में सुना है। तुम समझते हो कि परमानंद का अनुभव करने के लिए तुम्हें अपने विचारों को नियंत्रित करना चाहिए। यह असंभव है। यदि तुम ऐसा करोगे, तो तुम अपने आपको जला डालोगे और मर जाओगे।

● **दार्शनिक अक्सर उस 'वर्तमान' की बात करते हुए सुने जाते हैं, जो अपने अतीत और भविष्य से स्वतंत्र हो। क्या चिरस्थायी वर्तमान जैसी कोई वस्तु है?**

□ अधिक-से-अधिक अनुभव की माँग तुम्हारे वर्तमान का निर्माण करती है, जो अतीत से पैदा होती है। यहाँ तुम्हारे सामने एक माइक्रोफोन है। तुम इसे देख रहे हो। क्या तुम्हारे लिए बिना 'माइक्रोफोन' शब्द के इसे देख पाना संभव है? भूतकाल के उपकरण से ही तुम माइक्रोफोन को देख और अनुभव कर सकते हो। यदि तुम यह समझ गए, तो फिर भविष्य का अस्तित्व रह ही नहीं

जाता। तुम जो कुछ भी उपलब्धि चाहते हो, वह भविष्य में चाहते हो। यदि किसी तरीके से भविष्य अस्तित्व में आ सकता है, तो वह है—केवल वर्तमान क्षण। लेकिन दुर्भाग्य यह है कि वर्तमान के क्षणों में भूतकाल सक्रिय रहता है। तुम्हारा भूतकाल तुम्हारे भविष्य को बना रहा है। भूतकाल में तुम खुश थे या नाखुश, मूर्ख थे या बुद्धिमान, भविष्य में तुम ठीक इसके विपरीत होंगे। इस प्रकार तुम्हारा भविष्य तुम्हारे भूतकाल से जरा भी भिन्न नहीं होगा।

जब भूतकाल सक्रिय नहीं रहता है, तब वर्तमान होता ही नहीं। जिसे तुम वर्तमान कह रहे हो, वह भूतकाल का ही दोहरीकरण है। 'यहाँ और अभी' की शुद्ध स्थिति में भूतकाल बिलकुल सक्रिय नहीं होता और इसलिए भविष्य भी नहीं होता। मैं नहीं जानता कि तुम मुझे समझ पा रहे हो या नहीं......। भूतकाल को अपने अस्तित्व की रक्षा तथा उसकी सत्ता को बनाए रखने के लिए केवल यही रास्ता है कि वह एक ही वस्तु का बार-बार अनुभव करने की सतत माँग करता रहे। यही कारण है कि यह जीवन नीरस हो गया है। जीवन इसलिए नीरस हो गया है, क्योंकि हमने इसको बार-बार दोहराए जाने वाली वस्तु बना दिया है। हम जिसे गलती से वर्तमन कहते हैं, वह सही मायनों में उस भूतकाल का बार-बार दोहराया जाना है, जो झूठे भविष्य को दिखाता है। तुम्हारे उद्देश्य, तुम्हारी खोज और तुम्हारी इच्छाएँ इसी साँचे में ढल गई हैं।

● **भूतकाल की क्षणिकता के कारण इसको समझना एक समस्या है। जैसा कि आप कहते हैं कि आत्मा और उससे उच्च श्रेणी के तत्त्व का अस्तित्व नहीं है, तो फिर मन या मस्तिष्क का स्थान कहीं और निश्चित करना होगा। यदि ऐसा है, तो फिर अतीत कहाँ है ?**

□ तुम अपने अतीत के ज्ञान के आधार पर ही प्रश्न पूछते हो। और प्रश्न पूछने का तुम्हारा उद्देश्य केवल दूसरे से कुछ अधिक जानकारी प्राप्त कर लेना भर है, ताकि तुम्हारी जानकारी की संरचना बनी रहे। सच तो यह है कि तुम्हारी इसमें कोई रुचि ही नहीं है। तुम्हारी जानकारी (नॉलेज) के समाप्त होने का अर्थ है—तुम्हारे स्वयं का समाप्त होना। तुम पूछ रहे हो कि अतीत कहाँ है। क्या यह तुम्हारे मस्तिष्क में है ? यह कहाँ है ? यह तुम्हारे पूरे शरीर में है। यह तुम्हारे शरीर के एक-एक कण में है।

तुम्हारे ये सारे प्रश्न तुम्हारी खोज से उत्पन्न हुए हैं। इससे कोई फर्क नहीं

पडता कि तुम्हारी इस खोज का तथ्य है—ईश्वर, एक सुन्दर नारी या पुरुष या कि एक नई कार। ये सारी खोजें एक ही हैं और तुम्हारी यह भूख कभी भी नहीं मिटेगी। तुम्हारी यह भूख, संतुष्टि को जाने बिना ही मिटनी चाहिए। तुम्हारी यह प्यास बिना कुछ पीए ही अपने आप मिटनी चाहिए। यदि यह बात तुम्हारी समझ में आ जाती है, तो तुम्हारी पुरानी पद्धति समाप्त हो जाएगी।

मैं इस बात पर जोर दे रहा हूँ कि हम अपनी मूलभूत समस्याओं का मनोवैज्ञानिक तरीके से सुलझाने की कोशिश करते हैं, जबकि मूल समस्या स्नायुतंत्र (न्यूरालोजिकल) की है। इस समस्या में शरीर भी शामिल है। उदाहरण के लिए इच्छाओं को लो। जब तक यह जीवित शरीर रहेगा, तब तक इच्छाएँ भी रहेगी। यह स्वाभाविक है। विचार हस्तक्षेप करते हैं और इच्छाओं को दबाने, नियंत्रित करने तथा उनका नैतिकीकरण करने की कोशिश करते हैं। यह मानव जाति के लिए नुकसानदेह है। ये विचार ही हैं, जिन्होंने समस्या पैदा की है। तुम किसी तरह यह हमेशा आशा और विश्वास करते रहते हो कि यही उपकरण (विचार) तुम्हारी अन्य समस्याओं का निराकरण कर सकते हैं। तुम यह गलत आशा करते हो कि तुम्हारे विचार तुम्हारा उद्धार कर देंगे। लेकिन तुम आशा करते हुए उसी तरह मर जाओगे, जैसे आशा करते हुए जीवित हो। यही मेरे 'विषाद गीत' की बार-बार दोहराई जाने वाली पंक्ति है।

● **सभी धर्मों ने हम सबके सामने मुक्ति, स्वर्ग, स्वतंत्रता तथा ईश्वर की इच्छाओं को रखा है, जो हमारे लिए पाने योग्य है। लेकिन यदि इस अंतिम लक्ष्य का अस्तित्व ही नहीं है, जैसा कि आप कह रहे हैं, तो ये सभी अधम इच्छाएँ हुईं, क्योंकि ये झूठी हैं। इसलिए इनको संतुष्ट कर पाना भी असंभव है। लेकिन हम इसे नहीं मान सकते। हम इस बात पर जोर देते हैं कि कुछ इच्छाएँ; विशेषकर जो हमें साफ तौर पर अपनी देह से ऊपर उठाती हैं, अन्य की अपेक्षा अधिक दैवीय इच्छाएँ हैं। क्या इस पर कुछ कहना चाहेंगे?**

□ जब तक तुम मोक्ष, स्वतंत्रता तथा आत्म-स्वीकृति जैसी इन सभी प्रमुख इच्छाओं से मुक्त नहीं हो जाते, तब तक तुम दुःखी रहोगे। समाज ने हमारे सामने जो अंतिम लक्ष्य रखा है, उससे अलग होना पड़ेगा। जब तक तुम इच्छाओं से मुक्त नहीं हो जाते, तब तक तुम अपने किसी भी दुःख से मुक्त नहीं

हो सकते। इन इच्छाओं का दमन करके तुम मुक्त नहीं हो सकते। इस सत्य को स्वीकार करना जरूरी है, क्योंकि यही समस्याओं की जड़ है। समाज ने ही स्वतंत्रता की इच्छा, मुक्ति की इच्छा, ब्रह्म की इच्छा तथा मोक्ष की इच्छा पैदा की है। ये सभी वे इच्छाएँ हैं, जिनसे तुम्हें मुक्त होना चाहिए। इसके बाद अन्य इच्छाएँ अपने आप स्वाभाविक स्थिति में आ जाएँगी। तुम अपनी इच्छाओं का दमन इस भय से करते हो कि यदि तुमने वैसा नहीं किया, तो समाज तुम्हें दड देगा। या फिर इसलिए करते हो, क्योंकि तुम उन्हें अपनी प्रमुख इच्छा 'मुक्ति' के मार्ग की बाधा समझते हो।

यदि मेरे जैसा ही तुम्हारे साथ भी कुछ घटा, तो तुम अपने आपको फिर से आदिम स्थिति में पाओगे। लेकिन वह अर्वाचीनता नहीं होगी। साथ ही कोई इच्छा-शक्ति भी नहीं होगी। ऐसा बस हो जाता है। इस तरह का मुक्त व्यक्ति फिर समाज से नहीं उलझता। वह असामाजिक नहीं है। वह दुनिया से झगडता भी नहीं है। वह जानता है कि इससे दूसरी कोई अलग स्थिति नहीं होगी। वह समाज को बदलना नहीं चाहता। बदलाव की उसकी इच्छा समाप्त हो जाती है।

किसी भी दिशा में कुछ भी करना हिंसा है। कोई भी प्रयास हिंसा है। यदि तुम अपने मस्तिष्क की शांति के लिए विचारों के जरिए कुछ भी करते हो, तो यह एक तरह के दबाव का ही उपयोग है। इसलिए यह भी हिंसा है। इस तरह का दृष्टिकोण ही बेकार है। तुम हिंसा के द्वारा शांति लादने की कोशिश कर रहे हो। योग, ध्यान, प्रार्थना और मंत्र आदि हिंसा के ही तरीके हैं। यह जीवित शरीर अपने आप में अत्यंत शांतिपूर्ण है। इसके लिए तुम्हें कुछ नहीं करना होगा। शांतिपूर्ण तरीके से काम करता हुआ शरीर तुम्हारे उल्लास, आनंद और परमानंद की स्थिति की परवाह नहीं करता।

मनुष्य ने इस शरीर की स्वाभाविक समझ को छोड़ दिया है। इसीलिए मैं अपनी बात को 'विषाद गीत' कहता हूँ। जैसे ही मनुष्य यह अनुभव कर लेगा कि वह जानवरों से अलग और श्रेष्ठ है, उसी क्षण वह अपने विनाश के बीज बोने लगता है। जीवन के प्रति यह उलटा दृष्टिकोण हमारी सोच को संपूर्ण विनाश की ओर ढकेल रहा है। ऐसा कुछ नहीं है, जिससे तुम इसे रोक सको।

मैं तुम्हें चेतावनी नहीं दे रहा हूँ। मैं तुम्हें डरा भी नहीं रहा हूँ। इस दुनिया को बचाने में मेरी कोई रुचि नहीं है। मनुष्य जाति का अंत होना ही है।

मेरे कहने का मतलब यही है कि तुम जिस शांति की खोज कर रहे हो, वह तुम्हारे अपने ही अंदर, शरीर के सामंजस्यपूर्ण कार्य करने में हैं।

● **यह कुछ बुद्ध के उस कथन जैसा ही मजाक-सा लग रहा है कि "कुछ मत करो, केवल खड़े रहो।" किसी भी स्तर पर, किसी भी दिशा में, कोई भी गति न करना आसान नहीं है।**

□ तुम जब अपने आपको किसी भी बात से, किसी भी कारण से मुक्त करने की कोशिश करते हो, तो वह तुम्हारी पहले से ही मौजूद संवेदनशीलता, स्पष्टता और स्वतंत्रता को नष्ट कर देती है।

● **चीजें सचमुच में जैसी हैं, यदि उन्हें वैसा ही देखना संभव होता.........।**

□ यहाँ चीजें जैसी हैं, तुम्हारे द्वारा वैसी ही देखे जाने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। तुम चीजों को वैसा ही नहीं देख सकते, जैसी वे हैं। तुम अपने अनुभव और संवेदना को कभी भी अकेले नहीं छोड़ते। तुम अपनी उस संवेदना को ग्रहण करते हो और अपने ज्ञान के ढाँचे में इसकी व्याख्या करते हो। तुम केवल तभी खुश या नाखुश होते हो, जब तुम्हें खुश और नाखुश के अनुभव का ज्ञान प्राप्त होता है। इस प्रकार हर वस्तु तुम्हारे अनुभव करने से पहले ही तुम्हारे ज्ञान के ढाँचे में समा जाती है। ज्ञान की क्रियाशीलता तुम्हारे अंदर बढ़ती चली जाती है। इसकी रुचि लगातार बने रहने में होती है। वहाँ ऐसा कोई नहीं है, कोई आत्म नहीं है, जो इसकी सत्ता को बनाए रख सके। यह केवल विचारों की गतिशीलता तथा स्वचालित पृथकता है। यह यंत्रवत है। यदि तुम इसके बारे में कुछ करना चाहते हो, तो यह इसकी गतिशीलता को और बढ़ाएगा।

● **पूर्व के गुरुओं ने कहा है कि इच्छाएँ बुरी होती हैं, इसलिए उनसे ऊपर उठना चाहिए।**

□ तुम्हारी सबसे प्रमुख इच्छा; जो एक निश्चित लक्ष्य को पाना चाहती है, समाप्त होनी चाहिए, न कि अनगिनत छोटी-छोटी इच्छाएँ। तुम जो अपनी छोटी-छोटी इच्छाओं को चालाकी से नियंत्रित करने की कोशिश करते हो, वह तुम्हारे इस उच्चतम लक्ष्य को प्राप्त करने की योजना का ही एक भाग है। तुम्हारी यह उच्चतम इच्छा सभी इच्छाओं की इच्छा है। तुम अपने इस मुख्य उद्देश्य को समाप्त कर दो, तो शेष सभी इच्छाएँ अपने स्वाभाविक रूप में आ जाएँगी और

तुम्हारे तथा दुनिया के लिए कोई समस्या खड़ी नहीं करेंगी। तुम अपनी इन अनगिनत इच्छाओं को लगातार नियंत्रित करके या चालाकी से समायोजित करके कहीं नहीं पहुँचोगे। यह अपने आप में बहुत घृणित है।

● **क्या कोई उच्चतम लक्ष्य भी है?**

□ तथाकथित उच्चतम लक्ष्य क्षितिज के समान है। तुम जैसे-जैसे उसके करीब पहुँचते हो, वैसे-वैसे वह तुमसे दूर होता चला जाता है। क्षितिज जैसे उद्देश्य का कोई अस्तित्व नहीं है। यह तुम्हारे अपने ही भय की प्रतिच्छवि है, जो तुमसे उतनी ही दूर होती जाती है, जितना तुम उसके करीब पहुँचते हो। तुम भला उसे कैसे पकड़ सकते हो? तुम कुछ नहीं कर सकते। इसके बावजूद इच्छाएँ तुम्हें घुमाती रहती हैं। इसका कोई अर्थ नहीं कि वे तुम्हें किस दिशा मे घुमाती हैं। ये सब एक ही हैं।

● **आप कहते हैं कि मैं भ्रम में रहता हूँ। क्या ये भ्रम हैं? भला इसे मैं कैसे भ्रम समझ सकता हूँ?**

□ तुम अपने पृथकत्त्व (सेप्रेटिव) चेतना द्वारा जो अनुभव करते हो, वह भ्रम है। तुम नहीं कह सकते कि बमों का गिरना भ्रमात्मक है। यह भ्रम नहीं है। केवल इसका अनुभव ही भ्रम है। इस विश्व की यथार्थता; जिसका तुम अभी अनुभव कर रहे हो, भ्रम है। मैं यही बताने की कोशिश कर रहा हूँ।

● **यदि आप कहते हैं कि विश्व के बारे में मेरा सापेक्ष (रिलेटिव) आत्मपरक (सबजेक्टिव) दृष्टिकोण पूर्वाग्रही होने के कारण भ्रमात्मक है, तो मैं आपकी बात से सहमत हूँ। लेकिन आप उस परम सत्य के बारे में किसी बाहरी, निष्पक्ष निष्कर्ष को भी अस्वीकार करते हैं। क्या ऐसा नहीं?**

□ परम जैसी कोई वस्तु नहीं होती। यह विचार है, अकेला विचार है, जिसने परम की रचना की है। परम शून्य, परम शक्ति और परम विशुद्धता जैसे शब्द गुरुओं और विशेषज्ञों द्वारा खोजे गए हैं। इनसे वे अपने आपको मूर्ख बनाते है और दूसरों को भी।

शताब्दियों से साधु-संत और मसीहों ने अपने आपको तथा दूसरों को मूर्ख बनाया है। विशुद्धता और परम दोनों झूठे हैं। तुम इस परम के अनुसार अपने व्यवहार को ढालना चाहते हो, जो तुम्हें मूर्ख बना रहा है। वस्तुतः तुम पूरी तरह एक अलग तरीके से ही काम कर रहे हो। तुम दुष्ट हो और सोचते हो कि तुम्हें

शांतिपूर्ण होना चाहिए। यह विरोधाभासी है। यही मैं तुम्हें बताना चाहता हूँ।

● हम आपके द्वारा सभी धर्मों और दार्शनिक विचारों को झुठलाने की दृढ़ता से आश्चर्यचकित हैं.........।

□ वह निश्चितता; जो मेरे साथ घटी है, कुछ ऐसा है, जिसे दूसरों तक नहीं पहुँचाया जा सकता। इसका मतलब यह नहीं है कि यह सर्वोत्तम है। या मैं एक ऐसा चुना गया व्यक्ति हूँ, जिसमें सारे गुण भर दिए गए हैं। ऐसा बिलकुल नहीं है। मैं एक सामान्य-सा आदमी हूँ और इससे मुझे कोई लेना-देना नहीं। इस निश्चितता ने सारी चीजों को विस्फोटित कर दिया है, जिसमें तथाकथित ज्ञानोदय होने का दावा भी शामिल है, जिसे बाजार में बेचा जाता है।

● यदि साधु-महात्माओं द्वारा कही गई यह बात गलत है कि जीवन में मनुष्य का एक निश्चित स्थान है, तब कम-से-कम उनकी यह बात तो अंशतः सही है कि कोई ईश्वर जैसी एक उच्चतम शक्ति है।

□ मैं यह बताने की कोशिश कर रहा हूँ कि ब्रह्म जैसी कोई वस्तु नहीं है। दिमाग ने ही भय के कारण ब्रह्म की रचना की है। यह भय पीढ़ियों से चला आ रहा है। वस्तुतः भय ही ब्रह्म है। यदि तुम इस भय से मुक्त होने का सौभाग्य प्राप्त कर लेते हो, तब ब्रह्म नहीं रहेगा। अंतिम सत्य जैसी कोई बात नहीं है। भय जैसी कोई बात नहीं है। भय अपने आप में समस्या है, ब्रह्म नहीं। भय से मुक्त होने की इच्छा ही अपने आप में भय है।

तुम भय से प्रेम करते हो। भय का अंत ही मृत्यु है और तुम नहीं चाहते कि ऐसा हो। मैं शारीरिक भय को मिटाने की बात नहीं कर रहा हूँ। ये अस्तित्व के लिए जरूरी हैं। इस भय का अंत ही मृत्यु है।

● जब तक हम किसी भी तरह अपने भय से मुक्त होने का साहस प्राप्त नहीं कर लेते, तब तक हम लगातार......।

□ ....आशा, प्रार्थना और कर्मकांड। कर्मकांडी व्यक्ति दुराचारी होता है, क्योंकि अनैतिक व्यक्ति ही कर्मकांड में लगा रहता है। इस संसार में सद्‌गुणी व्यक्ति है ही नहीं। सभी व्यक्ति कल सद्‌गुणी बनेंगे। तब तक वे दुराचारी रहते हैं। तुम्हारे सद्‌गुणों का अस्तित्व केवल झूठे भविष्य में है। जिन गुणों की तुम बात कर रहे हो, वे कहाँ हैं? भविष्य में सद्‌गुणों की आशा रखना अच्छी बात नहीं है, क्योंकि इसकी कोई गारंटी नहीं कि भविष्य का जीवन होता है। और

यदि ऐसा है भी, तो तुम्हारे मुक्त होने की आशा और भी कम है।

● **मैं ऐसा सोचता हूँ कि जो कुछ भी आप कह रहे हैं, वह मुझे दिखाई.....।**

□ तुम अंधे हो। तुम्हें कुछ दिखाई नहीं दे रहा है। यदि तुम सचमुच देखने लगोगे और पहली बार यह पाओगे कि आत्म-स्वीकृति जैसी कोई बात नहीं है, शुद्ध करने लायक कोई चेतना नहीं है, मुक्त करने के लिए आत्मा नहीं है, तब यह तुम्हारे लए एक जबरदस्त आघात होगा। तुमने इन सभी चीजों की.....आत्मा, मस्तिष्क, चेतना या इन्हें तुम जो कुछ भी कहना चाहो....खोज की है, ये सभी झूठे हो जाएँगे। तुम जिस स्थिति में हो, वहाँ से सच्चाई को देख पाना तुम्हारे लिए कठिन है। यदि तुम इस चालाकी को एक बार देख लो, तब तुम नष्ट हो जाओगे।

● **भावना, आत्मा और ब्रह्म को एक भयभीत मस्तिष्क की घटिया खोज कहना एक प्रतिक्रियावादी और शायद थोड़ी खतरनाक बात भी है। क्या ऐसा नहीं है ?**

□ मुझे इसकी परख नहीं है। मैं जानने को तैयार हूँ। मुझे शरीर की भौतिक क्रिया के अतिरिक्त कुछ दिखाई नहीं देता। आध्यात्मिकता मस्तिष्क की खोज है और यह मस्तिष्क मिथक है।

तुम्हारी परंपराएँ तुम्हें अवरुद्ध कर रही हैं। लेकिन दुर्भाग्य है कि तुम इसके लिए कुछ नहीं करते। सच तो यह है कि तुम अवरुद्ध होना पसंद करते हो। तुम्हे संस्कृति के कूड़े से भरी बोरियाँ तथा अतीत के सड़े-गले कचरे का बोझ ढोना पसंद आता है। इसे अपने आप नष्ट होना होगा। जब ऐसा हो जाएगा, तब तुम किसी भी जानकारी पर निर्भर नहीं रहोगे। सिवाय इसके कि तुम इसका उपयोग इसी दुनिया में बुद्धिमान की तरह काम करने के एक उपयोगी उपकरण की तरह करो।

'चाहत' को जाना होगा। तुम उस चाहत से मुक्त होना चाह रहे हो, जो है ही नहीं। यही दु:ख है। दु:ख से मुक्त होने की चाहत ही दु:ख है। कोई दूसरा दु:ख नहीं होता। तुम दु:ख से मुक्त होना नहीं चाहते। तुम बिना कुछ किए दु:ख के बारे में क्यों सोचते हो। दु:ख से छुटकारा पाने के बारे में तुम्हारे द्वारा लगातार सोचा जाना दु:ख के लिए सामग्री जुटाना है। इससे (सोचने से) दु:ख का अंत

नहीं होता। जब तक तुम सोचते रहोगे, तब तक दु:ख रहेगा। वस्तुतः दु:ख है ही नहीं, जिससे मुक्त हुआ जाए। दु:ख के बारे में सोचना और उसके विरुद्ध संघर्ष करना ही दु:ख है। चूंकि तुम सोचना बंद नहीं कर सकते और सोचना ही दु:ख है, इसलिए तुम हमेशा कष्ट भोगते हो। इससे बचने का कोई रास्ता नहीं है।

● **मैं चाहता हूँ कि मस्तिष्क की सच्ची शांति के लिए ध्यान करूँ।**

□ क्या तुम्हारे मन में तुम्हारे इस उद्देश्य के प्रति कभी प्रश्न उठा, जिसके लिए साधना जरूरी है। तुम यह मानकर ही क्यों चलते हो कि ''मस्तिष्क की शांति'' जैसी कोई चीज है। हो सकता है कि यह झूठी चीज हो। मैं यह प्रश्न केवल यह जानने के लिए कर रहा हूँ कि तुम्हारा विशेष उद्देश्य क्या है? क्या मैं प्रश्न पूछ सकता हूँ?

● **हाँ, मैंने कहा न कि मस्तिष्क की शांति चाहता हूँ।**

□ इसे प्राप्त करने की तुम्हें कब आशा है? तुम चाहते हो— कल, अगले वर्ष। ऐसा क्यों? क्या कारण है कि वह प्रशांति या मस्तिष्क की नीरवता या इसे तुम जो कुछ भी कहना चाहो, केवल कल ही मिलती है। अभी तुरंत क्यों नहीं? शायद तुम्हारे अंदर जिस शांति का अभाव है, वह इसलिए है, क्योंकि तुम साधना के द्वारा शांति पाना चाहते हो।

● **ऐसा हो सकता है....।**

□ लेकिन तुम इसे कल तक के लिए क्यों छोड़ना चाहते हो? तुम्हें इस स्थिति का सामना अभी करना है। अंततः तुम चाहते क्या हो?

● **ऐसा लगता है कि मैं जो कुछ भी कर रहा हूँ, वह अर्थहीन है। संतोष का कोई भाव नहीं है। मुझे ऐसा लगता है कि इसकी अपेक्षा भी कोई ऊँची वस्तु होनी चाहिए।**

□ मान लो कि मैं ऐसा कहता हूँ कि यह अर्थहीनता की स्थिति ही तुम्हारे लिए है और यही तुम्हारे लिए हमेशा हो सकती है, तब तुम क्या करोगे? तुम्हारे झूठे और व्यर्थ उद्देश्य ही तुम्हारे असंतोष और अर्थहीनता के लिए जिम्मेदार हैं। क्या तुम सोचते हो कि जीवन का कोई अर्थ है? स्पष्ट है कि तुम नहीं सोचते। तुम्हें बताया गया है कि कोई अर्थ है, अर्थात् होना चाहिए। 'अर्थयुक्तता' (मीनिंगफुल) की तुम्हारी यह भावना इस समस्या का सामना करने से तुम्हें अलग रखती है और तुम्हें यह बताती है कि जीवन का कोई अर्थ नहीं है। यदि

अर्थयुक्तता' का यह विचार समाप्त हो जाता है, तब तुम जो कुछ भी अपने दैनिक जीवन में करोगे, उसमें तुम्हें अर्थ दिखाई देने लगेगा।

● **लेकिन हम सबके पास एक अच्छे तथा अधिक आध्यात्मिक जीवन का विचार होना चाहिए।**

☐ तुम जो कुछ भी चाहते हो; यहाँ तक कि तथाकथित आध्यात्मिक उद्देश्य भी, मूल्य की दृष्टि से सब भौतिकवादी हैं। यदि मैं पूछ सकता हूँ, तो बताओ कि इसमें अध्यात्म जैसी क्या बात है? यदि तुम अपने आध्यात्मिक उद्देश्य को पाना चाहते हो, तो तुम इसके लिए उसी उपकरण का उपयोग करोगे, जिसका उपयोग भौतिकवादी उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए करते हो, जिसे विचार कहते हैं। सच तो यह है कि तुम इसे बारे में कुछ करते नहीं, केवल सोचते हो। इसलिए तुम केवल सोचते रहते हो कि जीवन का कुछ उद्देश्य होना चाहिए, कुछ अर्थ होना चाहिए। क्योंकि विचार एक पदार्थ है, इसलिए अध्यात्म या जीवन की अर्थयुक्तता जैसे उद्देश्य भी पदार्थ हैं। आध्यात्मिकता भौतिकता है। किसी भी घटना के बारे में तुम कुछ करते नहीं, केवल सोचते हो, जिसका अर्थ है—स्थगित करना। साफ है कि विचार इसके अतिरिक्त कुछ नहीं कर सकता।

तुम अपने तथाकथित आध्यात्मिक उद्देश्य की प्राप्ति के लिए विचार नामक जिस उपकरण का उपयोग करते हो, वह अतीत की देन है। विचार समय में पैदा होते हैं, समय में कार्य करते हैं, इसलिए इससे प्राप्त किसी भी परिणाम का 'समय में' और 'समय का' होना अनिवार्य है। और समय को कल के लए स्थगित कर दिया जाता है। उदाहरण के लिए स्वार्थ की सच्चाई को लें। इसकी आलोचना की जाती है। इसलिए तुम नि:स्वार्थता के पीछे भागते हो, जो पूरी तरह मस्तिष्क की उपज है। और नि:स्वार्थता की बात को कल के लिए टालते रहते हो। तुम कल नि:स्वार्थ होगे या अगले दिन होगे या अगले जीवन में होगे, यदि ऐसा कुछ है तो। तुम्हारे लिए स्वार्थ से पूरी तरह मुक्त होना आज और अभी क्यों संभव नहीं? और क्या तुम सचमुच स्वार्थ से पूरी तरह मुक्त होना चाहते हो? तुम नहीं चाहते। और इसीलिए तुमने स्वार्थी बने रहने के लिए नि:स्वार्थता की खोज की है। इसीलिए तुम कभी भी नि:स्वार्थी हो ही नहीं सकते, क्योंकि तुम नि:स्वार्थता की, या मस्तिष्क की शांति की जिस स्थिति को प्राप्त करना

चाहते हो, वह मूलतः पदार्थवादी है। तुम स्वार्थ से मुक्त होने के लिए जो कुछ भी करते हो, वह तुम्हारे इसी को और अधिक मजबूत बनाता है। मेरे कहने का मतलब यह नहीं है कि इसीलिए तुम्हें स्वार्थी होना चाहिए, बल्कि यह है कि नि स्वार्थ के बारे में जो तुम्हारी भावनात्मक सोच है, वह अर्थहीन है।

तुम्हें यह भी बताया जाता रहा है कि तुम ध्यान के द्वारा स्वार्थ की भावना को समाप्त कर सकते हो। जबकि सच तो यह है कि तुम ध्यान करते ही नहीं, बल्कि निःस्वार्थता के बारे में केवल सोचते रहते हो तथा निःस्वार्थी होने के लिए कुछ नहीं करते। मैंने इसे एक उदाहरण के रूप में लिया है। लेकिन अन्य जितने भी उदाहरण हैं, वे सब इसी के ही रूप हैं। इससे जुड़ी जितनी भी अन्य क्रियाएँ है, वे सभी बिलकुल एक जैसी हैं। तुम्हें इस सरल-सी सच्चाई को स्वीकार करना चाहिए कि तुम स्वार्थता से मुक्त नहीं होना चाहते।

● **मैं समझने की कोशिश कर रहा हूँ........।**

□ तुम प्रयासरहित स्थित में रहने के लिए प्रयास का उपयोग कर रहे हो। भला तुम एक प्रयासरहित स्थिति के लिए प्रयास का उपयोग कैसे कर सकते हो? तुम सोचते हो कि तुम इच्छा, संघर्ष और प्रयास के द्वारा प्रयासरहित स्थिति मे जी सकते हो। दुर्भाग्य यह है कि यही वह है, जो तुम कर सकते हो। तुम केवल 'प्रयास' को ही जानते हो। 'तुम' और इस 'तुम' ने जितनी भी चीजें प्राप्त की हैं, वे सब प्रयास के द्वारा ही प्राप्त की हैं। प्रयासरहित स्थिति को प्राप्त करना वैसा ही है जैसा युद्ध के द्वारा शांति को प्राप्त करना। भला तुम युद्ध के द्वारा शांति कैसे पा सकते हो?

तुम मस्तिष्क की जो शांति चाहते हो, वह इसी प्रयास और संघर्ष के टकराव का विस्तार है। इसी तरह ध्यान भी युद्ध की स्थिति है। तुम उस समय ध्यान करने बैठते हो, जब तुम्हारे अंदर एक लड़ाई चल रही होती है। इसका परिणाम होता है—हिंसा तथा तुम्हारे अंदर बुरे विचारों का आते चले जाना। इसके बाद तुम प्रयास करके इन बुरे विचारों को नियंत्रित करने या इनकी दिशा बदलने की कोशिश करते हो और इस प्रक्रिया में तुम अपनी ही हिंसा करते हो।

● **लेकिन ऐसा लगता है कि प्रार्थना या ध्यान करने के बाद मस्तिष्क की शांति जैसी कोई चीज मिलती है। आप इसकी व्याख्या कैसे करेंगे?**

□ यह तुम्हारी केवल थकावट का परिणाम है। इससे अधिक कुछ नहीं।

जब तुम अपने विचारो को नियत्रित या दबाने को कोशिश करते हो तो वे तुम्हे थकाते है एक प्रकार से युद्ध जैसा थकाते है इसी कारण तुम मस्तिष्क की शाति का अनुभव करते हो लेकिन यह शाति नहीं है यदि तुम विचारो को नियत्रित करने की कोई तकनीक जानना चाहते हो, तब तो तुम यहा एक गलत आदमी के पास आ गए हो।

● **नहीं, ऐसा नहीं है। मुझे ऐसा लगता है कि आपसे बातचीत करने पर मुझे लाभ हुआ है। क्या आप यह कह रहे हैं कि कोई भी धार्मिक विश्वास, कोई भी आध्यात्मिक मार्ग या कोई भी साधना जरूरी नहीं है?**

□ हाँ, मैं कहता हूँ कि कोई भी जरूरी नहीं है। कुछ लोग कहते हैं कि जरूरी है। लेकिन उन सब ने तुम्हें कहाँ पहुँचाया है। अपने उद्देश्य को समझना सबसे मुख्य बात है और इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए संघर्ष, युद्ध और इच्छा-शक्ति की जरूरत होती है। बस यही है। फिर भी इस बात की कोई गारंटी नहीं कि तुम अपना लक्ष्य पा ही लोगे। तुम्हें लगता है कि लक्ष्य यही है। तुमने अपने आपको आशा दिलाने के लिए लक्ष्य की खोज की है। लेकिन आशा का मतलब है—कल। आशा की जरूरत कल के लिए होती है, आज के लिए नहीं।

तुम जानते हो। तुम अधिक जानना चाहते हो, इसलिए तुम स्वयं अपने लक्ष्य तक पहुँचने के लिए कोई अच्छी तकनीक निकाल सकते हो। तुम जानते हो कि इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि अधिक अनुभव, अधिक ज्ञान, अधिक पद्धतियाँ तथा अधिक प्रणालियाँ तुम्हें हमारे लक्ष्य तक पहुँचाने में सहायक होंगे। इसके बाद भी तुम इन पर जोर देते हो। आज को देखो। कल को देखने के लिए केवल आशा की जरूरत है।

● **हम तकनीकी की सहायता से क्या देखने की कोशिश कर रहे हैं?**

□ तुम अपने जीवन का अर्थ देखना चाहते हो। जब तक तुम इस जीवन का अर्थ या उद्देश्य की खोज करने पर जोर देते रहोगे, तब तक तुम जो कुछ भी करोगे, वह सब उद्देश्यहीन और लक्ष्यहीन होगा। जीवन का अर्थ प्राप्त करने की जो आशा तुममें है, वह तुम्हारी वर्तमान अर्थहीनता की स्थिति का कारण है। इसके अतिरिक्त दूसरा कोई अर्थ नहीं हो सकता।

● **यह तो समझा ही जा सकता है कि लोगों को अपने जीवन का अर्थ जानना चाहिए। क्या ऐसा नहीं है?**

☐ वह ऊर्जा, जो तुम खोज, तकनीक, अपनी साधना या तुम इसे जो कुछ भी कहना चाहो, लगा रहे हो, वह तुम्हारी उस ऊर्जा को नष्ट कर रहा है, जिसकी जरूरत तुम्हें जीवन के लिए है। तुम्हारे ऊपर जीवन का अर्थ समझने की सनक सवार हो गई है और वह तुम्हारी ढेर सारी ऊर्जा को नष्ट कर रही है।

यदि तुम्हारी वह ऊर्जा इस अर्थ की खोज से अलग हो जाएगी, तो उसका उपयोग हर तरह की खोज की अर्थहीनता को देखने के लिए किया जा सकेगा। तभी तुम्हारा जीवन अर्थयुक्त हो सकेगा और तुम्हारी ऊर्जा का उपयोग कुछ अर्थपूर्ण उद्देश्यों के लिए हो सकेगा। जीवन, तथाकथित भौतिक जीवन, का अपना एक अर्थ है। लेकिन तुम्हें यह बताया गया है कि इस भौतिक जीवन का कोई अर्थ नहीं है और इसके ऊपर आध्यात्मिकता की न जाने कितनी क्षुद्र परतें चढ़ा दी गई हैं।

जीवन का कोई अर्थ होना ही क्यों चाहिए? जीने का कोई उद्देश्य होना ही क्यों चाहिए? जीना ही अपने आप में सब कुछ है। जीवन के बारे में कोई आध्यात्मिक अर्थ की खोज करने ने ही समस्या पैदा की है। तुम्हें अभी तक आदर्श, विशुद्धता, शांति तथा जीवन की उद्देश्यता जैसी बेकार की बातें सिखाई गई हैं और तुम्हारी ऊर्जा को इनके बारे में सोचने में लगा दिया गया है, बजाय इसके कि इसे पूरी तरह से जीवन जीने में लगाया जाता। फिर भी इन सबके बारे में तुम कुछ भी सोचो, जीवन तो चल ही रहा है। जीवन को चलते ही जाना है।

● क्या ऐसा नहीं है कि संस्कृति और शिक्षा का यह उद्देश्य है कि वह हमें जीने के बारे में सिखाए?

☐ तुम जी रहे हो। जैसे ही तुम यह प्रश्न करते हो कि "कैसे जीयें", वैसे ही तुम जीवन को समस्या बना देते हो। "कैसे जियें" ने जीवन को अर्थहीन बना दिया है। जिस क्षण तुम पूछते हो कि 'कैसे', उसी क्षण तुम्हें उत्तर के लिए किसी के पास जाना पड़ता है और तुम दूसरे पर निर्भर हो जाते हो। फिर वह तुम्हारी इस नादानी का फायदा उठाता है।

● आप कह रहे हैं कि सभी खोजें बेकार हैं, क्योंकि पाने या समझने के लिए कुछ है ही नहीं?

☐ पाने जैसी कोई बात नहीं है। पहुँचने जैसी कोई बात नहीं है। चूँकि तुमने लक्ष्य का निर्धारण किया है; जैसे निःस्वार्थता, इसलिए तुम स्वार्थ पर

अटक जाते हो। यदि निःस्वार्थता का लक्ष्य ही नहीं रहेगा, तो क्या तुम स्वार्थी रहोगे ? तुमने निःस्वार्थता के उद्देश्य की खोज की है, ताकि इस बीच तुम स्वार्थी बने रह सको। भला तुम अपने स्वार्थ को तब तक कैसे समाप्त कर सकते हो, जब तक कि तुम निःस्वार्थता के पीछे भाग रहे हो। हालाँकि जीने के लिए थोड़ी-सी व्यावहारिक निःस्वार्थता की जरूरत है, लेकिन तुम्हारे लिए तो यह एक भयानक तथा न सुलझने वाली समस्या बन गई है।

मेरे साथ यह जरूरी नहीं है कि मैं किसी एक मुद्रा में बैठूँ और अपनी सांस को साधू। यहाँ तक कि जब मेरी आँखें खुली होती हैं, तब भी मैं समाधि की स्थिति में होता हूँ। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि मैं उस समय क्या कर रहा हूँ। समाधि के बारे में तुम्हारी जो जानकारी है, वही तुम्हें इससे दूर रखे हुए है। समाधि की स्थिति तभी आती है, जब तुम अब तक की अपनी सारी जानी हुई बातों को समाप्त कर देते हो। इससे पहले कि वह ज्ञान; जो शरीर की प्रत्येक कोशिका में बंद है, समाप्त हो, शरीर को शव के जैसा बनाना होगा।

● **आप कहते हैं कि यदि किसी व्यक्ति को सृजनात्मकता के साथ जीना है तथा अपने वर्तमान मामूलीपने से ऊपर उठना है, तो उसके लिए अपने अतीत से पूरी तरह अलग होना जरूरी है। लेकिन अनेक ऐसे महान विद्वान और अन्वेषक हुए हैं, जो उस तरह की मृत्यु या मनोवैज्ञानिक 'आपदा' से नहीं गुजरे हैं, जैसा कि आप कह रहे हैं।**

□ तुम्हारे द्वारा मुक्त रूप से प्रशंसित अन्वेषणता तुम्हारे विचारों से जन्मी है। इसकी खोज मूलतः संरक्षणवादी यांत्रिकी (प्रोटेक्टिव मैकेनीज्म) दिमाग ने की है। धर्म और डायनामाइट दोनों की खोज अपने सर्वोत्तम हितों की रक्षा के लिए की गई है। इस दृष्टि से कोई भी अच्छा या बुरा नहीं है। क्या तुम्हें ऐसा नहीं लगता ? सभी बुरे, घृणित और दुर्दांत लोग; जिन्हें बहुत पहले समाप्त हो जाना चाहिए था, आज भी बने हुए हैं और सफल हैं। यह मत सोचो कि तुम इस चक्रव्यूह से अलग हो सकते हो, अथवा एक आध्यात्मिक श्रेष्ठता का बहाना करके सह-अपराधिता से बच सकते हो। तुम ही विश्व हो; तुम ही हो। यही वह बिंदु है, जिसकी ओर मैं संकेत कर रहा हूँ।

● **आप उस प्रश्न को अलग कर रहे हैं, जो किसी के भी भविष्य में घट सकता है। यदि मैं बाद के जीवन में अपना बोया हुआ ही काटूँगा, तो**

क्या मुझे इस बात की चिंता नहीं करनी चाहिए कि किस प्रकार नैतिक हुआ जाए....... ?

□ पूर्वजन्म, पुनर्जन्म, कर्म—ये सभी तथाकथित 'आध्यात्मिक' दुनिया की बातें हैं। इन बातों पर जोर इस तथाकथित आध्यात्मिक देश (भारत) में दिया जाता है। यह पूरी तरह से असफल रहा है। वे कहते हैं कि उन्हें अपने बुरे कर्मो के लिए अगले जन्म में दु:ख भोगना होगा। लेकिन अभी के लिए क्या है? वर्तमान से क्यों बच रहे हो? अपने बुरे कर्मों के कारण? फिर वह अभी क्यो सफल है?

● **विश्व में स्पष्ट तौर पर अव्यवस्था और क्रूरता के बावजूद हम लोगों में एक शाश्वत विश्वास की भावना पैदा होती है और उसी प्रेम को अंततः विश्व पर राज्य करना चाहिए....।**

□ इस विश्व में प्रेम है ही नहीं। प्रत्येक व्यक्ति एक ही चीज चाहता है। जो अधिक क्रूर होता है वह इसे प्राप्त कर लेता है—जब तक कि उसकी क्रूरता पकड़ी न जाए। यदि तुम पर्याप्त रूप में निर्दयी हो, तो इस दुनिया में अपनी इच्छित वस्तुएँ प्राप्त करना तुलनात्मक दृष्टि से (धर्म की तुलना में) सरल है। मेरे पास वे सारी चीजें थीं, जो एक व्यक्ति चाह सकता है। और इनमें से किसी ने मेरी सहायता नहीं की। इसलिए मैं अपने मार्ग पर चलने की सलाह किसी को नही दे सकता, क्योंकि मैंने उस मार्ग के झूठ का सामना किया है और उसे अस्वीकृत किया है। यहाँ तक कि मैं यह जरा भी संकेत नहीं दूँगा कि मेरे उन अनुभवों और कर्मों में थोड़ी भी सार्थकता है।

● **जो आप कह रहे हैं, उसके विरुद्ध हमारे महान ऋषि-मुनि इससे सहमत रहे हैं कि.........**

□ जहाँ तक मैं समझता हूँ, सभी संत, ऋषि, पुजारी, गुरु, भगवान, मुनि, पैगबर और दार्शनिक पूरी तरह गलत हैं। जब तक कि तुम इन जीवित या मृत उपदेशकों पर कोई भी आशा और विश्वास रखोगे, तब तक तुममें दृढ़ता पैदा नही हो सकती। यह दृढ़ता तुममें केवल तभी आ सकती है, जब तुम यह मानो कि ये सभी गलत हैं।

जब तुम इन सबको अपने लिए पहली बार देखते हो, तो तुम विस्फोटित हो जाते हो। यह विस्फोट जीवन के उस बिंदु पर प्रहार करता है, जिसका स्पर्श

इससे पहले कभी नहीं किया गया। यह पूरी तरह विशिष्ट है। इसलिए जो मैं कह रहा हूँ, हो सकता है कि वह तुम्हारे लिए सही न हो। जिस क्षण तुम इसे अपने लिए देखते हो, वैसे ही इसे पा लेते हो, भले ही मेरा कहा हुआ असामयिक और झूठा हो। इससे पहले जो कुछ भी तुम्हारे अंदर होता है, वह सब इस आग में भस्म हो जाता है। तुम अपनी विशिष्टता को तब तक नहीं प्राप्त कर सकते, जब तक तुम्हारे अंदर से मानवता के सारे अनुभव नष्ट न हो जाएँ। इसे इच्छा या किसी अन्य की सहायता से नहीं पाया जा सकता। तभी तुम स्वयं में होओगे।

● **मुझे ऐसा लगता है कि जो व्याख्या आप कर रहे हैं, उसके लिए एक विशेष प्रकार के साहस की जरूरत है। क्या मैं सही हूँ ?**

□ हाँ, लेकिन यह सामान्य किस्म का साहस नहीं है। यह वह साहस नहीं है, जिसे तुम संघर्ष या जद्दोजहद से जोड़ते हो। मैं जिस साहस की बात कर रहा हूँ, वह उस समय तुम्हारे अंदर स्वाभाविक रूप से आ जाएगा, जब तुम अपने अंदर से इन सभी गुरुओं को और भय को निकाल फेंकोगे। साहस कोई एक ऐसा उपकरण या गुण नहीं है, जिसे तुम कहीं से प्राप्त कर उपयोग में ला सको। कर्म करने से रोकना ही साहस है। अपने अंदर से परंपराओं को समाप्त कर देना ही साहस है।

● **यहाँ तक कि इस साहस के बाद भी इसकी कोई गारंटी नहीं कि वह जीवन के बारे में गलत नहीं होगा या वह महत्त्वपूर्ण चीजों के बारे में गलत नहीं समझा जाएगा।**

□ यदि तुम एक बार सही और गलत तथा अच्छे और बुरे जैसी विरोधी बातों से अलग हो जाओ, तो तुम कभी भी गलत नहीं होओगे। लेकिन जब तक ऐसा नहीं होता, तब तक यह समस्या बनी रहेगी।

● **आपकी इन विरोधी बातों के अंत तक पहुँचने की बात सोचकर डर लगता है।**

□ यह अचानक बिजली के नंगे तार को छू लेने जैसा है। लेकिन तुम अपनी इच्छा से इसे छूने में बहुत अधिक डर रहे हो। लेकिन अचानक यह चीज तुम्हें छू जाती है और सभी चीजों को जला देती है.......।

● **ईश्वर और मुक्ति की खोज सहित ?**

□ वह इसकी खोज और खोज की इस भूख को जला देती है। यह भूख

इसलिए नहीं रुकती, क्योंकि यह तृप्त हो गई है। यह भूख कभी तृप्त नहीं हो सकती। विशेषकर तब तो और भी नहीं, जब उसे वह परंपरागत भोजन दिया जा रहा हो। इस भूख के जलकर नष्ट हो जाने से ही यह द्वैत समाप्त हो जाता है। बस यही।

● **आपको सुनते समय निश्चित रूप से मुझे कुछ बेचैनी सी लगने लगती है....।**

□ तुम किसी को भी सुनने में अक्षम हो। तुम मेरी अभिव्यक्ति के माध्यम हो। मैं तुम्हारे प्रश्नों का जवाब दे रहा हूँ। मेरा अपना कुछ नहीं है। यहाँ जो कुछ भी मैं कह रहा हूँ, वह तुम्हारे कारण है न कि मेरे कारण। चूँकि माध्यम, जो कि तुम हो, भ्रष्ट है, इसलिए मैं जो कुछ भी तुमसे कहता हूँ, वह भी भ्रष्ट है। इस माध्यम की केवल अपनी निरंतरता को बनाए रखने में रुचि है। इसलिए यहाँ जो भी घटना घटेगी, वह व्यर्थ है।

● **आप अन्य गुरुओं द्वारा बताई गई सभी बातों को नकारते हुए दिखाई दे रहे हैं........।**

□ मेरी दूसरे के द्वारा कही गई बातों को नकारने में कोई रुचि नहीं है (यह बहुत सरल है), बल्कि मैं स्वयं जो कुछ कह रहा हूँ, उसको नष्ट करना बहुत कठिन है। संक्षिप्त रूप से मैं तुम्हें उस बात से रोक रहा हूँ, जो तुम मेरी बातों का अर्थ निकाल रहे हो। यही कारण है कि मेरी बातें एक-दूसरे की विरोधी सुनाई पड़ रही हैं। तुम्हारे सुनने की प्रकृति के कारण ही मेरी यह मजबूरी है कि मैं अपने पहले वक्तव्य को अपने अन्य वक्तव्य से हमेशा खारिज करता हूँ। फिर दूसरा वक्तव्य तीसरे का विरोधी, ऐसा ही और इसी तरह चलता जाता है। मेरा उद्देश्य किसी सुविधाजनक द्वंद्वात्मक सिद्धांत से नहीं है, बल्कि प्रत्येक वस्तु का संपूर्ण विरोध से है, जो किया जा सकता है। तुम मेरी बातों से जो भी अर्थ निकालने की कोशिश कर रहे हो, वह यह नहीं है।

जो कुछ भी यहाँ कहा गया है, उससे तुम्हें अधिक ताजगी और जीवन के एक गुण का एहसास हो रहा है। ऐसा है। लेकिन इसका उपयोग किसी के लिए नहीं किया जा सकता। इसे दुहराया नहीं जा सकता। यह मूल्यहीन है। इसके साथ तुम यही कर सकते हो कि इसे व्यवस्थित करो, संस्थाएँ बनाओ, स्कूल खोलो, धर्म ग्रंथ छापो, जन्म दिन मनाओ, मंदिरों में प्राण-प्रतिष्ठा करो और ऐसा

करके मेरे शब्दों के सत्य को नष्ट क़र दो। इससे किसी की भी सहायता नहीं की जा सकती। ये केवल उसी की सहायता कर सकते हैं, जो दूसरे की अज्ञानता का फायदा उठाते हैं।

● आपके मामले में यह पद्धति अपने आपको परस्पर से सचमुच कितना अलग कर चुकी है?

□ मेरे कहने का मतलब यह है कि मेरे अंदर ऊर्जा का एक ऐसा विस्फोट हुआ था, जो चिंतन से पैदा हुई ऊर्जा से बिलकुल ही भिन्न है। सभी आध्यात्मिक और रहस्यवादी अनुभव विचारों से पैदा होते हैं। ये विचारों से पैदा हुए हैं, इसके अतिरिक्त कुछ नहीं है। जैसे ही विचार आते हैं, वैसे ही मेरे अंदर की ऊर्जा उन्हें जला देती है और संग्रहीत होती रहती है। बाद में वह क्रमशः निकलती है। शरीर की भौतिक सीमाएँ इस विशिष्ट ऊर्जा के निकलने में बाधक होती हैं। जब यह ऊर्जा निकलती है, तो ऊपर जाती है, यह कभी न तो नीचे आती है और न ही वापस जाती है। जब यह साधारण ऊर्जा, जो परमाणु है, निकलती है, तब असहनीय दर्द होता है। यह वह दर्द नहीं है, जिससे तुम परिचित हो। उसका मुझसे कोई लेना-देना नहीं है। यदि ऐसा होता, तो यह शरीर छिन्न-भिन्न हो जाता। यह पदार्थ नहीं है, जिसे ऊर्जा में परिवर्तित किया जा सकता है। यह परमाणु है। यह प्रक्रिया होती चली जाती है जबकि दर्द आता है और चला जाता है। यह उस सुखद राहत की तरह है, जो दाँत के निकालने के बाद महसूस होता है। इसी तरह की राहत मेरे अंदर है, आध्यात्मिक राहत नहीं। इस राहत को आनंद या परमानंद के रूप में जानना भ्रमात्मक है। विचारों के द्वारा कोई भी इस अनुभव को प्राप्त कर सकता है। लेकिन यह सच्चा आनंद नहीं है। सच्चा आनद ऐसा नहीं है, जिसका अनुभव किया जा सके। जिस चीज का भी तुम अनुभव कर सकते हो, वह पुराना होता है। इसका मतलब यह हुआ कि तुम्हारे द्वारा अनुभव की जाने वाली या समझी जाने वाली प्रत्येक वस्तु परंपरा होती है। दूसरे शब्दों में मैं तुम्हें अतीत (कंडीशनिंग) से मुक्त करने की कोशिश नहीं कर रहा हूँ। बल्कि अपने कहे हुए शब्दों से मुक्त कर रहा हूँ। मैं तुम्हें कोई रास्ता नहीं बता रहा हूँ, क्योंकि कोई रास्ता है ही नहीं। मैं इस स्थिति में अचानक आ गया और अपने आपको दूसरों के रास्ते से अलग कर लिया। मैं वही गलती नहीं कर सकता, जो दूसरों ने की है। मैं किसी को यह सलाह नहीं देता कि कोई मेरा

प्रतिदर्श (मॉडल) के रूप में उपयोग करे, या मेरे पगचिह्नों पर चले। मेरा मार्ग कभी भी तुम्हारा मार्ग नहीं हो सकता। यदि तुम इससे अपना मार्ग बनाओगे, तो तुम कठिनाइयों से घिर जाओगे। इसका कोई मतलब नहीं कि मैं कितनी नई, क्रांतिकारी और जोरदार बात कह रहा हूँ। फिर भी यह बेकार ही है। एक प्रकार से सैकंडहैंड वस्तु, उधार लिया हुआ। मैं खुद नहीं जानता कि मैं खुद कैसे इसके चक्कर में आ गया। फिर भला तुम मुझसे कैसे यह उम्मीद कर सकते हो कि मैं इसे दूसरे को दूँ?

यदि मेरा उद्देश्य कुछ है, तो वह अभी से यही होना चाहिए कि मैं अपने प्रत्येक कथन को नष्ट कर दूँ। यदि तुम मेरी कही गई बातों को गंभीरता से लोगे और उनका उपयोग करने या उन्हें लागू करने की कोशिश करोगे, तो तुम कठिनाई में पड़ जाओगे।

● **पूर्वी परंपरा के महान गुरुओं और ऋषियों ने उच्चतम स्थति के बारे में कुछ विचार देने की कोशिश की है। जबकि आप इस बात पर जोर देते हैं कि इन्हें बताया नहीं जा सकता, इन्हें बदला नहीं जा सकता। ऐसा क्यों?**

□ वे जो कुछ भी कहते हैं, उन्हें तुम आसानी से मान जाते हो, जबकि वे वैसे नहीं होते। मैं कहता हूँ कि यह किसी दूसरे को दिया (ट्रांसमीट) ही नहीं जा सकता, क्योंकि दिए जाने जैसी कोई वस्तु है ही नहीं। न ही कोई ऐसी वस्तु है, जिसका परित्याग किया जाए। वह क्या है, जिसका ये गुरु तुम्हें परित्याग करने के लिए कहते हैं? यहाँ तक कि तुम्हारा धर्मग्रंथ कठोपनिषद कहता है कि तुम्हें खोज का ही परित्याग कर देना चाहिए। परित्याग का परित्याग कर्मकांड, तर्क-वितर्क, धन या बुद्धि के द्वारा नहीं होता। ये सब बहुत छोटी चीजें हैं। मूल संस्कृत का मोटे तौर पर अनुवाद यह है कि "यह जिसको भी चुनता है, यह उससे ही उद्घाटित होता है" (हूम सो एवर इट यूजेज, टू हिम इट इज रिवील्ड)। यदि ऐसा होता है, तो फिर कर्मकांड, साधना और इच्छाओं के लिए जगह ही कहाँ बचती है। यह तो अचानक आ जाता है, न कि इसलिए, क्योंकि तुम इसके योग्य हो।

यदि तुम इतने भाग्यशाली हो कि तुम्हें इसके दर्शन होते हैं, तो तुम मर जाओगे। यह विचारों की निरंतरता है, जो मरती है। शरीर नहीं मरता, केवल

अपना रूप बदलता है। विचारों का अंत भौतिक मृत्यु का आरंभ है। तुम शून्यता में नीरवता का अनुभव करते हो। लेकिन शरीर के लिए तो कोई मृत्यु है ही नहीं। मैं जानता हूँ कि इससे तुम्हें थोड़ी ही सांत्वना मिलेगी। अहम् से मुक्त होना पर्याप्त नहीं है। तुम्हें विचार और अहम् से मुक्त होने के लिए चिकित्सकीय मृत्यु (क्लीनिकल डैथ) से गुजरना होगा। ऐसी स्थिति में शरीर कठोर हो जाएगा, हृदय की गति धीमी पड़ जाएगी और तुम शव के समान हो जाओगे।

● **पुनर्जन्म का सिद्धांत भी मृत्यु को नकारता है, लेकिन दूसरे तरीके से। वे एक शाश्वत आत्मा की बात करते हैं, जो इस शारीरिक मृत्यु से दीर्घायु है।**

☐ मृत्यु के बारे में जो भी उत्तर दिए गए हैं, चूँकि तुम उनसे संतुष्ट नहीं हो, इसलिए पुनर्जन्म का सिद्धान्त ढूँढ़ते हो। वह क्या है, जिसका पुनर्जन्म होगा? यहाँ तक कि जब तुम जीवित हो, तब भी वहाँ क्या है। क्या वहाँ ज्ञान की उस संपूर्णता से भी परे कोई वस्तु है, जो तुम्हारे अन्दर अभी विद्यमान है। इसलिए क्या मृत्यु है भी? और यदि है तो क्या इसका अनुभव किया जा सकता है?

● **तो क्या आप स्वाभाविक स्थिति के अस्तित्व को ही प्रमाणित करना चाहते हैं?**

☐ स्वाभाविक स्थिति के बारे में तुम्हारे जो विचार हैं, वे उसके वास्तविक रूप से बिलकुल असंबद्ध हैं। तुम उस स्थिति के बारे में जो ऐसी आशा करते हो, उसे ही ग्रहण एवं व्यक्त करने की कोशिश कर रहे हो। यह व्यर्थ का प्रयास है। जो महत्त्वपूर्ण है, वह है—केवल क्षणों को ग्रहण करना। इससे अधिक कुछ भी नहीं। शेष सभी कल्पना है।

न जानना ही तुम्हारी स्वाभाविक स्थिति है

● आपसे पहले की बातचीत से यह ज्ञात होता है कि व्यक्ति का अपने बारे में तथा विश्व के बारे में ज्ञान का संबंध गलत है। ज्ञान मे आपका सही मतलब क्या है?

□ ज्ञान कोई रहस्य या अदृश्य वस्तु नहीं है। मैं जब मेज को देखता हूँ, तो अपने आपसे पूछता हूँ कि यह क्या है? इसी तरह तुम भी पूछते हो। ज्ञान वस्तु को नाम देना भर है। यह तुम्हें बताता है कि वह मेज है कि मैं सुखी हूँ या दुखी हूँ कि तुम्हें ज्ञानोदय हो गया है, मुझे नहीं। क्या विचार के पास इसके सिवाय कुछ और है?

विश्व के बारे में तुम्हारा जो ज्ञान है, वह तुम्हारे अनुभवों को वस्तु का रूप देते हैं। विश्व में जिस भी वस्तु का अस्तित्व है, या अस्तित्व नहीं है, उसका अनुभव तुम ज्ञान की सहायता से ही अपने लिए कर सकते हो। और यह ज्ञान तुम्हारा अपना नहीं, बल्कि यह वह वस्तु है, जो तुमने और तुम्हारे पूर्वजो ने सदियों से इकट्ठी की है। जिसे तुम "ज्ञान प्राप्ति की प्रक्रिया" कहते हो, वह तुम्हारी संचित स्मृति के अतिरिक्त कुछ नहीं है। तुमने उस ज्ञान में कुछ जोड़ा है, या कुछ परिवर्तन किया है, लेकिन मूल रूप से वह तुम्हारा है ही नहीं।

तुम्हारे अंदर ज्ञान के संग्रह की संपूर्णता के सिवाय और कुछ नहीं है। तुम भी यही (ज्ञान) हो। यहाँ तक कि तुम उस विश्व के यथार्थ को सीधे अनुभव नहीं कर सकते, जिसमें तुम रह रहे हो। फिर इस विश्व से परे का तो प्रश्न ही नहीं उठता। देश और काल से परे विश्व नहीं है। यह पंडित-पुरोहितों के द्वारा बताए गए झूठे तथ्यों पर आधारित तुम्हारी अपनी खोज है। विश्व से मूल्यों के

बारे मे हमारा ज्ञान उसी आधार पर जन्म लेता है, जैसे व हम पर थोपे गए है . हमे विश्व को स्वीकार करना चाहिए।

तो इसका मतलब यह हुआ कि आस्था की पद्धति भी इसी स्मृति पर आधारित है.... ?

☐ यह आस्था कोई बाधा नहीं है। यह अस्तित्व की रक्षा की पद्धति का एक विस्तार है, जो लाखों वर्षों से काम करता आ रहा है। आस्था किसी भी अन्य आदत की तरह है, जिसे तुम जितना ही नियंत्रित और दबाने की कोशिश करते हो, वह उतनी ही शक्तिशाली होती जाती है। तुम्हारे प्रश्न का मतलब यह है कि तुम किसी वस्तु से मुक्त होना चाहते हो। यहाँ यह वस्तु आस्था है। पहली बात तो यही है कि तुम इससे मुक्त क्यों होना चाहते हो ? तुम जो भी कर रहे हो, या इससे मुक्त होने की आशा कर रहे हो, वह इसे और बढ़ाती है। तुम जो कुछ भी करते हो. उसका कोई भी महत्त्व नहीं है। तुम्हारे लिए यह समस्या बनी ही क्यों है ? तुम इस स्थिति में नहीं हो कि जो मैं कह रहा हूँ, उससे इनकार कर सको, या स्वीकार कर सको। शायद तुमने अपने विचारों और आस्थाओं को नियंत्रित करने के लिए कुछ तरीके अपनाए थे, जो असफल रहे। मंत्र पढ़ने, याग करने और प्रार्थना करने से तुम्हें कोई सहायता नहीं मिली है। कारण चाहे जो भी हो, तुम अभी तक अपने विचारों को नियंत्रित नहीं कर सके हो। बस यही सब कुछ है।

लेकिन मंत्रों के उच्चारण तथा अन्य धार्मिक कर्मों से विचार शांत होते से लगते हैं........।

☐ यहाँ तक कि जब तुम अपने विचारों को देख तक नहीं सकते, तो भला नियंत्रित कैसे कर सकते हो। अपने विचारों का अवलोकन करना कैसे संभव है ? तुम इस तरह से बात कर रहे हो, मानो तुम्हारे अंदर विचारों से अलग कुछ अन्य तत्त्व भी हैं। यह एक भ्रम है। ये तुमसे अलग नहीं हैं। यहाँ कोई विचारक नहीं है। विचार तुम्हें कोई नुकसान नहीं पहुँचा सकते। यह तुम्हारी पृथकतावादी संरचना है, जो विचारों को नियंत्रित, प्रतिबंधित और दबाने की कोशिश करती है। यही समस्या है। विचार स्वयं कोई नुकसान नहीं कर सकते। जब तुम विचारों के साथ कुछ खिलवाड़ करते हो, तभी वे तुम्हारे लिए कोई समस्या पैदा करते हैं।

● **ऐसा लगता है कि आपको सुनना मेरे लिए अब समस्या पैदा कर रहा है।**

□ तुम कहते हो कि तुम सुन रहे हो, जबकि मैं जब बोलता हूँ, तो तुम कुछ भी नहीं सुन रहे होते। तुम मुझे नहीं सुनते, बल्कि केवल अपने विचारों को सुनते हो। मुझे इसके बारे में कोई भ्रम नहीं है। तुम न तो मुझे सुन सकते हो और न ही किसी अन्य को। मुझे यह बताने की कोशिश करना व्यर्थ है कि तुम सतर्क और अच्छे श्रोता हो। मैं कोई मूर्ख नहीं हूँ।

● **आपका यह कहना मैं समझ नहीं पाया कि मैं आपको सुन नहीं रहा हूँ। मुझे ऐसा लगता है कि आपको सुन रहा हूँ। साथ-ही-साथ उसके बारे में सोच भी रहा हूँ। क्या ऐसा करना संभव नहीं है?**

□ यह असंभव है। केवल एक ही क्रिया तुम्हारे लिए संभव है और वह है—सोचना। विचारों का जन्म ही अपने आप में क्रिया (एक्शन) है। जो विचारक यह कहता है कि वह कारण और परिणाम को देख रहा है, अपने आप में ही विचार है। विचार विचारक एवं उसके विचारों के बीच अंतराल (स्पेस) पैदा करते हैं। और अपने आपसे कहते हैं कि "मैं अपने विचारों को देख रहा हूँ।" क्या यह संभव है? अतीत में क्या हुआ, यह सोचना छोड़कर तुम वर्तमान क्षण के अपने विचारों को देखने की कोशिश करो। मैं तुमसे वह करने को कह रहा हूँ, जो बिलकुल ही सरल है। यदि तुम मुझे यह बता सकोगे कि विचारों को किस प्रकार देखा जाए, तो मैं तुम्हारा शिष्य बन जाऊँगा। मैं तुम्हारे प्रति अत्यंत आभारी होऊँगा। तुम अपने विचारों को देखने की बजाय मुझे देखते हो। यदि तुम मंत्र को दोहराते हो, तो वह भी विचार है। उस मंत्र का बार-बार उच्चारण करना अगला विचार है। यह सोचना कि इस तरह के विचारों को दोहराते जाने से तुम अपनी इच्छित स्थिति तक नहीं पहुँच सके हो, तो यह अगला विचार है। नए मंत्र या नई तकनीकी के बारे में सोचना फिर से अगला विचार है। विचार इसके सिवाय और क्या है? मैं खुद जानना चाहता हूँ।

● **लेकिन सभी धर्मों ने अवांछित विचारों को दबाने और नियंत्रित करने पर जोर दिया है, अन्यथा हम सब जानवरों के स्तर तक गिर जाएँगे।**

□ सदियों से तुम्हारे धर्मगुरु तुम्हारे दिमाग में यह भरते रहे हैं कि हमें अपने विचारों को नियंत्रित करना चाहिए। यदि तुम नहीं सोचोगे, तो तुम शव हो

जाओगे। बिना सोचे धर्मगुरु भी तुमसे विचारों को नियंत्रित करने के लिए नहीं कह पाएँगे। अन्यथा वे कंगाल हो जाएँगे। वे इसलिए धनी हुए हैं, क्योंकि वे दूसरे के विचारों को नियंत्रित करने का उपदेश देते हैं।

● **लेकिन निश्चित रूप से जिन तरीकों से विचारों को नियंत्रित किया जाता है, उनमें गुणवत्ता का बहुत फर्क है।**

□ तुमने मनमाने ढंग से यह अंतर किया है। चिंतन जीवन का अंग है और जीवन ऊर्जा है। एक गिलास बीयर पीना या एक सिगरेट पीना बिलकुल उसी तरह है, जैसे बार-बार प्रार्थना करना, धर्मग्रंथों को पढ़ना, शराबखाने जाना या मंदिर जाना। ये सब बिलकुल एक हैं। ये 'क्विकफिक्स' (शीघ्र जोड़ने वाली) हैं। तुम प्रार्थना या मंदिर को विशेष समझते हो, क्योंकि तुम पूर्वाग्रह से ग्रस्त हो और यही तुम्हें उन लोगों से विशेष अनुभव कराता है, जो हमेशा शराबखाने और कोठे पर जाते हैं।

● **इस प्रकार ये सभी मेरे बौद्धिक वातावरण को सुधारने और बदलने की कोशिश हैं.........।**

□ 'कंडीशनिंग' एक परंपरा है। संस्कृत में इसे संस्कार कहते हैं। तुम जो हो, वह परंपरा है। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि तुम इसे कैसे सुधारते हो। यह फिर भी बना रहता है। जीवन में सभी चीजें स्थायी हैं और विचारों पर आधारित 'कंडीशनिंग' की निरंतरता को बनाए रखने की कोशिश प्रकृति का एक रोग है। तुम मनोविज्ञान और रोग का इलाज इस तरह से करते हो, मानो ये दोनों अलग हैं। जबकि केवल रोग ही है। वह संस्कार, वह कंडीशनिंग; जो तुम्हें तुम्हारे और जगत के बीच पृथकता का अनुभव देता है, एक रोगयुक्त कंडीशनिंग है।

तुम जिस 'कंडीशनिंग' की बात कर रहे हो, वह कहाँ है...... ? विचार कहाँ रहते हैं ? मस्तिष्क में रहने वाले विचारों का जन्म मस्तिष्क में नहीं होता। बल्कि मस्तिष्क तो एंटिना की तरह है, जो एक सामान्य ध्वनि-तरंग और सामान्य विचार-क्षेत्र से विचारों को ग्रहण करता है।

तुम्हारी सभी क्रियाएँ; चाहे वे ईश्वर के बारे में सोचते हों, या बच्चों को पीटते हों, एक ही चिंतन के स्रोत से पैदा होती हैं। विचार अपने आप में कोई नुकसान नहीं पहुँचाते। जब तुम कुछ पाने के लिए इन विचारों को नियंत्रित करने की, काटने-छांटने की या उपयोग करने की कोशिश करते हो, तब तुम्हारी

समस्या शुरू होती है। जो कुछ भी तुम इस दुनिया में पाना चाहते हो, उसके लिए विचारों का उपयोग करने के सिवाय दूसरा कोई सहारा नहीं है। लेकिन जब तुम ब्रह्म, परमानंद और प्रेम जैसी अस्तित्वहीन चीजों को विचारों के माध्यम से पाना चाहते हो, तब तुम्हें केवल एक विचार के विरुद्ध दूसरे विचार को खड़ा करने में सफलता मिलती है और इस प्रकार अपने और विश्व के लिए दुःख पैदा करते हो।

लेकिन जब तुम्हारे ये विचार भय और आशा के दबाव के बावजूद अपनी इच्छित वस्तु को नहीं पा पाते, तब तुम 'आस्था' की ओर जाते हो। भला आस्था या विश्वास की जरूरत ही क्या है? जब आस्था तुम्हें कहीं नहीं पहुँचा पाती, तब तुमसे कहा जाता है कि तुम अपने अंदर विश्वास पैदा करो। दूसरे शब्दों में तुममें आशा होनी चाहिए। जब तुम ईश्वर, परमानंद, मन की शांति या साकार वस्तु जैसे आनंद की खोज करते हो, तब तुम आशा, विश्वास और आस्था पर पूरी तरह निर्भर होने लगते हो। यह निर्भरता ही तुम्हारी असफलता का प्रमाण है, जो तुम्हें मनचाहे परिणाम नहीं देता।

● विचार, कंडीशनिंग और जिसे हम इच्छा कहते हैं, इसके बीच क्या संबंध है?

□ सामान्य तौर पर तुम्हारे विचारों की तरह ही तुम्हारी इच्छाओं को भी किसी भी कीमत पर दबाना और नियंत्रित करना होगा, यह विधि केवल धर्मगुरुओं को समृद्ध करती है। भला तुम "एक इच्छारहित स्थिति" किसी भी प्रकार क्या चाहते हो? किसलिए? मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि यदि तुममें इच्छाएँ नहीं रहेगी, तब तुम कब्रिस्तान में एक शव की तरह ले जाए जाओगे।

धर्मगुरुओं ने हमें बताया है कि इच्छाओं का होना गलत है। इच्छाओं को दबाकर या बदलकर इच्छाओं की एक उच्चस्थिति में ले जाना है। यह बकवास है। या तो तुम इन इच्छाओं को पूरा करते हो या इन इच्छाओं को पूरा करने में असफल रहते हो। यही मुख्य समस्या है। इन दोनों ही स्थितियों में इच्छाएँ पैदा होंगी। कुछ न करना भी अर्थहीन है। यह कुछ (कुछ-न-कुछ) प्राप्त करने की तुम्हारी सामान्य नीति का ही एक अंग है। इन इच्छाओं को अपने आप ही जलकर नष्ट होना है। सरकार या कंडीशनिंग को अपने आप में ही जलकर नष्ट होने की आवश्यकता है, जिसे देखा नहीं जा सकता। तुम इच्छाओं को कभी नहीं

देख सकते। यदि इच्छाओं को देखोगे, तो वह तुम्हें अंधा बना देगा। तुम्हारी संस्कृति, तुम्हारे दर्शन और तुम्हारे समाज ने तुम्हें 'कंडीशंड' कर दिया है और अब तम सोचते हो कि तुम इस 'कंडिशनिंग' को बदल सकते हो, या कुछ सुधार सकते हो। यह तुम्हारे या समाज के लिए असंभव है।

● **हमें कंडीशनिंग से स्वतंत्र नहीं होना चाहिए। ऐसा सोचना भी बहुत डरावना लगता है। हम बहुत असुरक्षित हैं।**

□ जो भी विचार जन्म लेते हैं, उन्हें मरना ही है। इसे ही इच्छा-मृत्यु कहते हैं। यदि विचार मर नहीं सकते, तो फिर से जन्म भी नहीं ले सकते। इसे मरना ही है और इसी के साथ तुम भी मरते हो। लेकिन तुम प्रत्येक विचार और श्वास के साथ नहीं करते। तुम प्रत्येक विचार को अगले विचार से जोड़ते हो और इस प्रकार एक झूठी निरंतरता बनाते हो। यही निरंतरता तुम्हारी समस्या है। तुम्हारी असुरक्षा की भावना जन्म लेती है—विचारों की स्थायी प्रकृति का सामना करने से इनकार करने के कारण। उन लोगों से बात करना थोड़ा आसान है, जिन्होंने विचारों को नियंत्रित करने की कोशिश की है, जिन्होंने कुछ साधना की है, क्योंकि उन्होंने इसकी व्यर्थता का अनुभव किया है और वे यह समझ सकते हैं कि वे कहाँ भटके हुए हैं।

● **इसका मतलब यह हुआ कि हमारे लिए जो नैतिक संकट पैदा हुआ है, वह परंपरा और कंडीशनिंग के कारण है.....।**

□ केवल वही व्यक्ति नैतिकता की बात कर सकता है, जो अनैतिक हो। मेरे लिए अनैतिकता जैसी कोई चीज नहीं है। मैं पीठासीन होकर नैतिकता का उपदेश नहीं दे सकता। मैं कोई अनैतिक आधार लेता ही नहीं। जो नैतिकता, प्रेम और करुणा की बात करते हैं, वे धोखेबाज हैं।

तुम्हारी नैतिकता या इसकी कमी का कोई महत्त्व नहीं है, यदि इसकी तुलना इस सच्चाई से की जाए कि "तुम मर चुके हो"। तुम अपनी इन्हीं मृत-स्मृतियों से निरंतर क्रियाशील हो। स्मृति एक-सी पुरानी मूर्खतापूर्ण चीज को दोहराने से अधिक कुछ नहीं है। जो तुम जानते हो या जान सकते हो, वह स्मृति है और यही स्मृति विचार है। तुम्हारे अविराम विचार तुम्हें केवल निरंतरता दे रहे हैं। तुम यह सब हमेशा क्यों करते रहते हो? यह उपयोगी नहीं है। इससे तुम अपने को थका रहे हो। यदि इसकी कोई जरूरत हो, तब तो ठीक है। भला तुम

क्यों अपने आपको अपनी क्रियाओं से अलग करते हो और हमेशा स्वयं से कहते रहते हो—"अब मैं खुश हूँ", "मैं मौजूद हूँ", "अब मैं अकेला हूँ", क्यों? तुम लगातार अपनी क्रियाओं और अनुभूतियों की परख करते हो और काटते-छांटते रहते हो—"अब मुझे ऐसा लग रहा है, अब मुझे वैसा लग रहा है", "मैं ऐसा होना चाहता हूँ", "मुझे वैसा नहीं करना चाहिए था" आदि-आदि। तुम हमेशा वर्तमान को भूलकर अतीत एवं भविष्य के बारे में सोचते रहते हो। तुम्हारी समस्याओं का कोई भविष्य नहीं है। तुम जो भी समाधान सोचते हो, वह भविष्य के लिए है, इसलिए व्यर्थ है। यदि कोई ऐसी चीज है, जो घट (घटना) सकती है, तो उसे अभी ही घटाना चाहिए। चूँकि तुम यह नहीं चाहते कि कोई चीज अभी घटे, तो तुम उसे भविष्य में ढकेल देते हो। वर्तमान की जगह पर तुम्हारे पास भय होता है। और इसके साथ ही इस भय से मुक्त होने के लए कठिन खोज शुरू होती है। क्या तुम सचमुच इस तरह की कोई आजादी चाहते हो? मैं कहता हूँ कि तुम नहीं चाहते।

जिस भी कारण से तुम जिस किसी भी वस्तु से मुक्त होना चाहते हो, वह वस्तु ही तुम्हें मुक्त कर सकती है। तुम्हें उसी वस्तु से मुक्त होना होगा, जिससे तुम मुक्त होना चाहते हो। तुम हमेशा ही परस्पर विरोधी युग्मों के साथ काम करते हो, अर्थात् हर एक से स्वतंत्र होने का अर्थ है—उसके विरोधी दूसरे से भी स्वतंत्र होना। परस्पर विरोधों के ढाँचे के अंतर्गत स्वतंत्रता नहीं है। इसीलिए मैं हमेशा कहता हूँ कि "तुम्हें कोई अवसर नहीं है......।" इसी तरह जो व्यक्ति नैतिकता से संबद्ध नहीं है, वह अनैतिकता में भी रुचि नहीं रखेगा। स्वार्थता का उत्तर स्वार्थता में है, उसकी विरोधी झूठी नि:स्वार्थता में नहीं। क्रोध से मुक्ति क्रोध में ही है, अक्रोध में नहीं। लालच से मुक्ति लालच में ही है, अलालच में नहीं।

धर्म का सारा व्यापार नैतिकता संबंधी नियमों के अतिरिक्त और कुछ नहीं है—हमें उदार, करुणामय और दयालु होना चाहिए। जबकि तुम हर समय लालची और निर्दयी बने रहते हो। पवित्र और अपवित्र जैसे नैतिकता के नियम समाज अपने हित के लिए बनाता है। इसमें धर्म जैसी कोई बात नहीं है। यह धार्मिक व्यक्ति तुम्हारे अंदर पुजारी या एक नियंत्रणकर्ता रख देता है। अब पुलिस की एक संस्था बना दी गई है। धार्मिक नियम और निंदाएँ जरूरी नहीं हैं। ये सब दीवानी और आपराधिक संहिता में हैं।

तुम्हे इन धार्मिक लागो की बिलकुल परवाह नही करनी चाहिए ये सब पुराने और खोटे हो गए हैं। लेकिन वे लोगों पर से अपनी पकड़ खोना नहीं चाहते। यह उनका व्यापार है। उनका जीवन-यापन दाँव पर है। एक पुलिस और धार्मिक व्यक्ति में कोई अंतर नहीं है। धार्मिक व्यक्ति की अपेक्षा पुलिस से व्यवहार करना मुश्किल है, क्योंकि उसको रिश्वत देनी पड़ेगी।

● **इन मूलभूत भ्रमों का निवारण करने के लिए आम आदमी की असहायता को अनेक धर्मों ने पहचाना है। जिज्ञासुओं को ऋषि, पैगंबर या अवतारों के पास भेजा जाता है। फिर भी आप स्वतंत्रता और प्रेरणा के स्रोत को ही अस्वीकार कर रहे हैं। क्या ऐसा नहीं है ?**

□ जब तुम बहुत तकलीफ में होते हो और बहुत विषाद में रहते हो, उसी समय शरीर सो जाता है। यह समस्या से निपटने का प्राकृतिक तरीका है। यद्यपि तुम जब 'जय' जैसे शब्दों को बार-बार दोहराते हो, तो गहरी निद्रा में चले जाते हो। तुम 'राम' जैसे शब्द की खोज कर लेते हो, इसे बार-बार दोहराते हो और कुछ लाभ प्राप्ति की आशा करते हो। पहली बात तो यह है कि तुमने राम की खोज की। राम ऐतिहासिक चरित्र के सिवाय कुछ नहीं है। मंदिर बनाकर तुम उसमें उनकी पूजा करते हो। राक्षस की परिकल्पना करने के बाद तुम राम की पूजा करते हो और फिर कहते हो कि तुम इससे अलग नहीं हो सकते। यदि तुम राम नाम जपते रहे, तो इससे मुझे कोई फर्क नहीं पड़ेगा।

किसी भी पवित्र नाम को बार-बार जपना ऊँचे ले जाने वाली कुछ क्षणिक वस्तु को प्राप्त करने का गंभीर प्रयास है, कुछ अधिक स्थायी वस्तु प्राप्त करने का प्रयास है........।

यहाँ स्थायी कुछ भी नहीं है। स्थायी आनंद और अबाधित सुख प्राप्त करने की कोशिश करना अपने शरीर का दम घोटना है, इसके साथ ज्यादती करना है। आनंद की खोज केवल तभी पूरी हो सकती है, जब स्नायु प्रणाली की संवेदनशीलता और ज्ञान को नष्ट कर दिया जाए। अस्तित्वहीन चीज की इच्छा रखना; जैसे— रोमांस, धर्म तथा अध्यात्म जैसी फालतू की चीजें उस झूठी निरंतरता को गति देते हैं, जो शरीर को नुक्सान पहुँचाती हैं। यह शरीर के रासायनिक संतुलन को बहुत अधिक बिगाड़ना है। यह शरीर; जो केवल अपने अस्तित्व की रक्षा और पुनर्निर्माण में रुचि रखता है, दु:ख और आनंद को समान भाव से ग्रहण करता

है। यह तुम हो, जो दुःख को रोकना चाहते हो और आनंद को बढ़ाना चाहते हो। शरीर आनंद और दुःख दोनों के प्रति एक जैसी ही प्रतिक्रिया दिखाता है- कराहना।

यह शरीर क्या चाहता है? यह कार्य करने के सिवाय कुछ नहीं चाहता। बाकी सारी चीजें विचार की उपज हैं। शरीर का आनंद और दर्द में स्वतः अपना कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। विभिन्न प्रकार के कंपन शरीर को भिन्न-भिन्न मात्रा में प्रभावित करते हैं, लेकिन वह तुम हो, जो इन्हें अच्छे और बुरे में विभाजित करते हो।

तुम निरंतर इन कंपनों की व्याख्या करते हो, जिसे तुम अनुभव कहते हो। तुम टेबल को छूते हो, वह कड़ा लगता है। तुम तकिये को छूते हो, वह नरम लगता है। तुम नारी की भुजा को छूते हो, वह कामुक लगती है। तुम दरवाजे की सांकल छूते हो, जो कामुक नहीं लगती। इंद्रिय गतिविधियों की अपनी व्याख्या के अतिरिक्त तुम्हारे पास और कोई रास्ता नहीं है कि तुम जान सको कि कौन-सी चीज कड़ी है या कामुक है। शरीर में अपनी क्रियाओं को स्वयं करते रहने का स्वाभाविक गुण होता है, जो तुम्हारे बिना किए ही होता रहता है। यह इसी तरह है, जैसे निद्रा की अवस्था में बिना तुम्हारे जाने यह शरीर करवटें लेता रहता है और तुम उसे नियंत्रित करने की कोशिश नहीं करते। शरीर स्वयं ऐसे करता रहता है।

तुम हर समय स्नायु प्रणाली की स्वाभाविक गतिविधियों में हस्तक्षेप करते रहते हो। जब कोई संवेदना तुम्हारी स्नायु प्रणाली को प्रभावित करती है, तब तुम पहला काम यह करते हो कि उसे एक नाम दे देते हो तथा इसे आनंद या दुःख की श्रेणी में रख देते हो। तुम्हारा दूसरा कदम यह होता है कि आनंददायी संवेदनाओं को तुम बनाए रखना चाहते हो तथा दुःखात्मक संवेदनाओं को रोकना चाहते हो। पहली बात तो यही कि संवेदनाओं को आनंद या दुःख के रूप में पहचानना ही अपने आप में दुःखपूर्ण है। दूसरे यह कि एक प्रकार की संवेदना (आनंदपरक) को बनाए रखना तथा दूसरे प्रकार की संवेदना (दुःखपूर्ण) को रोकना ही दुःखपूर्ण है। ये दोनों ही प्रक्रियाएं शरीर का दम घोंटती हैं। वस्तुओं की स्वाभाविक स्थिति में प्रत्येक संवेदना की अपनी गहराई और समयावधि है। आनंद को बढ़ाने तथा दुःख को रोकने से शरीर की संवेदनाएँ तथा उनके प्रति

प्रतिक्रियाएँ करने की क्षमता नष्ट होती है। इसलिए तुम जो कुछ भी कर रहे हो, वह इस शरीर के लिए बहुत दर्दनाक है।

यदि तुम इन संवेदनाओं को कुछ नहीं करते, तो पाओगे कि वे अपने आप मे ही घुल-मिल जाएँगे। जब मैं ''विचारों के आयनीकरण'' (आयोनाइजेशन ऑफ थॉट्स) की बात करता हूँ, तो उसका मतलब यही है। मेरी दृष्टि से यही जन्म और मृत्यु है। शरीर के लिए कोई मृत्यु नहीं है, केवल विखंडन है। चूँकि विचार पदार्थ हैं, इसलिए उससे उत्पन्न सारी इच्छाएँ भी पदार्थ हैं। इसलिए तुम्हारी तथाकथित आध्यात्मिक इच्छा का कोई अर्थ नहीं है। मुझे गलत मत समझो। मैं तुम्हारे द्वारा अपनी इच्छित वस्तु प्राप्त करने के लिए विचारों का उपयोग करने का विरोधी नहीं हूँ।

इस प्रकार शरीर की रुचि केवल अपने अस्तित्व को बनाए रखने में है। जीवन के लिए अस्तित्व एवं पुनरुत्पादन प्रणाली की आवश्यकता है। यही प्रकृति का तरीका है। जीवन अपने आपको फिर से उत्पन्न करना चाहता है, यह अलग विषय है। वह रास्ता; जिसके जरिए मनुष्य का यह शरीर जीवित रह सकता है और अपने जन्म को सुनिश्चित कर सकता है, वह केवल विचार है। इसलिए जीवित प्राणी के लिए विचार बहुत आवश्यक और यहाँ तक कि अनिवार्य है। विचार ही यह निर्धारित करता है कि कार्य है या कार्य नहीं है। सभी पशुओं में अस्तित्व संबंधी ये विचार होते हैं। लेकिन मनुष्य के मामले में इसे 'पहचानने' का जो तत्त्व शामिल हो गया है, उसने सभी बातों को बहुत अधिक उलझा दिया है। हमने संवेदना की स्वाभाविक कार्य प्रणाली पर अंतःहीन नामकरण (वरबलाईजेशन) को बहुत अधिक आरोपित कर दिया है।

यह शरीर किसी मनोवैज्ञानिक या आध्यात्मिक मामलों में बिलकुल भी रुचि नहीं रखता। इसके लिए तुम्हारे द्वारा बहुप्रशंसित आध्यात्मिक अनुभव का कोई मूल्य नहीं है। सच्चाई तो यह है कि ये सब शरीर के लिए दर्द देने वाले हैं। प्रेम, दया, अहिंसा, सद्भाव तथा परमानंद जैसी सारी चीजें; जो धर्म और मनोविज्ञान ने मनुष्य के सामने प्रस्तुत की हैं, वे सभी इस शरीर में केवल तनाव ही पैदा करती हैं। सभी संस्कृतियों ने; चाहे वह पूर्वी हो या पश्चिमी, मानवता के लिए असंतुलित स्थिति तैयार की है, और उसे सनकी व्यक्ति बना दिया है। निर्दयी होने के स्थान पर, जो तुम हो, तुम इसके विरुद्ध करुणामय होना चाहते

हो, जो झूठा है। ''हमें ऐसा होना चाहिए'', इस पर जोर देने से केवल तनाव बढ़ता है। इससे जो हम सचमुच में हैं, उसकी गति बढ़ जाती है। प्रकृति में हम पाते हैं कि पशु एक समय में हिंसक और भयानक हो जाते हैं तथा दूसरे ही समय दयालु और उदार हो जाते हैं। उनके लिए कोई विरोधाभास नहीं है। लेकिन मनुष्य से कहा गया है कि उसे हमेशा अच्छा, दयालु और प्रिय बने रहना चाहिए तथा लालची और हिंसक नहीं होना चाहिए। हम यथार्थ के केवल एक ही पक्ष पर जोर देते हैं। अतः पूरे दृश्य को गड़बड़ कर देते हैं। एक के बिना दूसरे को प्राप्त करने की कोशिश मनुष्य को तनावपूर्ण तथा बहुत दुःखी बना रही है। मनुष्य को जीवन में आवश्यक हिंसा बरतनी चाहिए। जीने के लिए तुम्हें मारना चाहिए। जीवन का एक रूप दूसरे पर निर्भर करता है। इसके बाद भी तुम हिंसा की निंदा करते हो।

● यदि आप बुरा न मानें तो मैं आपसे एक अन्य विषय पर चर्चा करना चाहूँगा। वह यह कि गहरी निद्रा और मृत्यु के बीच क्या संबंध है। दोनों ही मामलों में 'मैं' का लोप हो जाता है। इसके बाद भी दोनों अलग-अलग मालूम पड़ते हैं।

□ तुम गहरी निद्रा के बारे में बात क्यों करते हो? यदि गहरी निद्रा जैसी कोई चीज है, तो फिर सोए हुए व्यक्ति के द्वारा इसके बारे में कुछ भी जानना असंभव है। इसलिए गहरी निद्रा के बारे में बात मत करो। यह एक ऐसी चीज है, जिसे तुम कभी नहीं जान सकोगे। सही, स्वाभाविक और अच्छी नींद शरीर के लिए जरूरी है। और इसे तुम्हारे 'मरे हुए कल' जैसे काव्यात्मक कूड़ा-करकट से कुछ नहीं लेना-देना। गहरी निद्रा या चिर शांति के क्षणों में पूरा शरीर मृत्यु की प्रक्रिया से गुजरता है। और हो सकता है कि वह ऊर्जा और अपने सामान्य चलने की स्थिति में फिर से न आए। यदि ऐसा होता है और शरीर पुनर्जीवित होता है, तो इसका अर्थ हुआ कि शरीर ने अपने आपको पुनर्नवा और पुनर्जीवित करने की क्षमता को नहीं खोया है। इस मृत्यु के बाद जो बचता है, वह स्वयं पुनर्जीवन के बाद आगे बढ़ने के लिए स्वतंत्र है। सच तो यह है कि अपनी प्रत्येक साँस के साथ तुम जीते और मरते हो। मृत्यु और पुनर्जन्म का यही अर्थ है।

तुम्हारी सोच की संरचना मृत्यु के यथार्थ को नकारती है। वह किसी भी

कीमत पर अपनी निरंतरता चाहती है। मैं किसी गहरी निद्रा या अन्य किसी सिद्धांत के बारे में नहीं बता रहा हूँ, बल्कि केवल इसका संकेत कर रहा हूँ कि यदि तुम बहुत गहरे जाते हो तो 'तुम' गायब हो जाते हो। शरीर वास्तविक चिकित्सकीय मृत्यु की प्रक्रिया से गुजरता है और कुछ मामलों में तो यह शरीर स्वयं को पुनर्नवा भी करता है। ऐसे समय में निजीपन का सारा इतिहास, जो शरीर के जींस संरचना में स्थित होता है, शीघ्र ही अपने आपको जीवन से अलग कर लेता है और अपनी ही धुन में मग्न हो जाता है। इसके बाद से यह अपने आपको किसी भी अन्य वस्तु से अलग नहीं कर सकता।

तुम अपनी सामान्य कृत्रिम निद्रा में जो अनुभव करत हो, वह प्रकृति है, जो तुम्हारे विचारों को दबा देती हैं, ताकि तुम्हारा शरीर और मस्तिष्क विश्राम कर सके। लेकिन यदि विचारों को सबसे गहरे तल में प्रभावशाली तरीके से नही दबाया गया, तो निद्रा नहीं आएगी। लेकिन गहरी निद्रा के बाद शरीर के लिए अधिक निद्रा की जरूरत नहीं रहती। ऐसी स्थिति में ''अब मैं सो रहा हूँ'' या ''अब मैं जाग गया हूँ'' जैसा ज्ञान नहीं रहता। तुम अपनी चेतना में जागने और सोने का कोई विभाजन नहीं कर पाते। इसलिए 'विचाररहित स्थिति' को सिद्धांत रूप देने में परेशान मत होओ। जैसे ही विचार समाप्त होते हैं, तुम मर जाते हो। इससे पहले तक विचाररहित स्थिति की सभी बातें अपने विचारों के ही व्यर्थ उत्पाद हैं, जो विचाररहित स्थिति पर विश्वास करने और खोज करने के लिए अपनी निरंतरता को बनाए रखने का प्रयास करते हैं। यदि तुमने विचाररहित स्थिति में रहने की कल्पना की है, तो इसका मतलब है कि उस समय भी विचार थे।

● **योगी कहते हैं कि सोते समय अवचेतन की स्थिति में भी जागृत चेतना संभव है।**

□ इस तरह की किसी भी वस्तु का अनुभव करने के लिए तुम्हें किसी योगी की तकनीक का अभ्यास करने की जरूरत नहीं है। नशीली दवाइयाँ लेकर भी तुम इस तरह के सभी अनुभव प्राप्त कर सकते हो। मैं योग की बजाय नशीली दवाइयों का पक्ष नहीं ले रहा हूँ। मैं केवल यह बता रहा हूँ कि सभी अनुभव विचारों से जन्म लेते हैं और ये सभी समानांतर रूप से जरूरी हैं। यदि तुम इन योगों या नशीली दवाइयों से उत्पन्न स्थिति को परमानंद, बहुत महत्त्वपूर्ण

या फिर सामान्य अनुभव से अधिक कुछ भी आनंददायक कहते हो, तो तुम अपने विचारों को अभिव्यक्त करके अपने अहम् तथा पृथकतावादी ढाँचे को मजबूत बना रहे हो। ये विचार संवेदनाओं को ऊँचे या नीचे तथा सुखदायी या दुखदायी बनाते हैं। तुम ऊर्जा के रूप में जो भी अनुभव करते हो, वह विचारों से उद्भूत ऊर्जा जीवन की ऊर्जा नहीं है।

● आप यह जो कह रहे हैं, वह तो उसके विपरीत ही है, जो धर्म और संतों ने कहा है.....।

□ गुरु जो भी चाहें कह सकते हैं। इसी तरह किताबें भी वे लिख सकते है, जो वे चाहें। ऐसा करना ही उनके लिए फायदेमंद है। वे एक गंदे बाजार में बैठे हुए हैं, जो अपना कूड़ा-कर्कट बेच रहे हैं।

● लेकिन वे कहते हैं....।

□ उन्हें भूल जाओ। आखिर तुम क्या हो? तुम्हें क्या कहना है? तुम्हें कुछ नहीं कहना है। बैठकर दूसरों के उद्धरण देना आसान है। लेकिन उसमें कहीं कोई हित नहीं होगा।

देखो, इस स्थिति में यहाँ कोई विभाजन नहीं है। तुम्हारी स्थिति ऐसी है कि मैं तुम्हारे अंदर कुछ संचार नहीं कर सकता और तुम उस सच्चाई को स्वीकार नहीं कर सकते। तुम तो इससे भी एक कदम आगे चले गए और तुमने अपने बाहर एक अविभाज्य स्थिति तैयार करके अपनी समस्या को और जटिल बना लिया है। इसी से अपने बाहर एक अविभाजित स्थिति लाना चाहते हैं। नतीजा है—तुम्हारी खोज। वह एक चालबाजी है। शांति की खोज करना शरीर की स्वाभाविक शांतिपूर्ण स्थिति में विघ्न डालना है। तुम्हारे ज्ञान और खोज अर्थहीन हैं, क्योंकि विभाजन के अंदर कुछ नहीं है, जो तुमने अपने चारों ओर बना रखा है।

आप कुछ महान गुरुओं के कुछ महान उपदेशों को निरस्त करते हैं। आप मानवता की इस संपूर्ण आध्यात्मिक विरासत को इतनी निष्ठुरता से अस्वीकार कर देते हैं। क्या इसका कोई कारण है?

□ जहाँ तक तुम्हारा संबंध है, यह सब व्यर्थ है। यह बिना भोजन के भोजन की सूची है। ये सब बेचने के तरीके हैं। इसी का प्रमाण है—चापलूसी और व्यावसायिकता। इसमें कोई मूलभूत गलती है। यदि इसमें कुछ शुभ होता,

तो इससे कभी भी अशुभ पैदा नहीं होता। स्पष्ट है कि सभी धर्म झूठे हैं। सभी चीजें झूठी हैं—धर्म, आध्यात्मिकता, समाज, तुम, तुम्हारी संपत्ति, तुम्हारे उद्देश्य और मूल्य आदि सभी।

● **जैसा कि आप कह रहे हैं, हो सकता है कि सभी माध्यम गलत हों। लेकिन परमानंद का उद्देश्य एक मूलभूत आवश्यकता मालूम पड़ती है। क्या ऐसा नहीं है?**

□ परमानंद—यह क्या है? क्या तुम परमानन्द की स्थिति में हो? तुम अपने गुरु और मुंडक उपनिषद का उद्धरण देते हुए कहते हो कि आत्मा परमानंद है। यह गलत है, कबाड़ है। इन सबसे मुक्त होने के लिए इन सब बेहूदी बातों में तुम्हें उलझना नहीं है। संयम की प्रशंसा करने के लिए तुम्हें भूतपूर्व शराबी होना जरूरी नहीं है।

● **लेकिन इन धर्मग्रंथों को पढ़ना इतना असाधारण है, ये सब इतने प्रेरणास्पद हैं....।**

□ इन शब्दों का हमारे लिए क्या अर्थ है? संस्कृत के इन सभी शब्दों का हमारे लिए क्या मतलब है। जो तुमने पढ़ा है, उन्हें दोहराओ मत। जिस तरह तुम अभी तुरंत वास्तव में काम कर रहे हो, क्या उसके बारे में कहने के लिए तुम्हारे पास कुछ है? यही वह है जो बहुत महत्त्वपूर्ण है। वह नहीं, जो हमारे शंकराचार्य या किसी और ने कहा है। मैं तुम्हें कुछ सिखाने के लिए नहीं हूँ। यह कोई अध्यापकीय या प्रशिक्षण का अभ्यास नहीं है। तुमने यहाँ आने का निर्णय लिया और तुम इस तरह के प्रश्न पूछ रहे हो, इसका मतलब यही है कि उन गुरुओं और धर्मग्रंथों से तुम्हारा मन नहीं भरा। क्या ऐसा नहीं है? अगर तुम यहाँ नहीं आते, तो कहीं और जाते। शब्दों का तुम्हारे लिए धुँधला और अदृश्य अर्थ है; अन्यथा तुम्हारे लिए उनकी कोई उपयोगिता ही नहीं है।

● **ये सब बातें मेरे लिए बहुत ही निराशाजनक हैं। क्या मैं अब जा सकता हूँ? हम कल और बातें करेंगे।**

□ बिलकुल। धन्यवाद।

तुम्हें अपने विचार से बचना है

दिक् (स्पेश) कहाँ है ? क्या इन चार दीवारों के बिना भी दिक् है ? कौन-सी चीज है, जो दिक् का निर्माण करती है ? इस बात को मत दोहराना कि दूसरे ने इसके बारे में क्या कहा है ? क्या बिना विचार के दिक् का अस्तित्व हो सकता है ? विचार जिस तरह काल को जन्म देते हैं, उसी तरह दिक् को भी। जैसे ही विचार आते हैं, वैसे ही वहाँ काल और दिक् होता है।

विचार ने ही आने वाले कल की रचना की है। तुम निराशा का अनुभव करते हो, क्योंकि तुमने कल की आशा की रचना की है। तुम्हारे लिए केवल अभी की ही संभावना है। आशा की कोई आवश्यकता नहीं है। न तो आत्म की ओर न ही आत्मा की बात सही है। मैंने इसे जानने की बहुत कोशिश की। दार्शनिकों ने गलत तरीके से इन दोनों को एक साथ रख दिया है।

विचार शरीर है, विचार जीवन है और विचार कर्म है। तुम विचार हो। विचार ही तुम हैं। अगर विचार नहीं है, तो तुम भी नहीं हो। यदि विचार नहीं है, तो विश्व भी नहीं है।

● **हे भगवान्! क्या बुरी स्थिति है। मैं अपने आपको इन सबसे कैसे बचा सकता हूँ ? ऐसा सोचना भी बहुत दुर्भाग्यजनक है।**

□ तुम्हें अपने ही विचार से बचना है। तुम्हें साधु-संतों से बचना है उद्धारकों से बचना है। यदि ऐसा चाहते हो, तो वह अभी ही होना चाहिए। मेरे शब्द पागलपन को बेध नहीं सकते। यह आध्यात्मिक खोज का ही पागलपन है, जो तुम्हें मेरे शब्दों के प्रति जड़ और असंवेदनशील बनाता है। पागल आदमी और रहस्यवादी के बीच बहुत पतली विभाजक रेखा है। पागल आदमी को इलाज के लायक समझा जाता है, जबकि रहस्यवादी भी उसी तरह एक बीमार आदमी होता है।

जयमाला, धर्मग्रंथ और माथे पर तिलक लगाने जैसी बातों को भूल जाओ। जब तुम स्वयं अपनी खोज की निरर्थकता का एहसास करते हो, तब तुम्हारे अंदर सारी संस्कृति राख हो जाती है। तभी तुम इसके बाहर होते हो। तुम्हारे लिए परंपराएँ समाप्त हो जाती हैं। कोई खेल बचा नहीं रहता। वेदांत का मतलब होता है—ज्ञान का अंत। तब फिर भला क्यों और किताबें लिखी जाती हैं, क्यों और स्कूल खोले जाते हैं, क्यों और उपदेश दिए जाते हैं। तुम जिन चीजों को चाहते हो, उन सबको अपने अंदर जला देने का अर्थ है—राख। जब तुम कुछ नहीं जानते, तब तुम बहुत कुछ कहते हो। जब तुम कुछ जान जाते हो, तब कहने के लिए कुछ नहीं रह जाता।

● आप कह रहे हैं कि अज्ञान की स्थिति चेतना का एक अन्य स्तर है। मेरे जैसे एक सामान्य सनकी आदमी को इससे क्या मतलब ?

□ चेतना का कौन-सा स्तर? चेतना का कोई भी स्तर नहीं होता। सोते समय और जागते समय की स्थिति की जागरूकता में कोई अंतर नहीं होता। अभी तुम यहाँ बैठे हो और स्वप्न देख रहे हो। यह स्वप्न बिना दृश्यों के नहीं आ सकता। जब तुम बिस्तर पर लेटे रहते हो, तब उसे स्वप्न कहते हो। जबकि आँखें खोलकर यहाँ बैठे हुए हो, तो उसे कुछ और कहते हो। बस यही है। मेरे लिए ये दृश्य हैं ही नहीं। चाहे मैं जागता रहूँ, या सोता रहूँ। मैं किसी भी समय किसी भी तरह के दृश्य नहीं बनाता। इसका कोई अर्थ नहीं है कि मेरी आँखे खुली हैं या बंद हैं। मेरी चेतना में केवल उन्हीं वस्तुओं की प्रतिच्छाया होती है, जो उनके सामने मौजूद रहते हैं। तुम उसे कोई नाम नहीं दे सकते। वह क्या है, यह जानने की इच्छा मुझमें है ही नहीं। इस तथाकथित जागतिक (वेकफुल) स्थिति के बारे में जानने या उसे अनुभव करने का मेरे पास कोई रास्ता नहीं है। मै इस जागतिक स्थिति की मशीनी व्याख्या कर सकता हूँ। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि ऐसा कोई है, जो इस जागतिक स्थिति के बारे में जान्ता हो। व्याख्याओं का कोई अर्थ ही नहीं होता। यही कारण है कि मैं कहता हूँ कि 'नहीं जानना' हमारी स्वाभाविक स्थिति है।

● अधिकांश धार्मिक और मनोवैज्ञानिक सिद्धांत जीवन को अधिक संतोषजनक बनाने के साधन के रूप में जागरूकता को विस्तृत करने या गहन बनाने की बात करते हैं। आप जो कह रहे हैं, क्या उसका संबंध इसी

तरह की किसी जागरूकता थेरेपी से है ?

□ नहीं। जागरूकता मस्तिष्क की एक सरल गतिविधि है। इसका उपयोग किसी भी परिवर्तन के लिए नहीं किया जा सकता। यहाँ तक कि थेरेपी से भी नहीं। हमने अपनी स्वाभाविक शारीरिक जागरूकता पर नामकरण की प्रक्रिया को थोप दिया है। हमारी यह स्वाभाविक जागरूकता पशुओं में भी उसी तरह होती है। जागरूकता तथा अपने अंदर परिवर्तन लाने की इच्छा; दोनों ही बिलकुल अलग बातें हैं। उस अंतर को तुम नहीं समझ सकते, क्योंकि समझने वाले के बिना समझ नहीं होती। क्या तुम स्मृति और विचारों के माध्यम के अतिरिक्त और किसी के जरिए चेतन हो सकते हो? स्मृति ज्ञान है। यहाँ तक कि तुम्हारे अनुभव भी स्मृति हैं। उद्दीपन (स्टीमूलस) और प्रतिक्रिया (रिस्पांस), दोनों एक ही क्षण हैं। इन्हें बिलकुल अलग नहीं किया जा सकता।

दूसरे शब्दों में यहाँ तक कि तुम प्रतिक्रिया से उद्दीपन को अलग नहीं कर सकते। इनके बीच कोई विभाजक रेखा नहीं हैं, सिवाय तब, जबकि विचार आकर ऐसा करें। स्मृति और ज्ञान, जो विचार हैं, ने यह मैकेनिज़्म तैयार की है। अपने आपको बनाए रखने का इसके पास केवल एक ही रास्ता है कि यह ज्ञान इकट्ठा करे, अधिक-से-अधिक जाने तथा अधिक-से-अधिक प्रश्न पूछे। जब तक तुम कुछ ढूँढ़ते रहोगे, तब तक तुम प्रश्न पूछते रहोगे और प्रश्न पूछने का यह मैकेनिज़्म नामकरण की प्रक्रिया की स्वीकृति को बढ़ाता रहेगा।

● **लेकिन हमें विचार को कम करके नहीं आँकना चाहिए। यह बहुत-सी आश्चर्यजनक वस्तुओं को पकड़ सकता है.........।**

□ विचार कभी भी जीवन की गति को नहीं पकड़ सकता, क्योंकि यह बहुत धीमा है। यह बिजली और गर्जन के समान है। ये दोनों घटनाएं एक ही साथ होती हैं, लेकिन आवाज प्रकाश की अपेक्षा धीरे चलती है, तुम तक बाद में पहुँचती है और यह भ्रम पैदा करती है, मानो ये दोनों अलग घटनाएं हों। वह केवल स्वाभाविक शारीरिक संवेदना और धारणा ही है, जो जीवन के प्रवाह के साथ चल सकती है। उस गति को पकड़ने का, बंद रखने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। हम चेतनता शब्द का उपयोग लापरवाही के साथ करते हैं, मानो हम इसे बहुत गहरे रूप से जानते हैं। जबकि सच्चाई यह है कि चेतनता एक ऐसी चीज है, जिसे हम कभी नहीं जान सकेंगे।

● **इसका मतलब यह हुआ कि विचारों को परे हटाकर जागरूकता की आशा करना गलत है ?**

□ जहाँ तक मेरा संबंध है, हम केवल स्मृति और ज्ञान के द्वारा ही चेतन होते हैं। अन्यथा दिक् और इसके द्वारा निर्मित पृथक चेतनता है ही नहीं। ऐसी कोई चीज नहीं होती कि किसी वस्तु को बिना ज्ञान के सहारे देखा जा सके। तुम्हें देखने के लिए दिक् की जरूरत है और विचार ही उस दिक् का निर्माण करते हैं। इसलिए दिक् के बारे में सिद्धांत बनाने की कोशिश करते हैं और इस दौरान 'टाइम-स्पेश-कन्टीन्यूम' की खोज करते हैं। समय का एक स्वतंत्र स्वरूप है। इसके और दिक् के बीच में निरंतरता आवश्यक है।

● **विचार ने ही समय का विरोधी शब्द ढूँढ़ा है...'शाश्वत अभी'। वर्तमान केवल युक्ति (आइडिया) के रूप में रहता है। जिस क्षण तुम वर्तमान को देखने की कोशिश करते हो, उसी क्षण वह अतीत के ढाँचे में समाहित हो जाता है।**

□ विचार अपनी निरंतरता की गति को बनाए रखने के लिए हर तरह की चालाकियाँ करेगा। इसकी सबसे महत्त्वपूर्ण तकनीक है—एक ही बात को बार-बार दुहराना। यह इसे स्थायित्व का एक भ्रम देता है। जैसे ही यह स्थायित्व समाप्त होता है, वैसे ही अतीत, वर्तमान और भविष्य की निरंतरता की व्यर्थता सामने आ जाती है। भविष्य अतीत की बदलती हुई निरंतरता के अतिरिक्त कुछ नहीं है।

● **ये दार्शनिक बातें चीजों को केवल उलझाने वाली लग रही हैं। क्या यह संभव नहीं है कि बादल और वृक्षों को देखते ही प्रकृति के साथ सरल ढंग से रहा जाए.... ?**

□ तुम जिस पेड़ की बात कर रहे हो, उसे विचार नहीं पकड़ सकते। यदि तुम्हारे विचार वृक्ष के प्रति छवि को बना या रोक नहीं सकते, तब वृक्ष को देखने के लिए तुम्हारे पास कोई तरीका नहीं रह जाता। दूसरे शब्दों में सच तो यह है कि वृक्ष ही तुम्हें देख रहे हैं, न कि तुम वृक्ष को। मैं इसे रहस्यमयी बनाने की कोशिश नहीं कर रहा हूँ। मुख्य बात यह है कि तुम्हारे वृक्ष के बीच गलत अलगाव किया गया है। यह नहीं कि कौन किसकी ओर देख रहा है। दार्शनिको द्वारा बताए गए सत्य तक पहुँचने के सकारात्मक या नकारात्मक दृष्टिकोण का

कोई अर्थ नहीं है। विचार द्वारा तैयार किया गया रिक्त स्थान बना ही रहता है। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि तुम कौन-सा तरीका अख्तियार करते हो।

जिसे तुम 'अनुभव' और 'संभव' आदि कहते हो, वह सब विभाजन विचार ने किया है। जो व्यक्ति अपनी चेतनता के स्तर पर इन सभी विभाजनों से मुक्त हो गया है, उसे कोई अनुभव नहीं होता, उसका किसी के साथ सद्भावपूर्ण सबंध नहीं होता, वह किसी चीज के बारे में प्रश्न नहीं करता, उसे आत्मज्ञानी होने का भ्रम नहीं होता और वह किसी अन्य व्यक्ति की सहायता के लिए अटका नहीं रहता।

मैं यह कहना चाह रहा हूँ कि ये सारी समस्याएँ संस्कृति ने पैदा की हैं। इस संस्कृति ने ही व्यक्ति के अंदर ये मनोवैज्ञानिक (न्यूरोटिक) विभाजन किए हैं। व्यक्ति ने अपने आपको कहीं अलग कर लिया है और उस आत्म-चेतनता का पहली बार अनुभव करता है, जिसका अनुभव पशु नहीं करते। इसने मनुष्य के जीवन को दुखदायी बना दिया है। यह मनुष्य के अंत की शुरुआत है।

वह व्यक्ति; जो सौभाग्य से आत्म चेतनता से स्वतंत्र होने में सक्षम है, स्वतंत्र अस्तित्व का अनुभव करता है। यहाँ तक कि वह अन्य वस्तुओं की तरह अपने आप से अलग हो जाता है। जो कुछ भी वातावरण में होता रहता है, वह बिना जानकारी के भी होता रहता है। यदि ज्ञान अपने आपको जला डाले, तो विभाजन करने वाली कोई भी वस्तु बची नहीं रह सकती।

जब विचार का जन्म होता है, तभी उसमें बिखराव आता है और उसका क्षरण भी होता रहता है। यही कारण है कि विचारों के लिए भड़ जमा लेना अस्वाभाविक नहीं है। व्यक्ति में विभाजित चेतनता को बनाए रखकर ही विचार शरीर की सामंजस्यपूर्ण कार्य पद्धति को रोक पाता है। मनुष्य को धार्मिक या मनोवैज्ञानिक आधार पर व्याख्यायित करने का अर्थ है---इस अद्भुत शरीर की असाधारण प्रज्ञा को अस्वीकार करना। यह विचारों की गति ही है, जो तुम्हें निरंतर तुम्हारी स्वाभाविक स्थिति से दूर ले जा रही है और तुम में विभाजन पैदा कर रही है।

यथार्थता का अनुभव करने की बात तो दूर, उसे आपस में बाँटने तक का क्या कोई रास्ता है ? चरम यथार्थता की बात भूल जाओ। तुम्हारे पास किसी भी वस्तु की यथार्थता का अनुभव करने का कोई तरीका नहीं है। प्रत्येक क्षण में

यथार्थता का अनुभव करने की इच्छा भी मस्तिष्क की विचारों द्वारा सम्मोहित स्थिति है।

● आपको सुनना हम लोगों के लिए बहुत कठिन है, क्योंकि जो कुछ आप कह रहे हैं, वह तो संप्रेषण के मूलभूत आधार को ही नष्ट कर रहा है...।

□ तुम किसी भी व्यक्ति को बिना व्याख्या के नहीं सुन सकते। 'विशुद्ध श्रवण की कला' जैसी कोई चीज नहीं होती। तुम बिना कुछ पाए यहीं बैठे हुए अपने शेष जीवन भर बातें कर सकते हो। उल्लेख के आम बिंदु के बिना, जो विचारों की एक अन्य खोज है, तुम किस प्रकार संप्रेषित कर सकते हो और सुन सकते हो? यह संभव ही नहीं है। सच तो यह है कि संप्रेषित करने जैसी कोई वस्तु है ही नहीं।

तुम संप्रेषण का उपयोग अपनी दु:खद स्थिति से बाहर निकलने की स्वतंत्रता के रूप में करते हो। केवल यही तुम्हारा उद्देश्य है। अपनी स्थिति से बाहर निकलना ही तुम्हारा उद्देश्य है। आखिर क्यों तुम अपनी स्थिति से बाहर निकलना चाहते हो? स्थिति से बाहर निकलने की तुम्हारी इच्छा ने ही तुम्हारी समस्या की शुरुआत की है। अपने आपको भार से मुक्त करने की इच्छा ही सच्ची समस्या है। मैं किसी बात की सिफारिश नहीं कर रहा हूँ, क्योंकि करना या न करना, दोनों की ही समाप्ति दु:खमय ही होगी। इसलिए कुछ न करना कुछ करने से अलग नहीं है। जब तक भार के बारे में तुम्हारा ज्ञान रहेगा, जिसके बारे में मैं मानता हूँ कि वह है ही नहीं, तब तक तुम इससे मुक्त होने के लिए जूझते रहोगे। इससे कुछ नहीं होगा। तुम जो कुछ भी करोगे, वह तुम्हारे स्वचालित विचारों का ही भाग होगा।

प्रसन्नता की तुम्हारी खोज ही तुम्हारी अप्रसन्नता को दीर्घकाल तक बनाए हुए है।

● जो कुछ भी आप कह रहे हैं, उसमें निश्चितता और अधिकार की झलक है। हम जानना चाहते हैं कि.....।

□ तुम किससे जानना चाहते हो? मुझसे नहीं, क्योंकि मैं कुछ नही जानता। अगर तुम यह मानते हो कि मैं हूँ, तब तुम बहुत बड़ी गलती कर रहे हो। मेरे पास जानने का कोई रास्ता नहीं है। तुम्हारे अंदर जो है, वह केवल ज्ञान की

गति है, जो अधिक-से-अधिक जानना चाहता है। तुम का यह पृथक ढाँचा केवल तब तक बना रहेगा, जब तक कि और जानने की चाहत बनी रहेगी। यही कारण है कि तुम ये प्रश्न पूछ रहे हो। न कि अपने लिए कुछ जानने के लिए प्रश्न पूछ रहे हो। तुम अपने आपसे ऐसा कुछ नहीं कह सकते, जो तुम्हारी दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति को बदल सके। भला, क्यों कोई घटना घटनी चाहिए या नहीं घटनी चाहिए?

● **मुक्ति की माँग चाहे वह आंतरिक हो या बाह्य, हमारे साथ लंबे काल से जुड़ी रही है। हमें यह बताया गया है कि यह इच्छा पवित्र और उदात्त है। क्या हमें धोखा दिया गया है?**

☐ मुक्ति की माँग ही तुम्हारी समस्या का कारण है। तुम अपने आपको मुक्त देखना चाहते हो। जो यह कह रहा है कि 'तुम मुक्त नहीं हो', वह वही है, जो तुमसे यह कह रहा है कि 'मुक्तता की स्थिति है', जिसके पीछे भागना चाहिए। लेकिन पीछे भागना दासता है—मुक्ति को नकारना है। मैं मुक्ति के बारे मे कुछ नहीं जानता, क्योंकि मैं अपने बारे में कुछ नहीं जानता कि मैं मुक्त हूँ या गुलाम या क्या हूँ। मुक्ति और आत्मज्ञान एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। क्योंकि मैं अपने आपको नहीं जानता और मेरी संस्कृति ने मुझे जो ज्ञान दिया है, उसके अतिरिक्त अपने आपको देखने के लिए मेरे पास कोई दूसरा रास्ता भी नहीं है, इसलिए मुक्त होने की इच्छा का प्रश्न ही नहीं उठता। मुक्ति के बारे में जो ज्ञान तुम्हारे पास है, वह ही मुक्ति की संभावना को नकारता है। जैसे ही तुम अपने आपको ज्ञान के द्वारा देखना बंद कर दोगे, वैसे ही उस आत्म से मुक्त होने की इच्छा समाप्त हो जाएगी।

● **हमारा सामान्य दिमाग इतना ज्यादा भरा हुआ है कि जो कुछ भी आप कह रहे हैं, उसकी प्रशंसा करनी थोड़ी मुश्किल है। केवल प्रशांत मस्तिष्क ही आपको समझने की शुरुआत कर सकता है। क्या ऐसा नहीं है?**

☐ मस्तिष्क की प्रशांतता हास्यास्पद है। मस्तिष्क की प्रशांतता जैसी कोई वस्तु नहीं होते। यह मुक्ति की इच्छा के द्वारा निर्मित दूसरी चालाकी है। मुख्य बात है—मुक्त होने की निरंतर माँग। इसके अतिरिक्त यहाँ कुछ नहीं है। तुम स्मृति से किस प्रकार और क्यों मुक्त होना चाहते हो? स्मृति अपरिहार्य है।

स्मृतियों का होना समस्या नहीं है, बल्कि इसका इस्तेमाल अपनी आध्यात्मिक इच्छाओं को पूरा करने या प्रसन्नता पाने के लिए करना समस्या है। स्मृति से स्वतंत्र होने की कोशिश करना बस कुछ छोड़ देना है और यह सब कुछ छोड़ देना ही मृत्यु है।

जानने लायक कुछ नहीं है। वक्तव्य तुम्हारे लिए एक बाधा है। जानना तुम्हारे लिए एक मिथक है। ज्ञान से मुक्त होने की तुम्हारी माँग ही वह है, जो समस्या पैदा कर रही है। जब तक तुम्हारे अंदर 'मुझे ऐसा बनना चाहिए' की भावना रहेगी, तब तक जो तुम वस्तुतः हो, वह बना रहेगा।

● **अतः एक अस्तित्वहीन व्यक्ति, समाज या स्थिति की कल्पना ही वह वस्तु है, जिसने मुझे आज भ्रम की इस स्थिति तक पहुँचा दिया है। मेरा विश्वास उन वस्तुओं पर है, जिनके बारे में मैं निश्चित नहीं हूँ। क्या यही है?**

□ हाँ, यही है। महान आदर्श, सबसे अधिक भव्य, परिपूर्ण और शक्तिशाली शायद ईश्वर ही है। यह भयभीत मस्तिष्क की खोज है। मानवीय मस्तिष्क ने अनेक विध्वंसकारी खोजें की हैं। इनमें सबसे विध्वंसकारी, जिसने तुम्हें सबसे अधिक भ्रष्ट किया है, वह है—ईश्वर की खोज। मानवीय चिंतन के इतिहास ने संतों, उपदेशकों, गुरुओं और भगवानों को पैदा किया है। लेकिन ईश्वर उन सबमें सबसे अधिक भ्रष्ट है। मनुष्य ने पहले ही अपना जीवन दुखदायी बना लिया है और धर्म ने उस दुःख को और भी बढ़ाया है। यह धर्म ही है, जिसने सचमुच में जीवन को दुखदायी बनाया है।

● **एक बात जो मैंने आपके और अन्य विचारकों के, विशेषकर जे. कृष्णमूर्ति के विचारों में समानता पाई है कि आप सभी विचारों की संरचना तथा उसके द्वारा हम सबको मूर्ख बनाए जाने की उसकी क्षमता पर जोर देते हैं। आखिर विचार इतने महत्त्वपूर्ण क्यों हैं?**

□ ये इसलिए महत्त्वपूर्ण हैं, क्योंकि विचार तुम्हारी प्रत्येक क्रियाओं को नियंत्रित करते हैं। लेकिन ठीक उसी समय इसे चेतना द्वारा नहीं समझा, नहीं देखा जा सकता। तुम विचार के बारे में सोच सकते हो, सिद्धांत बना सकते हो, लेकिन स्वयं विचारों को महसूस नहीं कर सकते और न ही उसके बारे में कुछ बता सकते हो। क्या तुम और तुम्हारे विचार दोनों अलग चीजें हैं? तुम विचारों

के 'बारे' में जानते हो, स्वयं विचारों को नहीं। क्या विचारों के बारे में तुम्हारे पास जो ज्ञान है, उससे हटकर विचारों का कोई अस्तित्व है? इन सबके बारे मे तुम यही कह सकते हो कि "मैं जानता हूँ। मुझे अपने विचारों का ज्ञान है। मुझे अपने अनुभव का ज्ञान है।" बस यही सब। तुम यही सब कुछ कर सकते हो। क्या इनसे भी अलग हटकर विचार हैं? विचारों के बारे में तुम्हारा जानना ही वस्तु है।

इस प्रकार तुमने विचारों के बारे में जो कुछ भी इकट्ठा किया है, वह ज्ञान है। उसके अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। तुम जो भी चीज देखते हो और जो कोई चीज को देखता है, वे सब विचार के बारे में इसी ज्ञान के भाग हैं। वह विचार है। 'मैं' एक अन्य विचार है। लेकिन विचारों का कोई व्यक्तिवादी मूल्य नहीं होता। यह तुम्हारा नहीं है, बल्कि यह वातावरण की तरह सबका होता है। ज्ञान सभी की संपत्ति है।

मैं यह बताने की कोशिश कर रहा हूँ कि निजता (इंडीवीजूयल) जैसी कोई बात होती ही नहीं। यह केवल ज्ञान का कुछ संग्रह मात्र है, जो विचार है, लेकिन वहाँ कोई निजत्व नहीं है। वस्तु के बारे में जो तुम्हारा ज्ञान है, वह सब वही है, जिनका तुम अनुभव कर सके हो। बिना ज्ञान के किसी भी तरह का अनुभव संभव नहीं है। तुम अनुभव और ज्ञान को अलग नहीं कर सकते। 'मैं' अलग नहीं है, बल्कि यह तुम्हारे ज्ञान की संपूर्णता का एक भाग है। लेकिन दुर्भाग्य से तुम इसी से चिपके रहते हो। तुम केवल अपने बारे में ज्ञात इसी ज्ञान को अलग करने में रुचि रखते हो, जिसे तुम अपना कहते हो? ज्ञान ही सब कुछ है। 'मैं' का अस्तित्व है ही कहाँ? तुमने 'मैं' को ज्ञान से अलग कर दिया है। यह एक भ्रम है।

ठीक इसी प्रकार आनंद के बारे में तुम्हारा जो ज्ञान है, उससे आनंद का अलग से कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। आनंद होता ही नहीं। स्वयं को प्रदीप्त (इल्यूमीनेशन) करने का विचार परिवर्तन से जुड़ा हुआ है। लेकिन कोई ऐसी चीज नहीं होती, जिसे बदला जा सके। परिवर्तन में हमेशा समय लगता है। बदलने के लिए, एक वस्तु को हटाकर उसके स्थान पर कोई दूसरी वस्तु लाने में समय लगता है। तुम अभी क्या हो और तुम क्या होना चाहते हो, ये दोनो समय से जुड़े हुए हैं। तुम कल आनंद प्राप्त करना चाहते हो।

मैं तुम्हें एक उदाहरण देता हूँ। तुम आनंदित होना चाहते हो, तुम आत्मरहित होना चाहते हो। तुम यह होना चाहते हो, तुम वह होना चाहते हो। इन दोनों के बीच का रिक्त स्थान समय से भरा हुआ है। अब तुम अपने प्रश्न को दोहराओ कि कैसे? तुम्हारा आनंद या आत्मरहितता हमेशा कल होती है, अभी तुरंत नहीं। इसलिए समय जरूरी है और समय ही विचार है। विचार करना क्रिया नहीं है, ग्रहण करना नहीं है, बल्कि चाहना है। तुम कुछ करने के लिए तैयार नहीं हो, बल्कि ध्यान करते रहते हो, जो इसके बारे में सोचता रहता है। तुम्हारे विचारों की संरचना, जो स्वयं तुम हो, समय से बाहर की किसी भी घटना को ग्रहण नहीं कर सकते। इस पलायनवादी तर्क का उपयोग सभी के द्वारा आध्यात्मिक मामलों में किया जाता है।

यह सब या तो भविष्य के जीवन में होता है, या फिर स्वर्ग में, अर्थात् कल। और चूँकि इन सब मामलों में हमें कल होता ही नहीं, इसलिए वर्तमान का अस्तित्व ही नहीं रह जाता। इसका अस्तित्व कहाँ नहीं रहता? विचारों में, जो अतीत है। 'तुरंत' आनंदित और आत्म रहित होने का प्रश्न ही नहीं है, क्योंकि 'तुरंत' है ही नहीं। यह केवल वर्तमान का अतीत में प्रक्षेपण है।

तुमने वृक्ष को कभी नहीं देखा है। बल्कि तुम्हारे पास वृक्ष का केवल ज्ञान भर है। तुम ज्ञान को देखते हो, वृक्ष को नहीं। आत्मरहित होने की तुम्हारी पूरी रुचि अतीत द्वारा परिचालित है। जब तक यह परिचालित रहेगी, तब तक यह आत्मकेंद्रित क्रिया होती रहेगी। यह तुम जितना ही ज्यादा करोगे, उतना ही ज्यादा स्वार्थी होते जाओगे। आनंदित या नि:स्वार्थी होने की तुम्हारी इच्छा बहुत स्वार्थ की बात है। न तो तुम स्वयं मुक्त होना चाहते हो और न ही यह चाहते हो कि अन्य लोग मुक्त हों। तुम अपने लिए ही मुक्ति चाहते हो। लेकिन इस प्रकार के दृष्टिकोण के द्वारा भला तुम्हें कैसे मुक्ति मिल सकती है। तुम मुक्त हो ही नहीं सकते।

ऐसा कुछ नहीं, जिसे समझा जाए

● **लेकिन हर काल के धर्मों, साधु और संतों ने हमें इसी बात के लिए प्रेरित किया है कि हम निःस्वार्थी बनें, आत्मसंयमी बनें और विनम्र बनें। इसलिए ऐसा संभव होना चाहिए। फिर आप इस तरह की चीजों के बारे में कैसे इतने निश्चित हो सकते हैं?**

□ क्योंकि मेरे लिए यह एकदम साफ है कि तुमने निःस्वार्थता के इस विचार की खोज वास्तविक स्वार्थता की रक्षा करने के लिए ही की है। चाहे तुम निःस्वार्थता में विश्वास करो या न करो, लेकिन सच तो यह है कि तुम हर समय स्वार्थी ही बने रहते हो। तुम्हारी यह तथाकथित निःस्वार्थता भविष्य के लिए है—कल के लिए। और जैसे ही कल आता है, वैसे ही तुम उसे अगले दिन के लिए, शायद अगले जन्म के लिए स्थगित कर देते हो।

इसे इस तरह से देखो। यह एक क्षितिज की तरह है। यथार्थ में यहाँ कोई क्षितिज नहीं है। तुम जैसे-जैसे क्षितिज की ओर जाते हो, वैसे-वैसे वह और आगे बढ़ता जाता है। यह केवल आँखों की सीमा ही है, जो क्षितिज का निर्माण करती है। लेकिन क्षितिज जैसी कोई वस्तु नहीं है। ठीक इसी प्रकार निःस्वार्थता जैसी भी कोई वस्तु नहीं है। मनुष्य ने पीढ़ियों में निःस्वार्थता के इस विचार द्वारा अपने को सताया है। और इसने पंडितों, पादरियों और नैतिकतावादियों जैसे लोगों के भरण-पोषण का सामान जुटाया है, जो निःस्वार्थता के विचार को बेचने का धंधा करते हैं।

मैं तुम्हारी या किसी की आलोचना नहीं कर रहा हूँ, बल्कि उस बेतुकेपन की ओर संकेत कर रहा हूँ, जो तुम करते रहते हो।

जब वह ऊर्जा, जो तुम निःस्वार्थता जैसी वस्तु को पाने के लिए खपा रहे हो, जिसका अस्तित्व ही नहीं है, विमुक्त हो जाती है, तब तुम्हारी समस्याएँ

बहुत सरल हो जाती हैं, चाहे वह समस्या कैसी भी क्यों न हो। तब तुम केवल भौतिक स्तर पर समस्याएँ पैदा करोगे। और मेरे अंदर केवल यही स्तर है।

● **हाँ, लेकिन उन लोगों के बारे में क्या कहना चाहेंगे, जो इस तरह की भ्रमात्मक चीजों की खोज न करके साधारण प्रसन्नता की खोज कर रहे हैं?**

□ प्रसन्नता के बारे में उनकी खोज आध्यात्मिक खोज से अलग नहीं है। ये सभी सुख की खोज में हैं। हाँ, यह जरूर है कि चूँकि आध्यात्मिक खोज इनमें से महानतम मानी गई है, इसलिए यह अंतिम प्रसन्नता है। हैं सभी प्रसन्नता ही।

● **इसका मतलब यह हुआ कि यह खोज भी समाप्त हो जानी चाहिए?**

□ 'समाप्त हो जानी चाहिए', मत कहो। स्वार्थ की समाप्ति की इच्छा स्वार्थ के पीछे भागने का ही एक अंग है, जो एक आनंददायक स्थिति—निःस्वार्थता ही है। इन दोनों का अस्तित्व ही नहीं है। यही कारण है कि तुम अंदर से दुखी रहते हो। आनंद की खोज तुम्हें दुखी बनाए हुए है। आध्यात्मिक लक्ष्य तथा आनंद की खोज दोनों एक ही हैं। दोनों मूलतः स्वार्थ हैं, आनंददायक खोज हैं। अगर तुम किसी तरह इस बात को समझ जाओ, तब तुम अपनी ऊर्जा का उपयोग उस दिशा में बिलकुल नहीं करोगे।

तुम जानते हो कि मैं दुनिया में सभी जगह रहा हूँ और मुझे ऐसा लगा है कि हर जगह के लोग बिलकुल एक ही जैसे हैं। उनमें कोई भी फर्क नहीं है। दुनिया के प्रत्येक व्यक्ति के लिए 'कुछ बन जाना' ही सबसे बड़ी बात है। वे सभी धनी बनना चाहते हैं, चाहे वह भौतिक दृष्टि से हो या आध्यात्मिक दृष्टि से। ये दोनों ही बिलकुल एक हैं। इनमें फर्क मत करो। तुम सोच सकते हो कि तुम श्रेष्ठ हो, क्योंकि तुम मंदिर जाते हो और पूजा करते हो। वे कुछ चाहते हैं, इसलिए मंदिर जाते हैं। तुम भी कुछ चाहते हो, इसलिए मंदिर जाते हो। इसलिए तुम दोनों ही बिलकुल एक जैसे हो। पहले तो तुम भावनात्मक लगाव के कारण जाते हो। लेकिन कुछ ही समय के बाद वह नित्य की क्रिया बन जाती है और वह तुम्हें उबाऊ लगने लगती है।

मैं यह सरल-सी बात बताने की कोशिश कर रहा हूँ कि तुम्हारी आध्यात्मिक और धार्मिक गतिविधियाँ मूल रूप में स्वार्थ की गतिविधियाँ हैं। यही मैं तुम्हें

बताना चाह रहा हूँ। तुम मंदिर में उसी उद्देश्य से जाना चाहते हो, जिस उद्देश्य से अन्य स्थानों पर, क्योंकि तुम कुछ पाना चाहते हो। यदि तुम कुछ नहीं पाना चाहते, तो फिर मंदिर जाने का कोई मतलब नहीं है।

● **लेकिन अधिकांश लोग मंदिर जाते हैं........**

□ तुम्हें इसकी चिंता क्यों है कि सारे लोग क्या करते हैं? यह तुम्हारी समस्या है और इसे तुम्हें ही हल करना चाहिए। पूरी मानवता के बारे में और दुनिया के करोड़ों लोगों के बारे में बेवजह परेशान मत होओ।

● **आप तो, अभी तक जो कुछ भी कहा गया है, उन सबका बड़ी निष्ठुरता से खंडन कर रहे हो। हो सकता है कि कुछ समय बाद लोग आपके कहे हुए का भी खंडन करें।**

□ यदि तुम में इतनी हिम्मत हो, तो मैं तुम्हें प्रणाम करने वाला पहला व्यक्ति होऊँगा। लेकिन तुम्हें इसके लिए अपने भगवद्गीता और उपनिषद जैसे पवित्र ग्रंथों पर निर्भर नहीं रहना चाहिए। तुम बिना अपने इन तथाकथित धर्मग्रंथों की सहायता के मेरे कहे हुए को चुनौती दो। तुममें इतना साहस नहीं है, क्योंकि तुम गीता पर निर्भर हो, अपने आप पर नहीं। इसलिए तुम कभी भी ऐसा करने मे सक्षम नहीं होओगे। यदि तुम में इतना साहस आ सकेगा, तब तुम ही केवल वह व्यक्ति होगे, जो मेरे कहे हुए को झूठा ठहरा सकोगे। गोआदापद जैसा महान संत ही ऐसा कर सकता था, लेकिन वह नहीं है। तुम गोआदापद तथा दूसरे के द्वारा कही गई बातों को केवल दोहरा रहे हो। जहाँ तक तुम्हारा संबंध है, ये सभी कथन अर्थहीन हैं। यदि गोआदापद जीवित होते और यहाँ बैठे होते, तो मेरी कही गई बातों का तेजी से खंडन कर सकते थे। लेकिन तुम ऐसा नहीं कर सकते। तुम अर्थहीन सामान्यीकरण से नहीं निकल पाते हो। तुममें इतनी क्षमता होनी चाहिए कि मेरी कही हुई बातों को अपने आधार पर गलत ठहरा सको। हो सकता है कि जो मैं कह रहा हूँ, उससे या तो तुम सहमत हो सकते हो या असहमत। लेकिन इसके आधार पर ही तुम ऐसा नहीं कर सकते।

मैं यह बता रहा हूँ कि केवल समस्याएँ ही हैं, उनका कोई समाधान है ही नहीं। यदि दूसरे ने यही बात कही होती, तो मैं उससे यही कहता कि तुम प्रश्न क्यों पूछ रहे हो और उसका समाधान यहाँ क्यों ढूँढ़ रहे हो। लोगों को भूल जाओ। मैं तुम्हारे बारे में बात कर रहा हूँ। तुम नए या बेहतर तरीके पाना चाह रहे

हो। लेकिन मुझसे इस बारे में कोई मदद नहीं मिलेगी। मैं कह रहा हूँ कि समाधान की चिंता मत करो, बल्कि यह जानने की कोशिश करो कि समस्या क्या है। समस्या ही समाधान है। वे तुम्हारी समस्याओं का समाधान नहीं करते। इसलिए फिर भला क्यों तुम किसी अन्य समाधान की ओर देखते हो? मेरे पास समाधान के लिए मत आओ। मेरे कहने का कुल अर्थ यही है। मैं जो कुछ भी कह रहा हूँ, उससे तुम एक समाधान बना लोगे और इस प्रकार तुम अपने समाधान की सूची में एक और समाधान जोड़ लोगे जो उस समय बिलकुल अर्थहीन सिद्ध होगा, तब तुम्हारी समस्या के सही समाधान की जरूरत पड़ेगी।

● **जो कुछ भी मैं कह रहा हूँ, वह मेरे लिए महत्त्वपूर्ण और सत्य है। यदि मैं तुम्हें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कोई बात बताऊँ, तो तुम उसे किसी सिद्धांत या तकनीक में परिवर्तित कर लोगे। यदि मैं तुम्हें ऐसी कोई सलाह दूँ, तो इसके द्वारा मैं अपने आपको ही झूठा बनाऊँगा।**

□ यदि कोई भी कहता है कि वह समाधान कर देगा, तो वह सच्चा नहीं है। तुम यह पक्का जानो कि वह ऐसा आत्मसंतुष्टि के लिए कर रहा है। सरल-सी बात यह है कि वह अपनी वस्तु को बाजार में बेचना चाह रहा है और वह तुम्हें यह विश्वास दिलाना चाह रहा है कि उसकी यह वस्तु अन्य वस्तुओं से बेहतर है। लेकिन उसी के साथ यदि एक ऐसा आदमी आता है, जो कहता है कि समाधान का कोई तरीका नहीं है, तब तुम उससे एक अलग सिद्धांत बना लेते हो। यह सब कुछ अपनी ही छाया को बार-बार पकड़ने का व्यर्थ प्रयास है। इसीलिए तुम अभी तक कहीं नहीं पहुँच सके हो। बस यही समस्या है।

इन सभी से तुम अनिवार्य रूप से यह निष्कर्ष निकालते हो कि स्थिति निराशाजनक है। सच तो यह है कि तुम निराशाजनक स्थिति का निर्माण इसलिए करते हो, क्योंकि तुम सही मायनों में भय, शत्रुता, ईर्ष्या और स्वार्थ से मुक्त नहीं होना चाहते। यही कारण है कि तुम अपनी स्थिति को निराशाजनक अनुभव करते हो। ऐसा केवल स्वार्थ, लोभ और क्रोध पर ही निर्भर है, न कि इसके विरोधी; जैसे—निःस्वार्थता, उदारता और दयालुता पर। समस्या; जैसे स्वार्थता की, इसके विरोधी तथाकथित निःस्वार्थता द्वारा मजबूत बनती रहती है।

यहाँ बैठकर इन चीजों के बारे में बात करना अर्थहीन है, बेकार है। यही कारण है कि मैं हमेशा अपने श्रोताओं से यही कहता हूँ कि "कृपा करके यहाँ

से चले जाओ।'' जो तुम चाहते हो, वह दूसरी जगह भले मिल जाए, लेकिन मेरे पास नहीं। मंदिर में जाओ, पूजा करो, मंत्र पढ़ो और भभूत लगाओ। उसी समय कोई एक जोकर जैसा आदमी आएगा और तुमसे कहेगा कि ''मुझे कुछ पैसा दे दो। उसके बदले में मैं तुम्हें एक अच्छा मंत्र दूंगा।'' इतने में ही दूसरा आदमी आएगा और तुम्हें ऐसा करने के लिए मना करेगा। वह कहेगा कि पहले वाला आदमी कार की बातें कर रहा था और जो बात मैं कह रहा हूँ, वह अधिक क्रांतिकारी है। वह तुम्हें 'चुनावहीन जागरूकता' (च्वायसलेस अवेयरनेस) के बारे में बताएगा। तुमसे तुम्हारा धन पहले लेगा और फिर स्कूल, संस्थाएँ और तांत्रिक केंद्र बनाएगा।

● **हमें भी आपके कहे हुए को क्यों नहीं उसी तरह भूल जाना चाहिए, जिस तरह आप दूसरे की शिक्षाओं को भूल चुके हैं।**

□ तुम मुझे कभी नकार नहीं सकोगे, क्योंकि धर्म से तुम्हारा जो लगाव है, वह तुम्हें किसी भी तरह का प्रश्न करने से रोकता है। मैं इस बारे में निश्चित हूँ कि तुम मुझे कभी चुनौती नहीं दे सकोगे। इसलिए मैं जो कुछ भी कह रहा हूँ, वह तुम्हारे अंदर एक अस्थायी स्नायुतांत्रिकीय (न्यूरोटिक) स्थिति पैदा करता है। हो सकता है कि मैं जो कह रहा हूँ, उसे तुम स्वीकार न करो। लेकिन तुम ऐसी स्थिति में भी नहीं हो कि तुम इसे अस्वीकार कर सको। यदि तुम्हारी चमड़ी मोटी नहीं हुई, तो तुम निश्चित रूप से बिलकुल अकेले पड़ जाओगे। मैं जो कुछ भी कह रहा हूँ, तुम उसके बारे में न तो प्रश्न पूछ सकते हो और न ही पूछोगे। यह तुम्हारे लिए एक बहुत बड़ी चुनौती है। कोई भी तुम्हारा बचाव नहीं कर सकता, चाहे वह—गोआदापद का ग्लोब्स हो, भगवद्गीता का मजबूत जैकेट हो, या ब्रह्मसूत्र का बुलेटप्रूफ कवच हो। तुम तब तक मुझे चुनौती नहीं दे सकते, जब तक कि पहले के लोगों द्वारा कहे गए वचनों पर विश्वास करोगे। कृपया यह मत कहो कि हजारों-लाखों साधु और संत हुए हैं। बहुत थोड़े से ऐसे लोग हुए हैं, जिन्हें तुम उँगलियों पर गिन सकते हो। शेष तो सभी मात्र टैक्नोक्रेट थे। संत टैक्नोक्रेट हैं और यही सभी लोग चाहते भी हैं। लेकिन अब नशीली दवाइयों तथा अन्य तकनीकियों का विकास हो जाने के कारण संत उपेक्षणीय हो गए हैं। अब तुम्हें ध्यानावस्था के लिए किसी पादरी या संत की जरूरत नहीं पड़ती। यदि तुम अपने विचारों को नियंत्रित करना चाहते हो, तो सरल-सा

तरीका है कि एक नशीली गोली खाओ और भूल जाओ। यदि तुम ऐसा नहीं कर सकते, तो नींद की गोली खा लो। थोड़ी देर नींद आएगी और फिर उठ जाओगे। ये सभी एक ही हैं।

मुझको मत सुनो। यह तुम्हारे अंदर परेशानी पैदा करेगा। यह तुम्हारी उस सनक को बढ़ाएगा ही, जिसकी पकड़ में तुम पहले से हो। इन सभी धार्मिक कूडा-कर्कटों के महत्त्व को स्वीकार करने के कारण, इनके बारे में कभी भी कोई प्रश्न न करने के कारण तुम इनके साथ केवल जीना ही नहीं सीख गए हो, बल्कि यह भी जान गए हो कि इनसे कैसे कमाई की जाए। यह मुनाफाखोरी की बात है। इससे अधिक कुछ नहीं।

● **अगर इतना ही सब कुछ है, तो फिर आप बोलते क्यों चले जा रहे है?**

□ मुझसे यह पूछने का कोई फायदा नहीं कि मैं क्यों बोल रहा हूँ। क्या मैं कोई चीज बेच रहा हूँ या तुमसे कोई वायदा कर रहा हूँ? मैं तुम्हें मस्तिष्क की शाति देने का भरोसा नहीं दे रहा हूँ। क्या मैं दे रहा हूँ? बल्कि इसके उलटे तुम यही कह रहे हो कि मैं तुम्हारे दिमाग की बहुमूल्य शांति ले रहा हूँ। इसके विपरीत मैं अपने ही ढंग से अपनी ही बात कहे जा रहा हूँ। बल्कि तुम ही मेरे रास्ते में आ गए हो और मेरी शांति को भंग कर रहे हो।

● **मुझे ऐसा लगता है कि यदि कोई मेरी सहायता कर सकता है, तो वह केवल आप ही हैं।**

□ नहीं। यदि मैंने तुम्हारी कोई भी सहायता करने की कोशिश की, तो वह तुम्हारी दुर्दशा को बढ़ाएगा। मुझको लगातार सुनने के बाद तुम्हारे पहले से ही मौजूद दु:ख में बढ़ोतरी ही हुई होगी। इस तरह से हम लोग जो बातचीत कर रहे हैं, वह तुम्हार लिए किसी भी तरह से फायदेमंद नहीं होगी। तुम शायद यह नहीं समझ पा रहे हो क तुम यहाँ आग से खेल रहे हो। यदि तुम सचमुच मोक्ष प्राप्त करना चाह रहे होते, तो अभी तक कर चके होते। देखो! तुम क्रोध, स्वार्थ और इसी तरह की अन्य प्रवृत्तियों से बने हुए हो। यदि वे सब नहीं रहेंगे, तो तुम भी नहीं रहोगे। तुम्हारी शारीरिक मृत्यु हो जाएगी।

● **आप कह रहे हैं कि वह (मोक्ष) अब तक हो चुका होता। जबकि दूसरे लोगों ने कहा है.....।**

□ मैं दूसरों के कहे की परवाह नहीं करता। यह अभी ही हो सकता है। लेकिन सरल-सी बात यह है कि तुम ऐसा चाहते ही नहीं। यदि क्रोध और स्वार्थ; जो तुम्हारे ही रूप हैं, समाप्त हो जाएँ, तो अभी मोक्ष प्राप्त हो जाए, कल नहीं। तुम्हारा अपना ही क्रोध तुम्हें जला डालेगा। उसके लिए बिजली के हीटर की जरूरत नहीं होगी। इसलिए धर्मगुरुओं ने निःस्वार्थता की खोज की है। यदि वह निःस्वार्थता समाप्त हो जाए, तो तुम भी समाप्त हो जाओगे। इसलिए इनमे से (लोभ, स्वार्थ आदि) किसी भी एक वस्तु से स्वतंत्र होने का अर्थ है—जैसा कि तुम जानते हो और जिसका तुम अनुभव करते हो, अभी नष्ट हो जाना। मैं तुम्हारे ही हित में और तुम पर दया करके यह कह रहा हूँ कि यह वह है ही नहीं, जो तुम चाहते हो। यह वह वस्तु नहीं है, जिसे तुम पूरा कर सकते हो। यह तुम्हारे हाथ में है ही नहीं। जो भी इसे छूता है, उसे तुरंत चोट पहुँचती है। तुम तो इससे बिलकुल दूर ही हो।

तुम्हारे अतीत की मृत्युगीत संबंधी सभी कविताएँ और रोमांस न तो तुम्हारे लिए सहायक होंगे और न ही किसी और के लिए। इन सबसे कुछ नहीं निकलेगा। ये केवल शब्द भर हैं। ये सभी बहुत बेकार और बचकाने हैं।

● **फिर हम तथाकथित धर्मगुरुओं द्वारा दिए गए मंत्रों को न दोहराएँ, तो क्या करें?**

□ तुम्हें तो जीवन के उस बिंदु का स्पर्श करना है, जिसका अभी तक किसी ने स्पर्श नहीं किया है। इस बारे में तुम्हें कोई दूसरा नहीं सिखा सकता। जब तक तुम इससे पहले के लोगों द्वारा कही गई बातों को दोहराना जारी रखोगे, तब तक तुम खोए ही रहोगे तथा तुम्हारा कोई भी हित नहीं होगा। दूसरों के कहे को सुनना और उस पर विश्वास करना अपने आपको पाने का रास्ता नहीं है। और कोई रास्ता भी नहीं है।

● **तो आप यह कहना चाह रहे हैं कि हमें अपने विश्वासों से छुटकारा पा लेना चाहिए कि......।**

□ उसकी चिंता मत करो। तुम एक विश्वास को दूसरे विश्वास के द्वारा पुनर्स्थापित करोगे। तुम विश्वास के अतिरिक्त कुछ नहीं हो। जैसे ही विश्वास समाप्त होता है, वैसे ही तुम समाप्त हो जाते हो। मैं तुम्हें यह बताने की कोशिश कर रहा हूँ कि स्वार्थ, लोभ, क्रोध, शत्रुता, इच्छा और भय जैसी बातों से मुक्त

होने की कोशिश मत करो। ऐसा करके तुम उनके विरोधी तत्त्वों को ही जन्म दोगे, जो दुर्भाग्य से तुच्छ हैं। यदि इच्छाएँ समाप्त हो जाएँ, तो तुम भी समाप्त हो जाओगे। यमराज आएँगे और तुम्हें ले जाएँगे। यदि तुमने आश्चर्यजनक रूप से झटके को बरदास्त भी कर लिया, तब भी यह तुम्हारे लिए या किसी अन्य के लिए किसी काम का नहीं होगा।

तब तुम इस तरह के बेतुके प्रश्न पूछना पसंद करोगे कि 'मेरे मरने के बाद मेरे शरीर का क्या होगा? क्या मेरा शरीर इस झटके को बरदास्त कर सकेगा?' ये सब तुम किस तरह की बेकार की बातें कर रहे हो। तुम मुझसे यह पूछ रहे हो कि यदि तुम जीवन की बिजली के उस नंगे तार को छू लोगे, तो तुम्हारा क्या होगा। यह तुम्हारे द्वारा पूछा जाने वाला बेपेंदी का प्रश्न है। सच तो यह है कि तुम्हारी इन सबमें रुचि ही नहीं है। इसको छूने के बाद तुम पूरी तरह जल जाओगे और तुम्हें दूर फेंक दिया जाएगा। यह भी हो सकता है कि उस समय यदि कोई दूसरा तुम्हें छूए, तो उसे भी झटका लगे और तुम न छूने योग्य बन जाओ।

इस बात को समझो कि मैं क्या कह रहा हूँ। यदि तुममें जीवन को पहली बार छूने का साहस है, तब तुम कभी नहीं जान सकोगे कि किस बात ने तुमको आघात पहुँचाया है। मनुष्य ने अब तक जो कुछ भी सीखा या अनुभव किया है, वह सब उस समय चला जाता है और उसकी जगह दूसरा कुछ नहीं आता। ऐसा व्यक्ति अपने अतीत और संस्कृति से मुक्त होकर एक जीवंत-शक्ति बन जाता है। और वह तब तक ऐसा बना रहता है, जब तक कि कोई दूसरा ऐसा व्यक्ति आकर न टकराए, जिसने स्वयं भी इस तरह की खोज कर ली हो। जब तक तुममें मेरे तथा सभी गुरुओं द्वारा कही गई बातों को विस्फोटित करने का साहस नहीं होगा, तब तक तुम इसी तरह से मूर्तियों, कर्मकांडों, जन्म-दिवसों तथा अन्य आडंबरों को मनाने वाले पोंगापंथी बने रहोगे।

मुझे दुःख है कि मैं अपनी बात करता रहता हूँ।

● **लेकिन हम कहीं खो गए हैं। इसलिए हमें रास्ता बताने वाले गुरु, साधना या धर्मग्रंथों की जरूरत है।**

□ तुम अपने गुरु के पास वापस जा सकते हो। तुम जो चाहो, वह करो। मैं जो बता रहा हूँ, वह सौभाग्यशाली लोगों के साथ घटता है। यदि तुम सौभाग्यशाली

हो, तो वह घट जाएगा। इसमें मुझे कुछ नहीं करना है। यह किसी के हाथ की बात नहीं है।

● **हमारी परंपरा कहती है कि जीवन क्षणिक है। वह निरंतर प्रवाहमान है.....।**

□ यह भारत की परंपरा है। लेकिन मैं परिवर्तन की बात कर रहा हूँ। उस परंपरा की नहीं, जिसकी बात तुम कर रहे हो और जिसमें कोई परिवर्तन नहीं होता। तुम्हारा पूरा जीवन परिवर्तन की यथार्थता को नकारने का जीवन रहा है। तुम किसी भी तरह केवल निरंतरता चाहते हो और इसके बाद उसी निरंतरता को बनाए रखने के लिए उसका पुनर्जीवन। मैं जिसकी बात कर रहा हूँ, वह भारत की महान परंपरा नहीं है। तुम सोचते हो कि तुम बहुत महत्त्वपूर्ण प्रश्न पूछ रहे हो कि "मृत्यु क्या है?" इसको पूछने से पहले तुम गोआदापद के इस मूलभूत प्रश्न की कल्पना करने लगते हो कि "क्या मेरा जन्म हुआ है।" इन मूलभूत प्रश्नों का समाधान स्वयं करने के बजाय तुम गोआदापद पर व्याख्याएँ लिखते हो और उनके उद्धरण देना शुरू कर देते हो। इसके बाद सरल रास्ता निकालते हुए जो मैं कह रहा हूँ और जो उन्होंने कहा है, उसकी आसानी से तुलना कर देते हो। यही तुम्हारा एकमात्र तरीका है।

किसी भी घटना के बारे में तुम यही कर सकते हो कि मृत्यु और उसके पुनर्जीवन की कल्पना करो। केवल मरे हुए लोग ही मृत्यु के बारे में पूछते हैं। जो जीवित हैं, वे कभी भी ऐसा प्रश्न नहीं पूछेंगे। तुम्हारी स्मृति, जो मर चुकी है, जानना चाहती है कि क्या मृत्यु के बाद भी वह बनी रहेगी। यही कारण है कि वह इस प्रकार के बेकार के प्रश्न पूछती है। मृत्यु निश्चित है। तुम एक बार ही मरते हो। यदि तुम्हारे अंदर के प्रश्न और विचारों की एक बार मृत्यु हो गई, तब तुम मृत्यु के बारे में फिर कभी प्रश्न नहीं करोगे।

● **आप तो सभी चीजों को नकार रहे हैं और अब अचानक मुझे ऐसा लग रहा है कि मुझे अपना रास्ता खुद ही तलाश करना पड़ेगा। कोई भी मेरी सहायता नहीं कर सकता।**

□ क्या तुम्हें यह पक्का विश्वास है कि कोई भी तुम्हारी सहायता नहीं कर सकता? तुम इस बारे में इतने निश्चित नहीं हो। इसलिए तुम्हारे इस कथन का कोई भी अर्थ नहीं है। तुम अभी भी आशा में पड़े हो, यहाँ तक कि यह

सोचने के बाद भी कि कोई भी बाहरी शक्ति तुम्हारी सहायता नहीं कर सकती। फिर भी तुम्हें इस बात का विश्वास है कि तुम स्वयं अपनी सहायता कर सकते हो। इससे तुम्हें बहुत अधिक विश्वास मिलता है और इस विश्वास का झुकाव हमेशा कुछ प्राप्त करने की ओर होता है। इसलिए इस बात में अपना समय नष्ट करने की बजाय कि जो चीज तुम प्राप्त करना चाहते हो, उस बारे में कोई तुम्हारी सहायता कर सकता है या नहीं, तुम्हें यह पूछना चाहिए कि "क्या प्राप्त करने योग्य कोई वस्तु है?" चाहे तुम स्वयं या कोई अन्य व्यक्ति तुम्हें कुछ प्राप्त करने में तुम्हारी सहायता कर सकता है, यह तो प्रश्न ही नहीं है। इसके बारे में तो तुम खोज कर ही रहे हो, यह स्पष्ट है। लेकिन सवाल यह है कि तुम खोज क्या रहे हो? निस्संदेह रूप से तुम एक ऐसी खोज कर रहे हो, जिसके बारे में तुम पहले से ही जानते हो। ऐसी चीज के बारे में खोज करना असंभव है, जिसके बारे में तुम कुछ नहीं जानते। तुम वही खोजते हो और पाते हो, जो तुम जानते हो। इस सीधी-सी सच्चाई का सामना करना तुम्हारे लिए कठिन है।

कृपया मुझे गलत मत समझो। मैं दार्शनिक किस्म के खेल खेलकर तुमसे प्रश्न नहीं पूछ रहा हूँ। मैं यहाँ तुम्हें तुम्हारे लक्ष्य की प्राप्ति के लिए कोई नया सिद्धांत, नई तकनीक या कोई एक नया रास्ता नहीं बता रहा हूँ। यदि कोई अन्य प्रणाली, तकनीक और रास्ते तुम्हें तुम्हारे उद्देश्य तक पहुँचाने में सफल नहीं रहे हैं और यदि तुम यहाँ मुझसे किसी नए और अच्छे तरीके की आशा कर रहे हो, तो मुझे दुःख है कि मैं तुम्हारे कोई काम नहीं आ सकूँगा। यदि तुम ऐसा सोचते हो कि कोई अन्य तुम्हारी सहायता कर सकता है, तो मैं तुम्हें अपनी शुभकामनाएँ देता हूँ। लेकिन मैं अपने अनुभव के आधार पर यह कहने के लिए मजबूर हूँ कि तुम देखोगे कि तुम कुछ नहीं पाओगे।

अपनी सहायता के लिए आंतरिक से बाह्य साधनों की ओर जाना बिलकुल व्यर्थ है। इसके बारे में मैं निश्चित हूँ। मुझे यह पूरी तरह स्पष्ट है कि अपने आपको पाने के लिए तुम्हें पूरी तरह असहाय होना होगा और उसके लिए कहीं नहीं जाना होगा। यही मुख्य बात है। लेकिन दुर्भाग्य है कि यह निश्चित तकनीक दूसरे को दी नहीं जा सकती। जिस लक्ष्य की खोज तुमने की है, वही तुम्हारे आगे की खोज के लिए जिम्मेदार है। इसलिए जब तक यह लक्ष्य बना रहेगा, तब तक तुम इसकी निरंतरता के लिए खोज करते रहोगे। यदि तुम कहते हो कि

"सचमुच मैं नहीं जानता कि मैं किस चीज की खोज कर रहा हूँ", तो यह सत्य नहीं है। इसलिए प्रश्न यह है कि वह चीज क्या है, जिसकी तुम खोज कर रहे हो। यह सबसे महत्त्वपूर्ण प्रश्न है, जो तुम्हें अपने आपसे पूछना चाहिए।

यदि तुम इसके बारे में सोचो, तो पाओगे कि तुम्हारे शरीर की स्वाभाविक आवश्यकताओं के अतिरिक्त तुम जो कुछ भी चाहते हो, वे सब या तो उस चीज से पैदा हुई हैं, जो तुम्हें बताई गई हैं या तुमने पढ़ी हैं या जिसके बारे में तुमने स्वयं अनुभव किया है। जो शारीरिक आवश्यकताएँ हैं, वे स्वयं प्रामाणिक हे और आसानी से समझी जा सकने योग्य हैं। लेकिन यह विशेष इच्छा—कुछ खोज करने का लक्ष्य—एक ऐसी वस्तु है, जो तुम्हारे मस्तिष्क से उपजी है, और जो तुम्हारे द्वारा विभिन्न स्रोतों से इकट्ठे किए गए ज्ञान पर आधारित है। इस बारे मे तुम्हें स्पष्ट होना चाहिए।

● **यदि आप जो कह रहे हैं, वह सत्य है, तब तो सचमुच मैं बहुत बुरी स्थिति में हूँ। हम ऐसी स्थिति में नहीं हैं कि आपके कहे को स्वीकार करें या अस्वीकार करें। फिर आप क्यों मुझसे लगातार बात किए जा रहे हैं। आखिर फिर इस तरह की बातों का अर्थ ही क्या है?**

□ तुमसे हुई बातचीत का कुछ मतलब नहीं है। तुमने बहुत अच्छा प्रश्न किया कि फिर मैं बातें क्यों कर रहा हूँ। मैं तुमसे निश्चित रूप से कह सकता हूँ कि आत्मसंतोष के लिए बात करना मेरा स्वभाव नहीं है। बात करने का मेरा उद्देश्य उससे बिलकुल अलग है, जो तुम सोच रहे हो। ऐसा नहीं है कि मैं तुम्हें कुछ समझाने में सहायता करना चाहता हूँ या मैं ऐसा महसूस करता हूँ कि मुझे तुम्हारी सहायता करनी चाहिए। ऐसा बिलकुल भी नहीं है। मेरा उद्देश्य बिलकुल प्रत्यक्ष और अस्थायी है कि तुम समझदारी की स्थिति तक पहुँचो। हालांकि केवल इसे ही पूरी तरह स्पष्ट करने में मेरी रुचि है कि समझने लायक कुछ भी नहीं है।

जब तक तुम कुछ समझने की इच्छा रखोगे, तब तक दो इकाइयों के बीच अनुपयुक्त संबंध बना ही रहेगा। मैं हमेशा ही किसी तरह इस बात पर जोर दे रहा हूँ कि तुम्हें यह सत्य समझ में आ जाए कि समझने लायक कोई वस्तु नहीं है। जब तक तुम यह सोचोगे, स्वीकार करोगे और विश्वास करोगे कि यहाँ समझने लायक कोई वस्तु है और उसके समझने को अपने जीवन का लक्ष्य

बनाओगे तब तक तुम खोज मे और संघर्ष मे भटकते रहोगे इस प्रकार तुम खो जाओगे और हमेशा दुःखी रहोगे।

मेरे पास कहने के लिए थोड़ी-सी ही चीजें हैं और उसी को मैं बार-बार दोहराता रहता हूँ। मेरे लए इस दुनिया के दैनिक कामों के व्यावहारिक प्रश्नों के अतिरिक्त और कोई प्रश्न नहीं है। हाँ, तुम्हारे पास जरूर कई-कई प्रश्न हैं। इन सभी प्रश्नों का एक ही स्रोत है, और वह है—तुम्हारा ज्ञान। यह किसी भी वस्तु के स्वभाव में नहीं होता कि पहले से ही उसका उत्तर जाने बिना तुम कोई प्रश्न पूछो। इसलिए जब तुम मुझसे कोई प्रश्न पूछते हो, तब हम लोगों के बीच कोई अर्थपूर्ण संवाद संभव ही नहीं है, क्योंकि तुम्हारे दिमाग में पहले से ही उसका उत्तर मौजूद है। इसलिए संवाद असंभव है। आखिर ऐसे संवाद को जारी रखने का क्या मतलब है।

मूल आवश्यकता इस बात की है कि अपने आपको उत्तरों से मुक्त किया जाए। खोज व्यर्थ है, क्योंकि वह प्रश्न पर आधारित है और यह प्रश्न झूठे ज्ञान पर आधारित है। तुम्हारे ज्ञान ने तुम्हें समस्याओं से मुक्त नहीं किया है। तुम्हारा संकट यह है कि तुम एक ऐसे प्रश्न के उत्तर की तलाश कर रहे हो, जिसका उत्तर तुम पहले से ही जानते हो। यही तुम्हें सनकी बना रहा है। यदि तुम्हारे प्रश्न ऐसे होते, जिनका समाधान ढूँढ़ा जा सकता, तब वे प्रश्न स्वयं ही अपने आपको नष्ट कर लेते, क्योंकि सभी प्रश्न एक जैसे प्रश्नों के ही विविध रूप हैं और एक ही माध्यम से निकले हैं। इसलिए सहायता का अस्तित्व उत्तर पाने में नहीं है, बल्कि सभी प्रश्नों की समाप्ति में है। दुर्भाग्य यह है कि समस्या के इस तरह के समाधान में तुम्हारी तनिक भी रुचि नहीं है।

तुम तथा अन्य लोग चाहे जो भी सोचें, लेकिन उत्तर कभी भी तुम्हारी सहायता नहीं कर सकते। सचमुच यह बहुत सरल है। यदि उत्तर सही है, तो प्रश्न समाप्त हो जाता है। मेरे पास किसी तरह का प्रश्न नहीं है। यह कभी भी मेरे दिमाग में नहीं आता। मेरे सभी प्रश्नों ने अपने आपको एक बड़े प्रश्न में समाहित करके पूरी तरह समाप्त कर लिया है। मेरे प्रश्नकर्त्ता ने इस सामान्य से नियम को समझ लिया है कि ऐसे प्रश्न पूछना अर्थहीन है, जिनके उत्तर वह पहले से ही जानता है। तुम मूर्खतावश अपने उन प्रश्नों के उत्तर की खोज में लगे रहते हो, जो तुमने अपने ज्ञान से इकट्ठे कर रखे हैं। जो प्रश्न तुम तैयार करते हो,

वे तुम्हारे पास पहले से ही मौजूद उत्तरों से पैदा होते हैं। इस प्रकार तुम्हारा लक्ष्य क्या है ? तुम्हें इस बारे में बहुत स्पष्ट होना चाहिए, अन्यथा आगे बढ़ने का कोई अर्थ नहीं है। यह एक खेल बन जाता है, एक अर्थहीन कर्मकांड बन जाता है। तुम पाना क्या चाहते हो ? तुम जो भी पाना चाहते हो, उस हेतु तुम्हारी सहायता करने के लिए कोई-न-कोई हमेशा होता है, जिसकी तुम्हें कीमत देनी पड़ती है। तुम लोगों ने मूर्खतावश जीवन को उच्चतम और निम्नतम लक्ष्य तथा भौतिक और आध्यात्मिक भागों में विभाजित कर दिया है। इन दोनों ही स्थितियों में एक जबरदस्त संघर्ष, कष्ट और मारा-मारी पैदा हो गई है। मैं कहता हूँ कि आध्यात्मिक लक्ष्य जैसी कोई बात होती ही नहीं। यह भौतिक लक्ष्य का ही उस रूप में एक विस्तार है, जिसे तुम एक उच्चतर और उदात्त स्थिति समझते हो। तुम गलती से यह विश्वास करते हो कि इस आध्यात्मिक मार्ग पर चलकर अपने भौतिक लक्ष्यों को आश्चर्यजनक रूप से सरल बना लोगे और उसे एक व्यवस्था दे लोगे। यथार्थ में यह संभव नहीं है। तुम यह सोचते होओगे कि क्षुद्र व्यक्ति ही भौतिक लक्ष्यों के पीछे भागते हैं और भौतिक उपलब्धियाँ व्यर्थ हैं। लेकिन सच्चाई यह है कि यह तथाकथित आध्यात्मिक लक्ष्य के द्वारा तुमने उसी को अपने सामने रखा है। तुम स्वयं अपनी खोज हो और यह तुम्हें यह सोचने में मदद नहीं कर सकता कि तुम चीजों को समझ चुके हो और तुम सभी से स्वतंत्र हो। यदि तुम यहाँ नहीं आते, तो तुम अपने उत्तर की खोज में कहीं और जाते।

● **यथार्थ की खोज करते हुए क्या आप सच्चे संबंधों एवं दूसरे के साथ खुले संवाद की बात नहीं कर रहे हैं ?**

☐ इसे भूल जाओ। संवाद का कोई अर्थ नहीं है। न ही बातचीत करने का कोई अर्थ है। हम आखिर बेकार में क्या कर रहे हैं ? क्या तुम सोचते हो कि मैं लोगों से क्षमा माँगकर बात करना चाहता हूँ ? क्या तुम यह सोचते हो कि तुमसे बात करते समय मेरे मन में कोई भ्रम है ? मेरे मन में कोई भ्रम नहीं है। तुम मेरे पास बातचीत करने के लिए फिर से लौटकर आए हो, इससे यह सच्चाई सामने आती है कि मैं जो कुछ भी कह रहा हूँ, उसे तुमने सुना नहीं है। यदि तुम उसे एक बार समझ लेते, तो हर बात एक ही बार में हमेशा के लिए समाप्त हो जाती। तब तुम किसी भी गुरु के पास नहीं जाते, इस बारे में कोई भी पुस्तक नहीं पढ़ते या किसी भी अन्य को नहीं सुनते। तब तुम दूसरे की कही बात को मूर्खतापूर्वक

दोहराते नहीं, विशेषकर साधु और संतों की कही गई बातों को। एक बार यदि तुम्हारे दिमाग से बात साफ हो जाए, तब तुम किसी को भी नहीं सुनना चाहोगे, यहाँ तक कि पृथ्वी पर विचरण करते हुए ईश्वर तक को नहीं। यहाँ तक कि यदि लाखों ईश्वर एक हो जाएं, तो उसे भी नहीं। कितनी विडंबना है कि किसी के पास तो करोड़ों डालर हैं और तुम हो कि इस बात के लिए भटक रहे हो कि अगला भोजन कैसे प्राप्त होगा? खैर! यह मुद्दा नहीं है। मुख्य मुद्दा यह है कि तुम चाहते क्या हो? कृपया, हम लोग भगवान के बारे में भूल जाएँ। यहाँ बैठकर तुम अपने गुरु से सुनी हुई बातें मत दोहराओ, क्योंकि वे सब व्यर्थ हैं।

यदि तुम एक बार अपनी आशा, अपना विश्वास और अपना आत्मविश्वास अपने गुरु को समर्पित कर देते हो, तब तुम हमेशा के लिए उसी से चिपक जाते हो।

● **वस्तुतः सभी गुरुओं ने कम-से-कम पूर्व के गुरुओं ने इस बात पर जोर दिया है कि हम अपनी स्थिति से, अपने अतीत से मुक्त हो जाएँ।**

□ जब तक तुम कुछ चाहते रहोगे, तब तक अतीत हमेशा बना रहेगा। यहाँ तक कि जब तुम अपनी इच्छाओं का दमन करने की कोशिश करते हो, तब भी अतीत तुम्हारी सहायता के लिए आता है और तुम्हें यह बताता है कि तुम अपनी इच्छाओं का दमन किस प्रकार कर सकते हो। तुम सोचते हो कि तुम अपनी तथाकथित भौतिकवादी इच्छाओं का दमन करके मुक्त हो जाओगे और उससे उच्च स्थिति; जिसे आध्यात्मिक इच्छा कहते हो, प्राप्त करोगे। इच्छाओ मे इस तरह का कोई अंतर नहीं होता। वस्तुतः वे सभी बिलकुल एक जैसी हैं। भारतीय संस्कृति में आध्यात्मिक इच्छाओं की प्रशंसा की गई है और लोग उनके पीछे भागते हैं, जबकि पश्चिम में भौतिकवादी इच्छाएँ महत्त्व रखती हैं।

जैसे ही इच्छाएँ नष्ट हो जाती हैं, यहाँ तक कि क्षण भर के लिए भी, तो विचार गायब हो जाते हैं और तुम केवल शरीर से संबंधित इच्छाओं; जैसे— भोजन, कपड़े और मकान जैसी सामान्य बातों की चिंता करने लगते हो। अपने आपको ही अस्वीकार करने की घुमाव-फिरावदार कामों के द्वारा तुम वस्तुतः शरीर की महत्त्वपूर्ण जरूरतों को नकारते हो, जो जीवन जीने का एक उलटा तरीका है।

● **लेकिन मूल प्रश्न यह है कि कोई अपनी इच्छाओं को रोकेगा कैसे।**

□ तुम फिर से पूछ रहे हो कि 'कैसे' और इस प्रकार मामले को टाल रहे हो। 'कैसे' जैसा कुछ होता ही नहीं। 'कैसे' उलझावदार प्रश्न है और इसके बारे में पूछना मूर्खता है। 'किस प्रकार जीयें', यह एक ऐसा प्रश्न है, जो सदियों से लोगों को परेशान कर रहा है। धर्म यह दावा करता है कि वह इस प्रश्न का संतोषजनक उत्तर दे सकता है। प्रत्येक गुरु इसे जानने का दावा करता है। वह तुम्हें इसका तरीका बताकर खुश होगा, हालाँकि वह इसकी फीस लेगा। "हम अपना जीवन कैसे जीयें?" यह एक ऐसा प्रश्न है, जिसने अपने आपको लाखों प्रश्नों में तब्दील कर लिया है।

● **इस प्रश्न को किनारे करके कि हम निरंतर पैदा होने वाली इच्छाओं से कैसे मुक्त हों, आपकी बातों से यह साफ लगता है कि व्यक्ति को अपने अतीत की समस्त स्मृतियों से सबसे पहले मुक्त होना चाहिए। क्या ऐसा नहीं है?**

□ यदि तुम अपने अतीत को दबाने की कोशिश करोगे और तुम अपने वर्तमान में जीने का प्रयास करोगे, तो तुम अपने आपको पागलपन की ओर ले जा रहे होओगे। तुम एक ऐसी चीज पर नियंत्रण पाने की कोशिश कर रहे हो, जिस पर तुम्हारा नियंत्रण है ही नहीं। यह संभव ही नहीं है कि बिना सनकी हुए विचारों को नियंत्रित किया जा सके। यह केवल तुम्हारा व्यक्तिगत तुच्छ अतीत ही नहीं है, बल्कि समस्त मानवजाति का अतीत है, समस्त मानवजाति की स्मृति है। इसलिए इसे कर पाना इतना सरल नहीं है। यदि तुम नदी के स्वाभाविक प्रवाह को बाँध आदि कृत्रिम तरीके से रोकना चाहोगे, तो तुम एक प्रकार से बाढ़ लाकर सारी चीजों को नष्ट ही करोगे। इसलिए तुम देखते हो कि नियंत्रित करने के तुम्हारे प्रयासों और जागरूक रहने के बावजूद विचार तुम्हारे अंदर बढ़ते ही चले जाते हैं। यदि तुम इसे एक बार समझ लोगे, तब तुम्हें इसकी कोई परवाह नहीं रहेगी कि तुम्हारे अंदर विचार हैं या नहीं। जब विचारों को काम करने की सही जरूरत होगी, तब वे मौजूद होंगे और जब विचारों को काम करने की जरूरत नहीं होगी, तब वे वहाँ मौजूद नहीं होंगे। यहाँ तक कि तुम जानोगे भी नहीं और इसे जानने का कोई रास्ता भी नहीं है कि तुम सोच रहे हो या नहीं। अपने विभाजित आत्मा की निरंतरता को बनाए रखने के लिए तुम्हारे द्वारा विचारों का सतत प्रयोग किया जाना ही 'तुम' हो। उसके अतिरिक्त तुम्हारे अंदर

अन्य कुछ भी नहीं है। जिसे तुम 'तुम' कहते हो, वह तुम्हारे विचारों की निरतरता के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। यदि यह कृत्रिमता निरंतरता न हो, तब तुम भी नहीं रहोगे। यह 'तुम' विभिन्न उच्च स्तरों पर केवल काम करना चाहता है और समाप्त होना नहीं चाहता। तुम इसकी निरंतरता को बनाए रखते हुए कुछ और बनाने के लिए इसको रूपांतरित करना चाहते हो। ऐसी स्थिति में तुम यही कर सकते हो कि पहले से ही इकट्ठे हुए अनुभवों में कुछ और अनुभव जोड़ लो।

● **इकट्ठा करने की यह प्रक्रिया किस प्रकार काम करती है?**

□ आत्म के पास अधिक-से-अधिक ज्ञान और अनुभव जोड़ने का केवल एक ही रास्ता है कि वह लगातार अपने आपसे अर्थहीन प्रश्न पूछता जाए—'कैसे?' ''मुझे कैसे जीना है?'' यदि कोई तुमसे कहता है कि ज्ञान और अनुभव की इस निरंतरता को समाप्त किया जाना चाहिए, तब तुम पूछते हो—'कैसे', और इसी जाल में उलझते जाते हो। यह सब तुम केवल एक ही प्रकार के ज्ञान को बार-बार पूछते हो।

● **लेकिन हम तो ब्रह्मानंद (इंलाइटेंमैंट) के बारे में जानना चाहते हैं, यदि यह संभव है तो।**

□ तुम यह जानना चाहते हो कि ब्रह्मानंद होता है या नहीं। यदि होता है तो किसके पास है और इसे कैसे पाया जा सकता है। तुम यह जानने को उत्सुक हो कि ब्रह्मानंद से युक्त व्यक्ति का व्यवहार कैसा होता है, उसका स्वभाव कैसा होता है, आदि-आदि।

● **हम सभी इतने सहज नहीं हैं कि ब्रह्म, ब्रह्मानंद या निर्वाण को सीधे प्राप्त करने के बारे में सोच सकें। हम ईश्वर की भ्रमात्मक प्रकृति को जान सकें। लेकिन फिर भी हम कुछ अधिक व्यावहारिक उलझी हुई वस्तु के बारे में जैसे......**

□ लोग ब्रह्मानंद चाहते हैं। तुम कह रहे हो कि तुम नहीं चाहते। लेकिन ये दोनों एक ही हैं। चाहे तुम एक नई कार चाहो या मस्तिष्क की शांति; दोनों ही दुखदायी खोजें हैं। एक धर्मनिरपेक्ष नेता तुमको एक रास्ता बताता है, तो कोई साधु-संत दूसरा रास्ता। लेकिन इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। जब तक तुम मस्तिष्क की शांति की खोज करते रहोगे, तब तक तुम्हारे पास उद्वेलित मस्तिष्क

रहेगा। चाहे तुम न ढूँढ़ने का प्रयास करो या तुम लगातार खोज करते हो, दोनों ही स्थितियों में तुम एक जैसे ही रहोगे। वस्तुतः तुम्हें अपनी खोज को रोकना होगा। लेकिन तुम खोजना नहीं रोकते, क्योंकि इस तरह का रुकना तुम्हारा अंत हो जाना होगा।

तुम एक जंगल में खो गए हो और उससे निकलने का रास्ता नहीं ढूँढ पा रहे हो। रात गहरी हो रही है। जंगली पशु बढ़ते जा रहे हैं, जिनमें कोबरा भी हैं और तुम अभी तक खोए हुए हो। ऐसी स्थिति में तुम क्या करोगे? तुम थम जाते हो। तुम चलते नहीं......।

● **लेकिन हम इस बारे में कभी बिलकुल निश्चित नहीं हो सकते कि कोई रास्ता ही नहीं है। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि वह रास्ता कितना विलक्षण है या असंभव।**

□ जब तक तुम यह आशा करोगे कि तुम इस तरह या किसी अन्य तरह से इस जंगल से निकल सकते हो, तब तक तुम लगातार ढूँढ़ते रहोगे। और जब तक तुम ऐसा करते रहोगे, तब तक अपने आपको खोया महसूस करते रहोगे। तुम इसलिए खोए हुए हो, क्योंकि तुम कुछ ढूँढ़ रहे हो। इस जंगल से बाहर निकलने का रास्ता पाने का तुम्हारे पास कोई तरीका नहीं है।

● **तो इसका मतलब यह हुआ कि बिलकुल रुक जाना चाहिए।**

□ नहीं, ऐसा बिलकुल नहीं है। तुम इसके बाद भी उम्मीद करते हो कि कुछ हो जाएगा। यह उम्मीद करना तुम्हारी समस्या का एक भाग है। इसीलिए तुम यह प्रश्न पूछ रहे हो। तुम्हारी यह उम्मीद हर चीज को बदलने की तुम्हारी इच्छा का भाग है। किसी चीज को बदलने की जरूरत नहीं है। जीवन जैसा है, तुम्हें वैसा ही स्वीकार करना चाहिए। परिवर्तन के कारण तुम कुछ आशा करते हो और उससे फिर उम्मीदें पैदा होती हैं। यह सब आखिर किसलिए? यह जीवन ही पर्याप्त है। इस जीवन में शांति नहीं है। दुखों की कमी नहीं है। इसलिए तुम अगले जीवन में सुखी होने की आशा करते हो। यह अच्छी बात नहीं है। हो सकता है कि तुम्हारा अगला जन्म हो ही नहीं। आखिर यह तुम्हारा केवल एक विश्वास ही तो है। यदि इस तरह की शांति संभव होती, तो वह तुम्हें अभी तुरंत ही प्राप्त हो जाती है।

● **लेकिन आपकी सभी भौतिक या आध्यात्मिक आकांक्षाएँ**

परिभाषित तथा हमारे समाज के साँचे में ढली हुई मालूम पड़ती हैं, जो आपकी तरह ही प्रदूषित हैं। इसके बाद भी मुझे अपने समाज की सीमाओं में ही रहना है, और संघर्ष करना है। मेरा जीवन केवल मेरे निजी उद्देश्य और इच्छाओं द्वारा निर्धारित नहीं है, बल्कि समाज द्वारा निर्धारित है। मुझे जो अवसर दिए गए हैं, उनके द्वारा निर्धारित है।

□ तुम इतनी सारी चीजें चाहते हो और मैं ऐसी स्थिति में नहीं हूँ कि इनमे से किसी को पाने में तुम्हारी सहायता कर सकूँ। तुम स्पष्ट ही नहीं हो कि सचमुच तुम चाहते क्या हो। यदि एक बार यह पूरी तरह स्पष्ट हो जाए कि तुम चाहते क्या हो, तब तुम्हें यह जानने की कोशिश करनी चाहिए कि तुम उसे कैसे पा सकते हो। फिर तुम या तो उसे पा लोगे या नहीं पाओगे। इसलिए तुम अपने उद्देश्यों को ऊँची और नीची श्रेणियों में अलग करने के चक्कर में मत पड़ो। तुम जीवनभर यही करते रहे हो और सफल नहीं हो पाए हो।

● **केवल हम ही नहीं, बल्कि हर व्यक्ति इस अंतहीन खोज और संघर्ष के जाल में उलझा हुआ मालूम पड़ता है। हमें यह जरूरी महसूस होता है कि इस मामले पर एक साथ बैठकर आपस में बातचीत करें...।**

□ जैसा कि मैंने कहा, संवाद के बारे में मुझे कोई भ्रम नहीं है। तुम अपने अनुभवों को किसी भी दूसरे के साथ बाँट नहीं सकते, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति अपनी स्वतंत्र और अलग दुनिया में रहता है और उनका कोई सामान्य बिदु (कॉमन रिफ्रेंस प्वाइंट) नहीं होता। यह केवल तुम्हारा भ्रम है कि तुम्हें लगता है कि तुम दूसरे के साथ बातचीत कर रहे हो। यह संभव ही नहीं है।

मैं तुम्हें कुछ बता नहीं सकता और तुम कुछ समझ नहीं सकते, क्योंकि तुम उन बिंदुओं को जानते ही नहीं, जिनके बारे में मैं कह रहा हूँ। यदि तुम एक बार समझ गए कि समझने जैसी कोई बात ही नहीं है, तब तुम्हें लगेगा कि फिर संवाद करने के लिए है ही क्या? संवाद की आवश्यकता ही नहीं है। यहाँ संवाद की संभावना के बारे में तर्क करने का कोई अर्थ ही नहीं है। संवाद करने की इच्छा तुम्हारी उपलब्धि की सामान्य योजना का ही अंग है। संवाद की उस इच्छा के पीछे यह भाव निहित है कि तुम अपनी समस्याओं के समाधान के लिए किसी बाह्य शक्ति पर निर्भर हो। इस विश्व में कुछ महत्त्वपूर्ण व्यावहारिक प्राकृतिक आवश्यकताओं के लिए संवाद करने के अतिरिक्त अन्य प्रकार के

संवाद की तुम्हारी इच्छा सचमुच तुम्हारी असहायता के अनुभव की अभिव्यक्ति है। साथ ही इस बात की अभिव्यक्ति है कि तुम बाह्य रूप से कोई समर्थन चाहते हो। तुम्हारी यह असहायता बनी रहती है, क्योंकि तुम किसी बाहरी एजेंसी पर निर्भर करते हो। यदि किसी बाहरी एजेंसी पर सहायता का झूठा और तुच्छ भाव समाप्त हो जाए, तब तुम्हारे अंदर असहायता की यह अनुभूति तथा संवाद की इच्छा भी नहीं रहेगी। यदि एक चली जाती है, तो दूसरा भी चला जाएगा। तुम्हारी स्थिति और संभावनाएँ आशाहीन दिखती हैं, क्योंकि तुम्हारे पास आशा के विचार हैं। एक बार उन आशाओं को निकाल फेंको, तो तुम्हारे अंदर असहायता की बढ़ती जा रही अनुभूति इसके साथ ही समाप्त हो जाएगी। जब तक तुम अपने आत्मसंतोष के लिए आशा से संबंध बनाए रखोगे, तब तक असहायता और झुँझलाहट बनी रहेगी, क्योंकि आत्मसंतोष जैसी कोई बात होती ही नहीं। यही तुम्हारे दुःख का स्रोत है।

● **इन सबके बारे में सोचना और उस पर तुरंत कार्य करने लगना बहुत जल्दबाजी होगी। शायद भविष्य में कभी जब मैं कुछ अधिक योग्य होऊँ.....।**

□ यह भविष्य आशा की देन है। यही एकमात्र भविष्य है, जिसका अस्तित्व है। अपने उद्देश्य को प्राप्त करने की आशा, आनंद की प्राप्ति की आशा तथा किसी भी तरह सुख प्राप्त करने की आशा—यही भविष्य है। जिस बिंदु से तुम अपने आपको भविष्य के लिए ले जाना शुरू करते हो, तब तुम्हें ऐसा लगने लगता है कि वही वर्तमान है। लेकिन यह गलत है। वह केवल अतीत है, जो क्रियाशील रहता है और उसके क्षण ही वर्तमान और भविष्य का भ्रम पैदा करते हैं। मैं जो कुछ भी कह रहा हूँ, उसे तुम तार्किक या अतार्किक मान सकते हो और उसे स्वीकार या अस्वीकार कर सकते हो। फिर भी किसी भी हालत में वह अतीत ही होगा, जो तुमसे ऐसा कराएगा। और वह अतीत ही तुम्हारे अंदर हमेशा क्रियाशील रहता है। वह अतीत ही है, जिसने ब्रह्म, आनंद तथा मस्तिष्क की शांति जैसे उद्देश्यों का निर्माण किया है और उन्हें भविष्य के लिए सुरक्षित रखा है। इस प्रकार जो प्रसन्नता है, वह हमेशा भविष्य में ही निहित है, कल में ही निहित है। जो व्यक्ति प्रसन्न होगा, उसकी प्रसन्नता की खोज में कोई रुचि नहीं होगी। तृप्त मनुष्य कभी भी भोजन की खोज नहीं करता।

● सच है कि अपनी क्षमता की समझदारी वर्तमान में ही हो सकती है, भविष्य में नहीं।

☐ केवल अतीत का ही अस्तित्व है। ब्रह्मानंद जैसे तत्त्वों के बारे में बात करने वाले धार्मिक पुरुषों ने तुम्हें यह बताया है कि जैसे ही तुम वर्तमान में क्रियाशील होने लगते हो, उससे पहले ही अतीत समाप्त हो जाता है और इस प्रकार तुम अपनी क्षमता या भविष्य की संभावनाओं को पहचान सकते हो। मैं इसे नहीं मानता।

पहली बात तो यही कि तुम्हें इस बात में रुचि ही क्यों होनी चाहिए कि तुम अतीत को वर्तमान में हस्तक्षेप करने से रोको। इस बारे में बहुत स्पष्ट रहो कि अतीत के नष्ट हो जाने का विचार अर्थात् समय के समाप्त हो जाने का विचार तुम्हें तुम्हारे तथाकथित आत्मा के स्वनियुक्त अभिभावकों, पंडित–पुरोहितों, धार्मिक पुरुषों और मानवता के रक्षकों ने दिया है। यह तुम्हारा अपना है ही नहीं। तुम्हें इस बारे में भी बहुत स्पष्ट होने की आवश्यकता है कि अतीत के अंत के क्या दुष्परिणाम होंगे। सचमुच यह एक बहुत खतरनाक और भयंकर बात होगी। समय को समाप्त करने की तुम्हारी खोज अर्थात् अतीत को समाप्त करने के प्रयास में तुम अतीत का ही उपयोग करोगे। इस प्रकार तुम अतीत को ही बनाए रखोगे। यह सच्चाई है; चाहे तुम इसे पसंद करो या नहीं। चाहे तुम कुछ भी करो, जो भी विचार रखो, स्वार्थरहित व्यवहार करो, जीवन के प्रति सकारात्मक की अपेक्षा नकारात्मक रुख रखो, धार्मिक पुरुषों को सुनो या फिर मुझे सुनो—ये सब अतीत में ही कुछ–न–कुछ जोड़ते हैं। तुम्हारे पास उपलब्धियों के जितने भी तकनीक और सिद्धांत हैं, वे सब अतीत से ही आए हुए हैं, इसलिए अनुपयोगी हैं। यह सौभाग्य की बात है कि ऐसी कोई वस्तु है ही नहीं, जिसे पाया जा सके।

● हाँ, लेकिन हम लोगों में से बहुत–से लोग मानते हैं कि प्रसन्नता किसी अन्य वस्तु का सहउत्पाद है। इसलिए उसे प्रसन्नता में ही नहीं पाया जा सकता।

☐ प्रसन्नता के प्रति तुम्हारा सीधा दृष्टिकोण स्वहित पर आधारित है। तुम हर समय सुख की खोज करने वाले हो। इसलिए उदात्त प्रसन्नता का तुम्हारा आदर्श बिना किसी कष्ट के एक अंतहीन सुख की खोज ही है। यदि तुम इसके बारे में विचार करोगे, तब तुम कहोगे कि "यदि मुझे ब्रह्म और आनंद की प्राप्ति

हो जाए, तब मैं सुख और दु:ख जैसी विरोधी इच्छाओं से मुक्त हो जाऊँगा।'' इस प्रकार यह तुम्हारा उद्देश्य बन जाएगा, जिसे पाने में पहले से भी अधिक समय लगेगा। फिर तुम इसकी शुरुआत करने के साथ ही पीछे चले जाओगे।

अतीत के क्षणों की निरंतरता को विराम देने की इच्छा अत्यंत हास्यास्पद और आधाररहित है। धार्मिक पुरुषों द्वारा हमारे दिमाग में यह बैठा दिया गया है कि यदि हम इस जीवन में अपने आपको अतीत से पूरी तरह मुक्त कर लें, तो सभी वस्तुएँ सुखमय, प्रकाशमय और मधुर हो जाएँगी। यह सब एक रोमानीपन और दिवास्वप्न से अधिक कुछ नहीं है। दुर्भाग्य यह है कि तुम सब इन्हीं बेकार की बातों में पड़े हुए हो। फिर तुम कर भी क्या सकते हो! तुम्हारे सभी कर्म अतीत से ही निकले हुए होते हैं और तुम जो कुछ भी करते हो, वे तुम्हारे सुख और कष्ट को सुदृढ़ ही करते हैं। सच तो यह है कि इसमें कष्ट ही मिलता है, सुख नहीं। मैं यह बात दृढ़तापूर्वक कह सकता हूँ। फिर भी तुम यही मानते हो कि कोई एक समयातीत स्थिति होती है, जो मुक्ति का एक मार्ग है। इसलिए हम लोगों के बीच में बातचीत हो पाना बड़ा मुश्किल है। मैं यही कहना चाहूँगा कि यदि तुम सचमुच कुछ सीखना चाहते हो, तो तुम जो कुछ भी जानते हो, उसे समाप्त कर दो और समय का अनुभव करो। लेकिन तुम मुझे सुन ही नहीं रहे हो। तुम जो कुछ भी सुन रहे हो, वह अतीत की बातें सुन रहे हो। मैं जो कुछ भी कह रहा हूँ, उसमें तुम्हारा अतीत निरंतर हस्तक्षेप करके तुम्हें वे बातें सुनने से रोक रहा है, जो तुमसे कही जा रही हैं।

मैं इस बात की तुम्हें गारंटी दे सकता हूँ कि जब तक तुम प्रसन्नता की खोज करते रहोगे, तब तक तुम अप्रसन्न रहोगे। यह एक सच्चाई है। समाज इतना जटिल और इस तरह बना हुआ है कि तुम्हारे बचने का इसके अतिरिक्त कोई मार्ग नहीं है कि तुम उसे ही स्वीकार करो, जिस तरह का जीवन तुम्हारे आस-पास है और जिस तरह की मर्यादाएँ तुम्हारे ऊपर लाद दी गई हैं। हमें समाज की सच्चाइयों को स्वीकार करना चाहिए, चाहे हम उसे पसंद करें या नहीं। लेकिन यह वह नहीं है, जिसके बारे में हम बातें कर रहे हैं। जो बातचीत हम कर रहे हैं, वह इससे बिलकुल ही अलग है। तुम्हारे सभी संबद्ध ज्ञान और अनुभव, तुम्हारी सभी भावनाएँ और अनुभूतियाँ तथा सभी रोमानीपन पूरी तरह समाज की हैं, तुम्हारी अपनी नहीं। तुममें निजता है ही नहीं। तुम सैकेंड हैंड

व्यक्ति हो।

तुमसे पहले प्रत्येक स्त्री और परुष ने जो कुछ भी सोचा और अनुभव किया है, जब तुम इन सबसे स्वयं को पूरी तरह मुक्त कर लोगे, तभी तुम 'निज' (इंडीवीजुवल) बन पाओगे। ऐसा 'निज' चारों ओर घूम-घूमकर उन वस्तुओं को नष्ट नहीं करेगा जो समाज की है। वह समाज के साथ झगड़ा नहीं करेगा। वह न तो कभी किसी मंदिर या संस्था में जाकर गिड़गिड़ाएगा, और न उन पवित्र पुस्तकों को जलाएगा, जिन्हें मानव जाति ने बड़ी सावधानी के साथ तैयार किया है। वह विद्रोही नहीं होगा। सभी संग्रहीत ज्ञान, अनुभव और मानव जाति का दर्द तुम्हारे अंदर है। तुम्हें अपने अंदर एक विशाल होलिका जलानी होगी। तब तुम 'निज' बन सकोगे। इसके अतिरिक्त कोई दूसरा रास्ता नहीं है। समाज का निर्माण ही टकराव की नींव पर हुआ है और तुम ही समाज हो। इसलिए तुम हमेशा समाज के साथ टकराव की स्थिति में रहते हो। वह व्यक्ति, जो इस संग्रहीत परंपरा तथा मानवजाति के ज्ञान से मुक्त हो गया है, निश्चित रूप से उस समाज के लिए एक चुनौती बन जाता है। तुम, जो समाज के हिस्से हो, उसे बचाने या बदलने के प्रयास बंद करो। यहाँ तक कि तुम अपनी श्वांस तक को नहीं बदल सकते, तो भला समाज को क्या बदलोगे।

● **हम सभी अपनी निजी प्रसन्नता और मोक्ष की आकांक्षा से आक्रांत हैं। हममें से बहुत लोग सामाजिक और राजनीतिक दृष्टि से जागृत हैं। इसलिए एक नई विश्व व्यवस्था, एक अलग सामाजिक व्यवस्था के निर्माण की इच्छा रखते हैं, ताकि गरीबी, अन्याय तथा अन्य सामाजिक बुराइयों को ठीक किया जा सके। लेकिन आप इस तरह बातें कर रहे हैं मानो हम सब अपनी निजी समस्याओं और उद्देश्य में लगे हुए हैं। जबकि हममें से अधिकांश लोगों की सेवा करना चाहते हैं। हमारा अपना कोई स्वार्थ नहीं है, बल्कि एक अधिक मानवीय और सरल समाज बनाना चाहते हैं।**

□ तुम स्वयं को जैसे ही किसी रूप में बदलना चाहते हो, तुम्हें उसी समय यह लगता है कि तुम बदल नहीं सकते। तुम जिस 'परिवर्तन' की बात करते हो, वह तुम्हारे लिए एक रोमानी, फैंसी कूड़ा है। तुममें कभी बदलाव नहीं होता। तुम इस बदलाव के बारे में क्यों सोचते रहते हो। जब तक तुम किसी भी कारण से स्वयं को बदलना चाहते रहोगे, तब तक तुम पूरे विश्व को बदलने पर

जोर देते रहोगे। तुम एक अलग दुनिया चाहते हो, जहां तुम प्रसन्न रह सको। तुम्हारी केवल यही इच्छा है। तुम मानवता के बारे में बातें कर सकते हो, मानवता के प्रति चिंता दिखा सकते हो, मानवता के प्रति करुणा दिखा सकते हो, लेकिन ये सब बेकार के कूड़ा-करकट हैं...।

चूँकि तुम्हारी संस्कृति ने तुम्हारे अंदर यह भावना पैदा कर दी है, इसलिए तुम जब तक परिवर्तन के बारे में दृढ़ निश्चयी बने रहोगे, तब तक तुम असंतुष्ट रहोगे और एक अलग दुनिया की चाहत रखे रहोगे। तुम सचमुच में जो कुछ हो, जब उसे परिवर्तित करके कुछ अलग जानने की तुम्हारी आंतरिक इच्छा समाप्त हो जाएगी, तब समाज को बदलने की तुम्हारी सनक खत्म हो जाएगी। इसके बाद तुम समाज के साथ टकराव की स्थिति में नहीं रहोगे, चाहे वह समाज क्रूरता और दुःखों का ही समाज क्यों न हो। इस क्रूर समाज को बदलने के तुम्हारे सारे प्रयास इसे और अधिक क्रूर ही बनाते हैं। इसका यह मतलब नहीं कि 'मुक्त-व्यक्तित्व' समाज के प्रति उदासीन होता है। बल्कि तुम सभी समाज के प्रति उदासीन हो। तुम केवल वाग्विलास करते हो। इस बीच कुछ नहीं करते। यह दुःख की बात है.....।

● **लेकिन यह बहुत जरूरी है कि दुनिया में शांति हो.....।**

□ जब तक कि तुम्हारे अंदर शांति नहीं होगी, तब तक तुम्हारे आसपास की दुनिया में भी शांति नहीं हो सकती। तुम्हें शांति कब प्राप्त होगी—क्या अगले जीवन में? इसकी कोई संभावना नहीं है। प्रतीक्षा करो, शायद ऐसा हो जाए। लेकिन इसकी कोई गारंटी नहीं है कि तुम्हारा समाज शांतिपूर्ण होगा। वह शांतिपूर्ण हो ही नहीं सकता। जब तुम शांत हो जाओगे, तब यह समस्या ही समाप्त हो जाएगी।

● **इसका तो यह मतलब हुआ कि शांतिपूर्ण समाज केवल एक विचार ही है, जबकि दूसरों से हमारे संबंध काफी तनावपूर्ण रहते हैं। ऐसी स्थिति में हम इस आदर्श और यथार्थ की खाई को कैसे पाटें?**

□ तुम अपने आसपास के लोगों के साथ, समाज के साथ तथा सारी दुनिया के साथ अपने संबंध बनाने के प्रयास कर रहे हो। किन्हीं कारणों से सच्चे संबध अत्यंत कुरूप और भयंकर होते हैं। क्या तुमने इस बात पर ध्यान दिया है कि जब तक तुम्हारे ये संबंध तुम्हारी निजी प्रसन्नता को पूरा करते रहते हैं तब

तक उनमें कोई तनाव नहीं होता। प्रत्येक व्यक्ति इसी स्थिति में हैं। दूसरे से उसके संबंध तभी तक सद्भावपूर्ण होते हैं, जब तक कि वह उसकी प्रसन्नता के भाव को पूरा करता रहता है। साथ ही हम भी यही चाहते हैं कि हमारी प्रसन्नता स्थायी रहे। लेकिन वस्तु की मूल प्रकृति के अनुसार यह असंभव है। स्थायित्व जैसी कोई चीज होती ही नहीं। प्रत्येक वस्तु निरंतर परिवर्तित होती रहती है। प्रत्येक वस्तु प्रवहमान है। इसलिए तुमने उसकी निरंतरता को बनाए रखने के लिए संवेदनाओं के बारे में कई नाटकीय भावनाओं की खोज की है। इसलिए तुम हमेशा टकराव की स्थिति में रहते हो।

● **तो क्या हमें शुद्ध और सद्भावपूर्ण संबंधों की खोज को छोड़कर स्वयं को समझने में केंद्रित करना चाहिए?**

□ अपने आपको समझने की यह धारणा सबसे बड़ा माजक है, जो हर जगह के लोगों में व्याप्त है। यह केवल प्राचीनतम बुद्धिजीवियों और धार्मिक पुरुषों में ही नहीं, बल्कि आधुनिक वैज्ञानिकों में भी है। मनोवैज्ञानिक आत्मज्ञान जैसी बेकार की चीजों के बारे में बातें करना पसंद करते हैं। ये मूर्खतापूर्ण विचार हमे हमेशा इस तरह बताए जाते रहे हैं, मानो वे कुछ नए हों।

● **एक जैसे ही पुराने प्रश्नों का हर जगह उत्तर देते-देते आपको अरुचि हो जाती होगी।**

□ मैं पूरी दुनिया में गया हूँ। वहाँ के लोगों से मिला हूँ और बातचीत की है। पूरी दुनिया में बिलकुल एक जैसे ही लोग हैं। उनके प्रश्नों में कोई अंतर नहीं रहता। लेकिन मैं इससे कभी बोर नहीं होता। भला मैं बोर कैसे हो सकता हूँ? यदि मुझे ऐसी उम्मीद रहती कि मुझे हर जगह कुछ नया अच्छा मिलेगा और कुछ अलग प्रश्न पूछे जाएँगे, तब बोर होने की कुछ संभावना रहती। लेकिन चूँकि मुझे इस प्रकार की कोई भी उम्मीद नहीं होती, इसीलिए मेरे लिए बोर होना असंभव है। क्या तुम बोर हो गए हो? अपने आपको पाने के लिए तुम्हारे पास कोई रास्ता नहीं।

● **हाँ, मैं बोर हो गया हूँ, क्योंकि मैं दूसरों की तरह ही एक सामान्य आदमी हूँ। यह मेरे औसत दर्जेपन का ही परिणाम है, जो मेरे जीवन को इतना खाली और अरुचिपूर्ण बना रहा है।**

□ किसी दूसरे की तरह बनने या साधारण बनना बहुत कठिन है। औसत

दर्जे के बनने में बहुत अधिक ऊर्जा लगती है। लेकिन अपने जैसा बने रहना बहुत सरल है, क्योंकि इसके लिए तुम्हें कुछ करना नहीं पड़ता। किसी तरह के प्रयास की जरूरत नहीं होती। तुम्हें अपनी इच्छाओं को बदलना नहीं पड़ता। अपने जैसा बने रहने के लिए तुम्हें कुछ नहीं करना पड़ता। तुम्हारे अंदर जो इतना अरुचिपन और अशांति है, वह इसलिए है, क्योंकि तुम यह चाहते हो कि तुम जो कुछ भी कर रहे हो, उससे कुछ अधिक रुचिकर, अधिक अर्थपूर्ण और अधिक मूल्यवान काम करो। तुम ऐसा सोचते हो कि तुम जो कुछ भी कर रहे हो, वह बहुत अरुचिकर है और उससे कुछ अधिक मूल्यवान, शक्तिशाली और रोमांचकारी चीजें करने को होंगी। इस प्रकार ये सब बातें तुम्हारे जटिल ज्ञान का हिस्सा बन जाती हैं। तुम जितना अधिक अपने बारे में जानते चले जाते हो, उतना ही अधिक विनम्र और शक्तिशाली बने रहना कठिन होता जाता है। जब तक कि तुम कुछ जानते रहोगे, तब तक विनम्र बने रहना भला कैसे संभव है?

● **मेरे अंदर ऐसा कुछ है, जो इन सभी चीजों को बहुत कठिन समझ रहा है। ऐसा लगता है कि कोई भय है....।**

□ सभी भय अंततः मृत्यु के भय—शारीरिक मृत्यु की ओर ले जाते हैं। बात यह है कि तुम मृत्यु के भय को भूल जाना चाहते हो, ताकि तुम हमेशा बने रह सको। जब तक तुम भयभीत रहोगे, तब तक जीवन के अर्थ के बारे में चर्चा करने का कोई मतलब नहीं है। क्यों व्यर्थ के प्रश्न पूछते हो और जीवन को रहस्यपूर्ण बनाते हो? तुम्हें जीवन प्राप्त हुआ, क्योंकि तुम्हारे माता-पिता ने परस्पर भोग किया था। जीवन के अर्थ के बारे में मत सोचो, क्योंकि उससे कुछ भी प्राप्त नहीं होगा। इसका अपना ही अर्थ है, जिसे तुम कभी नहीं जान सकोगे। स्पष्ट है कि तुम्हारे लिए जीवन का कोई अर्थ नहीं है, अन्यथा तुम यहाँ ये प्रश्न नही पूछ रहे होते। सच तो यह है कि तुम जो भी पूछ रहे हो, वह सब अर्थहीन है। दूसरे की परवाह मत करो। यह पूरा विश्व तुम्हारा ही विस्तार है। तुम जो भी सोच रहे हो, और अनुभव कर रहे हो, दुनिया का प्रत्येक व्यक्ति वैसा ही सोच रहा है और अनुभव कर रहा है। उद्देश्य अलग-अलग हो सकते हैं, लेकिन उन उद्देश्यों को प्राप्त करने की तकनीक और उपकरण सभी के बिलकुल एक जैसे हैं। जीने का क्यों कोई अर्थ होना चाहिए? जैसे ही कोई बच्चा इस दुनिया में आता है, तो उसकी एक ही चिंता होती है और वह है—किस तरह जीवित रहा

जाए। बच्चे का पेट भरना तथा बड़े होकर दूसरे बच्चों को जनम देना ही जीवन का नियम है। जीवन स्वयं में ही एक अनुभव है। यही सब कुछ है। इसलिए तुम्हें उसके ऊपर कोई अर्थ लादने की जरूरत नहीं है।

● **केवल जीते रहना ही महत्त्वपूर्ण मालूम नहीं पड़ता। हमारे पास इच्छाएं हैं, उद्देश्य हैं, इसलिए हम ऐसा महसूस करते हैं कि जीवन जीने का कोई एक अर्थ होना चाहिए।**

□ जीवन जीने की बजाय तुम इस प्रश्न से आक्रांत हो कि "मैं जी क्यों रहा हूँ?" तुम्हारे अंदर यह भ्रम हमारी संस्कृति ने पैदा किया है, जो हमारी कई समस्याओं के लिए एकमात्र जिम्मेदार है। क्योंकि तुम्हारी मृत्यु होनी है, इसलिए तुम्हें यह चिंता है कि किस प्रकार जीया जाए। यदि तुम इस विचार से मुक्त होने में सफल हो जाओगे कि किस प्रकार एक अच्छा, उदात्त और सार्थक जीवन जीया जाए, तब तुम इस विचार के स्थान पर कोई दूसरा विचार ले आओगे। तुम्हें इस सत्य को स्वीकार करना चाहिए कि तुम इस जीवन के बारे में या कि इसे जीने के बारे में कुछ नहीं जानते।

● **यह जानते हुए भी कि हम जी नहीं रहे हैं, हम मृत्यु के भय से भयभीत हैं।**

□ जीवन का मतलब है—हृदय की धड़कन, अनेक शारीरिक क्रियाओं तथा अन्य प्रकार की जीवंत क्रियाओं का होना। जब ये सारी क्रियाएँ रुक जाती हैं, तब तुम उसे चिकित्सकीय मृत्यु कहते हो। फिर हम देखते हैं कि यह शरीर अनगिनत तत्त्वों में विभाजित हो जाता है और इस प्रकार वह जीवन का एक भिन्न रूप धारण करता है। लेकिन नए रूप में जीवन की यह निरंतरता तुम्हारे लिए स्वीकार्य नहीं है, क्योंकि तुम अपने वर्तमान स्वरूप को ही बनाए रखना चाहते हो। यदि तुम शरीर को जला देते हो, तब उसे कीड़े-मकौड़े खाते हैं। यदि तुम इसे पानी में बहा देते हो, तो वह मछलियों का भोजन बन जाता है। इस प्रकार जीवन निरंतर बना रहता है। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि उसका रूप क्या है। लेकिन उस मृत्य का अनुभव करने के लिए तुम नहीं रहोगे। तुम्हारे लिए मृत्यु का अर्थ केवल इस शरीर के शांत हो जाने से है।

● **यदि मैं सचमुच नहीं जी रहा हूँ, यदि मैं मृत्य के बारे में नहीं जान सकता, यदि मैं समाज की निंदा नहीं कर सकता, यदि मेरा जीवन सचमुच**

में अर्थहीन है, यदि मेहनत से प्राप्त मेरा आत्मज्ञान केवल अज्ञानता की अभिव्यक्ति है, तब फिर मेरे अपने मस्तिष्क द्वारा व्यक्त की गई यथार्थता.......।

☐ जिस मस्तिष्क के बारे में तुम बात कर रहे हो, वह कहाँ है ? क्या तुम मुझे उसे दिखा सकते हो ? वस्तुतः तुम्हारे मस्तिष्क और मेरे मस्तिष्क जैसी कोई चीज नहीं है। मस्तिष्क ठीक उसी प्रकार सभी जगह है, जिस प्रकार की साँस लेने वाली हवा। हमारे चारों ओर विचारों का मंडल है। यह न तो तुम्हारा है, और न ही मेरा। यह हमेशा बना रहता है। तुम्हारा दिमाग एक एन्टीना की तरह काम करता है और उसमें से उन संकेतों को चुनकर ग्रहण कर लेता है, जिसका वह उपयोग करना चाहता है। बस यही बात है। तुम उन संकेतों का प्रयोग संवाद स्थापित करने के लिए करते हो।

पहली बात यह है कि हमें अपने आपसे ही संवाद स्थापित करना है। हम इसकी शुरुआत ठीक उसी प्रकार करते हैं, जिस प्रकार एक बच्चा एक ही चीज को बार-बार दुहराता है। दूसरे से बातचीत करना थोड़ा जटिल है, जो इसके बाद आता है। समस्या उस समय खड़ी होती है, जब तुम विचारों की बाह्य माँगों की परवाह न करके लगातार अपने आपसे संवाद स्थापित करते हो। तुम हर समय अपने आपसे बातचीत करते रहते हो—"मैं खुश हूँ......मैं खुश नहीं हूँ......जीवन का अर्थ क्या है ?....." और यह चलता रहता है। यदि तुम्हारे अंदर बातचीत की यह प्रक्रिया रुक जाती है तो तुम्हें ऐसा लगता है कि तुम हो ही नहीं। इसका अनुभव तुम्हें होगा। यदि अंदर का यह एकालाप रुक जाए, तब दूसरे से संवाद स्थापित करना भी रुक जाएगा। इस प्रकार तुम दूसरे से संवाद इसलिए स्थापित करना चाहते हो, ताकि अपने आपसे किया जाने वाला संवाद बना रहे, तुम्हारा आंतरिक एकालाप बना रहे। इस तरह का संवाद केवल तभी संभव है, जब तुम पीढ़ी-दर-पीढ़ी से प्राप्त विस्तृत ज्ञान पर निर्भर हो जाते हो। मनुष्य ने विकास की प्रक्रिया में यह सीख लिया है कि कैसे ज्ञान के खजाने से अतिशीघ्र, सूक्ष्म और अधिक परिष्कृत विचारों को लिया जा सकता है। जबकि पशु ऐसा नहीं कर सकते। उनके पास शक्तिशाली अंतःप्रेरणाएं हैं। विचारों के द्वारा मनुष्य ने अन्य प्राणियों की अपेक्षा अपने को अधिक अस्तित्वपूर्ण बना लिया है। विचारों की यह क्षमता मनुष्य के लिए अभिशाप बन गई है।

● **चाहे आप इसे समाज की देन कहें, शुक्राणुओं की देन कहें, क्रमबद्ध विकास कहें या ग्रहों का प्रभाव कहें, ऐसा लगता है कि हम सब पूर्वग्रसित हैं और प्रकृति एवं स्वतंत्रतापूर्वक कार्य करने के लिए हम पूर्वग्रस्तता से मुक्त होना आवश्यक है। क्या ऐसा नहीं है ?**

□ मुझे यह पूरी तरह स्पष्ट नहीं है। यह असंभव है कि आप पूर्वग्रस्तता के बिना रह सकें। तुम चाहे जो कुछ भी करो, उसमें पूर्वग्रस्तता रहेगी ही। जिस अपूर्वग्रस्तता (अनकंडीशनिंग) की बात धार्मिक गुरु करते हैं, वे व्यर्थ की बातें हैं। स्वयं को अपूर्वग्रस्तता बनाने की प्रक्रिया धार्मिक व्यापार के बाजार में बेचे जाने वाली एक वस्तु है। इसकी कोई मान्यता नहीं है। तुम्हें खुद इसका एहसास हो जाएगा। तुम जो कुछ भी करते हो, वह पूर्वग्रस्त होता है। अपने आपको अपूर्वग्रस्त बनाने का कोई अर्थ नहीं है। जिस चीज से तुम्हें स्वतंत्र होना है, वह यह है कि तुम्हें पूर्वग्रस्तता से मुक्त होने की इच्छा से ही स्वतंत्र होना है। पूर्वग्रस्त होना एक ज्ञानरहित स्थिति है, जिसके अनुसार तुम वातावरण के अनुरूप अनुकूल प्रतिक्रिया व्यक्त करने के योग्य बनते हो। यह तुम्हारी फैंटेसी, कल्पना–शक्ति एव मानसिक शक्ति से पूरी तरह असंबद्ध है।

● **यदि खोज, आत्मज्ञान तथा अपूर्वग्रस्तता मुझे मेरे मूल भ्रमों के निवारण में सहायता नहीं करते, तब शायद विज्ञान अपने तकनीकी या जिनेटिक इंजीनियरिंग के माध्यम से कुछ सहायता कर सके....।**

□ यहाँ तक कि जो वैज्ञानिक जेनेटिक इंजीनियरिंग में लगे हुए हैं, वे भी मानवता के लाभ के लिए नहीं हैं। यदि उन्हें सफलता मिल जाएगी, तो उस पर राष्ट्र अधिकार जमा लेंगे। राष्ट्र उसका उपयोग प्रत्येक वस्तु और प्रत्येक व्यक्ति को नियंत्रित करने के लिए करेंगे। पहले विचारों को बदलने में जो सदियों लगा करते थे, वह अब आसान हो जाएगा। जिनेटिक इंजीनियरिंग का एक साधारण-सा इंजेक्शन लगाकर राष्ट्र अपने नागरिकों को खून के प्यासे सैनिकों, बुद्धिहीन नौकरशाहों या जिस तरह के भी लोग वे चाहेंगे, प्राप्त कर लेंगे।

● **मुझे ऐसा लग रहा है कि हम इसे जटिल बना रहे हैं। क्या ऐसा नहीं है कि हम अपने विचारों में बहुत छिछले हैं और हमारा ज्ञान क्षेत्र बहुत छोटा है?**

□ इसे भूल जाओ। किसी भी घटना के बारे में तुम्हारे कार्य मनुष्य के हितों को नष्ट करने वाले होते हैं। ये कार्य विचारों से उत्पन्न होते हैं, जो वस्तु

है। जीवन को अपने मृत विचारों के ढाँचे में फिट बैठाने की जबरन कोशिश करना ही तुम्हारा मूल संकट है। तुम जिसके पक्ष में खड़े होते हो, जिस पर विश्वास करते हो, जो अनुभव करते हो और जो चाहते हो, वे सभी विचारो के परिणाम हैं। और विचार ध्वंसात्मक होते हैं, क्योंकि विचार एक संरक्षक मैकेनीज़्म से अधिक कुछ नहीं होता, जो किसी भी कीमत पर अपने हितों की रक्षा करना चाहता है। फिर भी क्या सचमुच विचार जैसी कोई चीज होती है? क्या तुम अभी कुछ सोच रहे हो? तुम्हारे पास जानने का कोई तरीका नहीं है।

● **लेकिन विचारों को पूरी तरह जानना एक अतिमानवीय कार्य है। क्या ऐसा नहीं है? सभी धार्मिक विचारों ने हमारे सामने कमोवेश एक ऐसे अति मानवीय चरित्र को प्रस्तुत किया है, जो विश्व के विचारों से परे रहकर एक महान उच्चता तक पहुँचा है। लेकिन हम लोग साधारण मनुष्य हैं, जिनमें उतनी विशालता, निर्भयता या शौर्यपूर्ण कार्य करने की क्षमता नहीं है।**

□ यदि तुम 'शुद्धतम', 'देवत्व', 'धार्मिक' तथा 'अतिमानवीय' लक्ष्य आदि से स्वयं को मुक्त कर लोगे, तब मनुष्य के अंदर प्राकृतिक तौर पर जो कुछ है, वह अभिव्यक्त होना प्रारंभ हो जाएगा। तुम्हारे सामने एक आदर्श मनुष्य या नारी प्रस्तुत की गई है और प्रत्येक को उसी साँचे में ढालने की कोशिश की जा रही है। यह असंभव है। इससे प्रकृति का कोई लेना-देना नहीं है। प्रकृति पूरी तरह एक दूसरे से अलग और अनोखे व्यक्तियों की रचना करने में व्यस्त है। जबकि संस्कृति उन सबको एक ही साँचे में ढालने में लगी हुई है। यह विचित्र स्थिति है।

● **तो क्या आप वह अद्‌भुत व्यक्ति हैं, जैसा कि कुछ लोग दावा करते हैं?**

□ मैं समझता हूँ कि मैं अपने बारे में जानता हूँ। लेकिन मैं इस बात की परवाह नहीं करता। किसको परवाह है। मेरे पास जानने का कोई रास्ता नहीं है और यदि मैंने ऐसा किया, तो वह संसार के लिए दुखद होगा। वे मुझे एक आदर्श बना लेंगे और एक निश्चित तरीके से जीने की कोशिश करने लगेंगे। इस प्रकार मानव जाति के लिए एक संकट खड़ा कर देंगे। दुनिया में वैसे ही बहुत गुरु हैं। उनमें और एक की वृद्धि क्यों की जाए।

● यदि आप उपदेशक या गुरु नहीं हैं, तो फिर हम लोगों से बात क्यों कर रहे हैं ? हम लोगों को ऐसा लगता है कि आप कुछ इस तरह के निर्देश दे रहे हैं, आप कुछ ऐसी शिक्षाएँ दे रहे हैं, जो मानव जाति के लिए उपयोगी होंगी।

□ मैं केवल अपनी बात कह रहा हूँ। इसके बाद चला जाऊँगा। कोई इसे सुनता है या नहीं, मुझे इस बात की परवाह नहीं है। मैं किसी भी एक काल्पनिक स्थिति के बारे में नहीं सोचता। यदि मेरे पास कोई नहीं आता, और बात नहीं करता, तो भी ठीक है। मुझ पर विश्वास करो कि मेरा बातचीत करना एक संयोग है, किसी को मुक्त करना नहीं। मैं यहाँ पिछले तीस वर्षों से आ रहा हूँ। यदि अभी तुम यहाँ नहीं होते, तब हो सकता था कि मैं टी.वी. देख रहा होता, या कोई आपराधिक उपन्यास पढ़ रहा होता। मेरे लिए ये सब एक हैं। मैं कोई भी चीज बेच नहीं रहा हूँ। मैं केवल सरल रूप में यह बता रहा हूँ कि हम जिस गति से जिनेटिक इंजीनियरिंग तकनीकी की ओर बढ़ रहे हैं, वह राजनेताओं के हाथ में पड़कर मनुष्य को पूरी तरह नियंत्रित और वशीभूत करने के काम आएगी।

● यदि सचमुच यह खतरा इतना बड़ा है, तो जैसा कि आपने संकेत दिया था कि आपके साथ घटा था.....

□ नहीं। इस प्राकृतिक स्थिति का उपयोग किसी अन्य जेहाद द्वारा नहीं किया जा सकता। न ही मेरी इस बात में कोई रुचि है कि मैं अपने आपको मानव जाति का मसीहा बनाऊँ। मेरी रुचि किसी की भी उत्कंठा को शांत करने में नहीं है। वैज्ञानिक माइक्रोबायोलाजी, ग्रेंडुलर और ब्रेन साइकोलोजी में अद्भुत उन्नति कर रहे हैं। बहुत जल्दी ही उनके पास ऐसे तरीके आ जाएँगे, जबकि वे मेरे अंदर घटी हुई मनोवैज्ञानिक घटना को समझ लेंगे। मैं व्यक्तिगत रूप से इसके अतिरिक्त कोई भी निश्चित वक्तव्य नहीं दे सकता कि ये सारी प्रणालियाँ स्वचालित हैं। वहाँ विचारों का कोई भी हस्तक्षेप नहीं है। विचार वहाँ केवल अपने काम करते हैं, उससे अधिक कुछ नहीं। जब परिस्थितियों की माँग होती है, तब वे अस्थायी रूप से गतिशील हो जाते हैं। लेकिन वे ऐसा कुछ नहीं करते, जो वस्तुओं को बदलने वाला हो। बस यही है। वह ऊर्जा ही है, जो इस संसार को स्वस्थ एवं ज्ञानवान बना सकती है। लेकिन तुम हो कि उस ऊर्जा को अपने से अलग हटाकर किसी दूसरे की तरह बनने के प्रयास में नष्ट कर रहे हो। तब

तुम्हारे पास यह निश्चितता होगी, जो मेरे या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा दी नही जा सकती।

मैंने अपने लिए स्वयं ही इस बात की खोज की है कि हमें स्वतंत्रता, आनद और ब्रह्म के बारे में जो भी बताया गया है, वह झूठा है। दुनिया की कोई भी शक्ति मुझे छू नहीं सकती। यह मुझे 'सुपीरियर' नहीं बनाती। स्वयं को 'सुपीरियर' या 'इन्फीरियर' समझने के लिए तुम्हें स्वयं को विश्व से अलग करना पड़ता है। मै विश्व को अलग वस्तु के रूप में नहीं देखता, जैसा कि तुम देखते हो। विश्व के बारे में मेरा जो भी ज्ञान है, वह केवल तभी सामने आता है, जब इसकी जरूरत होती है। अन्यथा मैं इसके बारे में सोचता भी नहीं। न जानने की स्थिति ही हमारी स्वाभाविक स्थिति होती है।

● **हालाँकि आप अपने बारे में कोई दावा नहीं करते। इसके बावजूद मेरे जैसे सुनने वाले लोग आप जो भी कहते हैं, उसके बारे में एक दृढ़ता महसूस करते हैं। क्या यह इस बात का संकेत नहीं है कि सच में आप एक मुक्त व्यक्ति हैं ?**

□ जहाँ तक मेरा प्रश्न है, मेरे अंदर यह बात पूरी तरह अनुपस्थित है कि यह वह है, तुम खुश हो, तुम नाखुश हो, तुम ज्ञानी हो, तुम अज्ञानी हो। न तो तुम्हारे और न ही मेरे पास ऐसा कोई रास्ता है कि हम जान सकें कि हम मुक्त व्यक्ति हैं। कोई भी मुझे यह नहीं कहता कि मैं मुक्त व्यक्ति हूँ। तुम्हारे मामले मे कुछ चाहने तथा प्रश्न करने की प्रक्रिया निरंतर जारी रहती है, चाहे वह कुछ भी क्यों न हो। जबकि मुझ में विचार तभी क्रियाशील होते हैं, जबकि बाहर से उसकी जरूरत पड़े। इसके बाद भी मेरे ज्ञान की प्रक्रिया शीघ्र होती है और मैं फिर से एक बड़े प्रश्नवाचक चिह्न की तरह वापस आ जाता हूँ। जबकि एक ही वस्तु को बार-बार अनुभव करने की निरंतर माँग के कारण तुम्हें एक ही चीज को मजबूरन बार-बार सोचना पड़ता है। मुझे इसका कोई कारण नजर नहीं आता कि एक ही चीज को बार-बार दोहराया जाए। जहाँ तक मेरा प्रश्न है, मेरी इस क्रियाशीलता से अलग कुछ भी नहीं है। ऐसा कोई नहीं है, जो कहे कि "यह यथार्थ है।" वस्तुतः यथार्थता जैसी कोई चीज है ही नहीं। संस्कृति, समाज और शिक्षा ने हम पर यथार्थता को लादा है। मुझे गलत मत समझो। विचारों का महत्त्व क्रियाशीलता में है। अगर हम उस दुनिया को स्वीकार नहीं करते, जिस

तरह का वह हम पर लादा गया है, तब हमारा अंत एक पागल व्यक्ति की तरह होगा। हमें इसे सापेक्ष रूप में स्वीकार करना होगा। अन्यथा ऐसा कोई रास्ता नहीं है कि आप किसी भी वस्तु की यथार्थता का अनुभव कर सकें। यह विचार ही है, जिसने तुम्हारे शरीर, तुम्हारे जीवन, तुम्हारी निद्रा तथा तुम्हारी सभी प्रकार की कल्पनाओं की यथार्थता का निर्माण किया है। तुम इस यथार्थता का अनुभव विचारों के द्वारा करते हो। अन्यथा तुम्हारे पास यह जानने का कोई रास्ता नहीं है कि तुम्हारे पास शरीर है कि तुम जीवित हो, कि तुम जागृत हो। यह सब ज्ञान के कारण ही है। किसी भी वस्तु की यथार्थता एक ऐसी वस्तु है, जिसे कोई व्यक्ति नहीं जान सकता।

● **यह बातचीत हमें बहुत रोचक लगी। आपका बहुत-बहुत धन्यवाद।**

□ आप सबको भी धन्यवाद।

हमने बनाया है यह जंगली समाज।

● मै पिछले दिनो से आपका किताब पढ रहा था उसकी समाप्ति मेरे इस अनुभव के साथ हुई कि आपके सभी तर्क आशा की ओर नहीं बल्कि अनिवार्य रूप से मानवीय विषाद और निराशा की ओर ले जाते है क्या मै सही हूँ ?

□ मूलतः मुझे मनुष्य का कोई भविष्य दिखाई नहीं देता। इसका मतलब यह नहीं है कि मैं दु:खों का प्रवक्ता हूँ। बल्कि उसकी बजाय बात यह है कि जो भी वस्तु मनुष्य में विभाजन से पैदा होगी, वह अंततः उसे तथा उसके अन्य रूपों को नष्ट ही करेगी। मैं इसलिए शांतिपूर्ण विश्व का न तो स्वप्न देखता हूँ और न ही आशा रखता हूँ।

● क्या ऐसा अनिवार्य रूप से हो रही हिंसा के कारण है ?

□ यह इसलिए, क्योंकि वह अपरिहार्य युद्ध तुम्हारे अंदर हो रहा है। बाहर हमें जो सैन्य-युद्ध दिखाई देता है, वह तुम्हारे अंदर हर समय हो रहे युद्ध का ही बाह्य विस्तार है। तुम्हारे अंदर यह युद्ध लगातार क्यों हो रहा है ? यह इसलिए, क्योंकि तुम हेशा शांति की खोज करते रहते हो। तुम शांति की प्राप्ति के लिए जो उपकरण अपनाते हो, वही तुम्हारे लिए युद्ध है।

मनुष्य के अंदर पहले से ही शांति मौजूद है। उनकी खोज करने की आवश्यकता नहीं है। यह जीवित शरीर असाधारण रूप से शांतिपूर्ण तरीके से अपना काम कर रहा है। सत्य के लिए व्यक्ति की खेज ठीक वैसी ही है, जैसी कि शांति के लिए। ऐसा करके वह शरीर के अंदर पहले से ही निहित शांति को अव्यवस्थित और खंडित कर रहा है। इस प्रकार हमारे पास जो मनुष्य बच जाता है, वह युद्ध से भरा हुआ रहता है।

युद्ध पर आधारित शांतिपूर्ण विश्व की खोज अंततः केवल युद्ध की ओर ही ले जाएगी। मनुष्य को नर्क की ओर ले जाएगा।

● मार्क्स सहित बहुत से दार्शनिक कहते हैं कि युद्ध और संघर्ष अनिवार्य हैं।

□ हाँ, ये अनिवार्य हैं। मार्क्स और अन्य दार्शनिकों ने यह विचार दिया है कि क्रिया से प्रतिक्रिया होती है और इसके बाद इन दोनों में समन्वय की स्थिति आती है। लेकिन एक व्यक्ति का समन्वय दूसरे व्यक्ति की क्रिया बन जाती है और वह एक नई प्रतिक्रिया को जन्म देती है। इस प्रकार यह क्रम चलता रहता

है। ये सब दार्शनिक खोजें हैं, जो जीवन को कुछ व्यापकता और दिशा देते हैं। जबकि मैं यह कहता हूँ कि जीवन की शुरुआत मनमाने ढंग से होती है, अचानक संयोगवश होती है। जीवन को एक दिशा देने का प्रयास इसे केवल 'फ्रस्ट्रेशन' की ओर ले जाता है। जीवन के लिए 'दिशा' जैसी कोई चीज नहीं होती।

लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि प्रक्षेपास्त्र छोड़े जा चुके हैं और बुरे दिन आने ही वाले हैं। अपने अस्तित्व की रक्षा की अंत:प्रेरणा व्यक्ति के अंदर बहुत गहरे रूप से जमी हुई है। मैं कहना यह चाह रहा हूँ कि शांति, करुणा और प्रेम जैसी मीठी बातों ने मनुष्य को तनिक भी नहीं छुआ है। ये सब बेकार की बातें हैं।

भय ही है, जो लोगों को इकट्ठा रखता है। एक-दूसरे की समाप्ति के आतंक का मनुष्य के ऊपर बहुत जबरदस्त और पुराना प्रभाव है। बिलकुल ऐसा ही होगा, यह मैं नहीं जानता।

● **एक बड़ी समस्या यह पैदा हो गई है कि टेक्नोलोजी कहती है कि यदि युद्ध हुआ, तो केवल मनुष्य ही नहीं, बल्कि हर तरह के जीव समाप्त हो जाएँगे।**

☐ जिस दिन व्यक्ति में यह आत्मचेतना जागृत हो जाएगी कि वह इस धरती पर मौजूद सभी प्राणियों से श्रेष्ठ है, उसी दिन वह पूरी तरह आत्म-विनाश के रास्ते की ओर चल पड़ेगा। यदि मनुष्य जाति नष्ट हो गई, तो शायद कुछ भी नुक्सान नहीं होगा। सदियों से वह विनाश के जो ढेर लगाता जा रहा है, उससे खतरा बढ़ता जा रहा है। जब वह यहाँ से जाएगा, तो वह अपने साथ इन सभी चीजों को भी लेता जाएगा।

● **अपने आप पर तथा विश्व पर शासन करने की एक मूल इच्छा कहाँ से पैदा होती है?**

☐ यह धर्म में बताया गया है कि व्यक्ति ब्रह्मांड का केंद्र है। उदाहरण के लिए यहूदी और ईसाई मानते हैं कि प्रत्येक वस्तु का निर्माण मनुष्य के हित के लिए किया गया है। यही कारण है कि मनुष्य प्रकृति का अब अंग नहीं रह गया है। उसने प्रत्येक वस्तु को प्रदूषित कर दिया है, नष्ट कर दिया है, क्योंकि वह विश्व की समस्त रचना के केंद्र में रहना चाहता है।

● **लेकिन यदि वह ब्रह्मांड के केंद्र में न भी रहे, तो भी उसे कहीं-न-कहीं तो रहना ही होगा। पतन व्यक्ति के आरंभ का प्रतिनिधित्व करता है, न कि उसके अंत का।**

☐ पतन का यह सिद्धांत ईसाइयों का दिया हुआ सिद्धांत है। इसका कोई अर्थ नहीं है। संपूर्ण ईसाई परंपरा 'ओरिजिनल सिन टू दि हिल्ट' के विचारों का शोषण करती है, जिससे कत्लेआम, खून-खराबा और उसी तरह की भयंकर हिंसाएं होती हैं।

● **अच्छा, पूर्वी विचारक 'शांत-केंद्र' की बात करते हैं, जिसे ध्यान के द्वारा पाया जा सकता है.....।**

☐ मैं आत्म, मस्तिष्क और मनोविज्ञान के अस्तित्व और विचार पर ही शंका रखता हूँ। यदि तुम आत्म के विचारों को स्वीकार करते हो, तब तुम आत्मज्ञान प्राप्त करने के लिए स्वतंत्र हो। लेकिन हम कभी भी आत्म के विचार पर प्रश्न उठाते ही नहीं। क्या हम ऐसा करते हैं?

● **वह आत्म क्या है, जिसके बारे में आप बात कर रहे हैं?**

☐ इस आत्म के बारे में तुम्हारी रुचि है, मेरी नहीं। यह चाहे जो कुछ भी हो, लेकिन जब तक मनुष्य जीवित रहेगा, तब तक यह उसके लिए सबसे महत्त्वपूर्ण वस्तु होगी।

● **मेरा अस्तित्व है, इसलिए मैं हूँ। क्या ऐसा ही है?**

☐ तुमने यहाँ पूछे गए मूल प्रश्न के बारे में ही कभी शंका नहीं की। तुम यही कहते हो कि ऐसा मैं सोचता हूँ, इसलिए मैं हूँ। यदि तुम नहीं सोचोगे, तो तुम्हारे मन में यह बात कभी नहीं आएगी कि तुम जीवित हो या मृत। लेकिन चूँकि हम हर समय सोचते रहते हैं, इसलिए हमारी यह सोच भय पैदा करती है, और इसी भय के कारण सभी अनुभव उत्पन्न होते हैं। आंतरिक और बाह्य दुनिया; दोनों की शुरुआत विचारों से होती है। तुम जो भी अनुभव करते हो, वे विचार से पैदा होते हैं। इसलिए तुम जो भी अनुभव करते हो या जिसका अनुभव करते हो, वह भ्रम है।

स्व-उत्पन्न विचार स्व-केंद्रित व्यक्तियों को जन्म देते हैं। बस यही है। इस पर आधारित सभी संबंध निश्चित रूप से मनुष्य के लिए दुःख पैदा करते हैं। ये सब झूठे संबंध हैं। जहाँ तक तुम्हारा संबंध है, वहाँ इस तरह के संबंधों का

कोई अस्तित्व नहीं है। इसके बाद भी समाज केवल संबंधों की ही माँग नही करता, बल्कि स्थायी संबंधों की मांग करता है।

● **क्या आप अपने आपको अस्तित्ववादी समझते हैं ?**

□ नहीं। मैं ऐसा नहीं सोचता कि तुम मुझ पर कोई लेबल चिपका सकते हो। अस्तित्ववादी निराशा और निरर्थकता की बात करते हैं। लेकिन वे कभी भी सही रूप में निराशा और निरर्थकता को पकड़ नहीं पाते। उनके लिए निराशा एक अमूर्त वस्तु है।

ये सभी अमूर्त धारणाएँ हैं, जिन पर लोगों ने एक अभूतपूर्व दार्शनिक ढांचा खड़ा किया है। इन सबके बारे में इतना ही है। मैं जिस आत्मकेंद्रित क्रियाशीलता की बात करता हूँ, वह एक स्वायत्त, स्वचालित आत्म-अमरता के मेकेनिज्म की बात है। यह उनसे बिलकुल भिन्न है, जो सिद्धांत ये बताते हैं।

● **आपका मतलब आत्म-रक्षक अमरता (सेल्फ सर्वाइव्स मोर्टालिटी) से है ?**

□ नहीं। यहाँ आत्म का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। इसलिए अमरता का भी प्रश्न कैसे उठ सकता है।

● **'परे' का क्या अर्थ है। क्या 'परे' जैसी कोई वस्तु है ?**

□ यह अमरता है, जो नश्वरता को जन्म देती है। यह ज्ञात है, जो अज्ञात को जन्म देती है। यह समय है, जो समयातीत को जन्म देता है। यह विचार है, जो शून्यता को जन्म देता है।

● **क्यों ?**

□ क्योंकि विचार अपने चरित्र से ही लघु जीवन वाला है। इसलिए जब भी विचार पैदा होते हैं, तब तुम पैदा होते हो। लेकिन तुम एक ही वस्तु का बार-बार अनुभव करने की निरंतर माँग करके उस विचार में कुछ-न-कुछ जोड़ते जाते हो और इस प्रकार विचारों की झूठी निरंतरता बनती चली जाती है। किसी चीज का अनुभव करने के लिए ज्ञान की जरूरत होती है। यह ज्ञान पीढ़ी-दर-पीढ़ी मनुष्य के विचार, अनुभव एवं संवेदनाओं की संपूर्ण विरासत का संग्रह है।

जिस प्रकार हम सभी एक ही हवा में साँस लेते हैं, ठीक उसी तरह अपने काम के लिए अपने आसपास के एक से ही विचार-मंडल से विचार लेते हैं। यही सब कुछ है। मनुष्य का यह आग्रह कि विचार निरंतर बने रहने चाहिए, उस

विचार की प्रकृति को नकारना है, जो लघुजीवी है। विचार ने अपने लिए एक भिन्न लक्ष्य निर्धारित किया है। यह अपने लिए एक अलग सामानांतर अस्तित्व बनाने में बहुत सफल रहा है। अज्ञात, परे तथा अमरता को स्वीकार करके इसने अपनी निरंतरता को बनाए रखने का रास्ता तैयार कर लिया है। समयातीत नहीं होता, केवल समय होता है। जब विचार काल का निर्माण करता है, तब वहाँ स्थान का निर्माण हो जाता है। इस प्रकार विचार स्थान भी हैं। विचार वस्तु का निर्माण करता है। यदि विचार नहीं है, तो वस्तु भी नहीं है। विचार जीवन की अभिव्यक्ति या उसका साकार रूप है। लेकिन विचार से कोई अलग वस्तु बनाना, उस पर जीवन को थोप देना और बाद में उससे भविष्य के लिए अबाधित निरंतरता की रचना करना, यह मनुष्य की त्रासदी है।

● **लेकिन यदि विचार वस्तु का निर्माण कर सकते हैं, तब आप चमत्कार की किस प्रकार व्याख्या करेंगे कि साईं बाबा जैसे लोग हवा से घड़ी पैदा कर देते हैं।**

□ यह संभव ही नहीं है। साई बाबा एक जादूगर है। वह स्विटजरलैंड की घड़ियाँ पैदा करता था। लेकिन जब भारत सरकार ने उन घड़ियों पर आयात शुल्क लगा दिया, तब तुरंत बाद ही वह भारतीय घड़ियाँ पैदा करने लगा। कुछ दिनों पहले मैंने टेलविजन पर एक आदमी देखा था, जो तुम्हारे पलक के झपकते ही जेट विमान बना सकता है। साईं बाबा जादू से घड़ी बनाता है। फिर वह इसे अपने शिष्य को देकर लोगों की प्रशंसा लूटता है। यह सब सही दिखाई देता है। लेकिन ये सब केवल खिलवाड़ हैं। मुझे ये सब चीजें मज़ाक लगती हैं। भला तुम कैसे इन्हें गंभीरता से ले सकते हो?

● **ठीक है। तब फिर आप किस बात को गंभीरता से लेते हैं—जीवन को, मृत्यु को या आनंदयुक्त जीवन को?**

□ मैं नहीं समझता कि जीवन के इन प्रकारों का अस्तित्व किसी भी ग्रह पर है। मैं यह नहीं कह रहा हूँ कि जीवन है ही नहीं। मेरे कहने का मतलब यह है कि वहाँ जीवन हमारी तरह नहीं है। जीवन के विभिन्न प्रकारों तथा दूसरी दुनिया में उसके अस्तित्व की हमारी कल्पना जीवन को विस्तृत करने की हमारी इच्छा का ही एक रूप है। विचार अपनी निरंतरता को बनाए रखने का प्रयास करता है, इसलिए वह भविष्य की संभावनाएं देखता है और इसके लिए अनजान

दुनिया ही सबसे सरल रास्ता है। तुम्हारे विचार ही यह निश्चित करते हैं कि परिपक्व होने के बाद तुम क्या बनोगे।

● **जो आप कह रहे हैं, वह जे. कृष्णमूर्ति के विचारों के करीब है। वे कहते हैं कि मनुष्य का संचित ज्ञान ही परंपरा है और इसके द्वारा वह अपनी निरंतरता और वैधानिकता को बनाए रखता है। क्या आप इस पर विश्वास नहीं करते?**

□ नहीं, मैं यह नहीं समझता कि मैं जो कुछ कह रहा हूँ, वह किस प्रकार इन विचारों से मिलता है। वे निष्क्रिय सचेतता (पैसिव अवेयरनेस) की बात करते हैं। वे खोज की यात्रा और मनोवैज्ञानिक रूपांतरण की बात करते हैं। साथ ही स्कूल और संस्थान खोलने की बात करते हैं। ये सारी गतिविधियाँ तुम्हे स्वतंत्र नहीं करतीं, बल्कि तुम्हारे विचारों एवं परंपराओं को और सुदृढ़ बनाती है।

● **क्या विचारों की स्वतंत्रता जैसी कोई चीज है? क्या वास्तव में कोई स्वतंत्रता है?**

□ नहीं। मनुष्य को कार्य करने की कोई स्वतंत्रता नहीं है।

● **क्या इसका कोई उपाय नहीं है? क्या अपनी आत्मा के बारे में विचार करने पर, ध्यान करने पर भी नहीं? क्या योग में भी नहीं? यहाँ तक कि क्या कुंडलिनी को जागृत करने पर भी नहीं? क्या श्रम पर विजय प्राप्त करने पर भी नहीं?**

□ नहीं। तुम ये सारे उपाय कर लो, लेकिन इससे तुम्हें कोई स्वतंत्रता नहीं मिलेगी। इससे तुम केवल अपने शरीर का संतुलन ही खराब करोगे। इससे तुम अपने शरीर में अप्राकृतिक परिवर्तन लाओगे, जो शरीर के लिए नुकसानदेह है। इससे अधिक कुछ नहीं होगा। ऐसा कुछ नहीं है, जिससे तुम इसकी दिशा को बदल सको।

● **क्या परंपरा से थोड़ा भी अलग नहीं हटा जा सकता? यदि कोई अपने कार्यों को अपने विचारों से अलग कर ले, तब क्या वह व्यक्ति अपने कार्यों के नतीजे के बारे में चिंतित हुए बिना और बिना अपराधबोध से ग्रसित हुए काम कर सकेगा? हमारे कर्मों को कुछ नया करने के लिए स्वतंत्र होना चाहिए।**

□ किसलिए? क्या केवल अपनी अदम्य शक्ति की खोज के लिए? विचार व्यर्थ ही सम्मोहित करते हैं, इससे इनकार नहीं किया जा सकता। यह हमेशा रहता ही है।

● **कुछ साधु-संत इस बात पर जोर देते हैं कि हमारे केन्द्र में ऐसी सूक्ष्म ऊर्जा है, जिसे ध्यान तथा योग आदि कुछ आध्यात्मिक क्रियाओं के द्वारा मुक्त किया जा सकता है।**

□ किसी एक वस्तु पर केंद्रित करने के चक्कर में तुम अन्य सभी को रोक दोगे। ऐसा करके तुम अपने आसपास के स्वाभाविक जीवन के प्रवाह से अपने आपको अलग कर लोगे। तुम एक सामान्य चुंबकीय क्षेत्र के एक हिस्से हो और वह विचार ही है, जो तुम्हें दूसरों से अलग करता है। तुम्हें केवल अपनी ही प्रसन्नता और अप्रसन्नता की चिंता रहती है।

● **क्या यह एक अपरिहार्य सत्य नहीं है कि हम सभी लोग एक व्यक्तिनिष्ठ दुनिया में जीते हैं और वस्तुनिष्ठ दुनिया को किसी ने नहीं देखा है। यदि हम किसी एक टेबल को देखते हैं, तब हममें से प्रत्येक उसमें कुछ अलग-अलग देखता है।**

□ टेबल एक वस्तु बिलकुल नहीं है। सच तो यह है कि जब तुम टेबल को टेबल के रूप में पहचानते हो, तब वह टेबल एक प्रश्न बन जाता है। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि तुम और मैं उसे थोड़ा अलग-अलग ढँग से देखकर उसकी अलग-अलग व्याख्या करते हैं। इससे भी कोई फर्क नहीं पड़ता कि जब मैं कमरे को छोड़ता हूँ, तब वहाँ टेबल है या नहीं। दार्शनिक इसके बारे में बात करते चले जाते हैं। यह सब व्यर्थ है। तुम किसी चीज को देखते हो और दूसरे से अलग ढँग से उसका अनुभव करते हो। बस इतना ही है। यहाँ तुम्हारे अपने सापेक्ष अनुभव के सिवाय कुछ नहीं होता और यही तुम्हारा सत्य है। वस्तुनिष्ठता जैसी कोई चीज होती ही नहीं। ऐसी कोई भी वस्तु नहीं है, जिसका अस्तित्व बाहर अथवा तुम्हारे मस्तिष्क से अलग हो।

● **यहाँ तक कि दूसरे के लिए भी? क्या उनके अनुभव पूरी तरह अपने मानसिक चिंतन से प्रभावित होते हैं? क्या आपकी पत्नी या आपके पड़ोसी एक मनोवैज्ञानिक तत्त्व भर हैं?**

□ यदि मैं यह कहता हूँ कि मेरा अस्तित्व है, तो स्वाभाविक है कि उनका

भी अस्तित्व है। लेकिन मै इस पर प्रश्नचिह्न लगाता हूँ। क्या मेरे पास ऐसा कोई रास्ता है कि मैं अपने अस्तित्त्व की सत्यता का अनुभव कर सकूँ? सचमुच मेरे पास इसे जानने का कोई तरीका नहीं है कि मैं जीवित हूँ या मृत। मैं एक डॉक्टर के पास जा सकता हूँ, जो मेरी जाँच करेगा, मेरा बुखार नापेगा, मेरी नाड़ी देखेगा, मेरा रक्तचाप देखेगा और कहेगा कि सभी चीजें ठीक हैं। इस दृष्टि से मैं जीवित घोषित हो जाऊँगा। लेकिन हमारे पास अपना ऐसा कोई तरीका नहीं है कि हम स्वयं अपने जीवित होने का अनुभव कर सकें।

● **ऐसा किया जा सकता है कि आप अपने को काट लें, खून निकलने लगेगा और आपको दर्द का अनुभव होगा। यदि आप शादी कर लें, तब आप दुःख भोगेंगे (हँसी)......**

☐ हाँ। लेकिन यहाँ दो बातें हैं। शरीर दर्द का अनुभव करता है और ज्ञान तुमसे कहता है कि ''यह रक्त है, या दर्द है'' आदि। लेकिन ऐसा कोई नहीं है, जो इस दर्द का अनुभव करता हो। उस समय कोई नहीं होता, जो तुमसे बातें कर रहा हो। ऐसा कहकर मैं कोई रहस्यवादी वक्तव्य नहीं दे रहा हूँ। बात करना एक मशीन जैसा है—टेप रिकार्ड जैसा। तुम्हारे प्रश्न टेप रिकार्ड को शुरू करने जैसे हैं। तुम्हारे प्रश्नों के कारण स्वाभाविक रूप से कुछ उत्तर आने लगते हैं। जो भी मेरे अंदर है, वह बाहर आने लगता है। बस यही है। क्योंकि तुम प्रश्न पूछ रहे हो, इसलिए मैं उत्तर दे रहा हूँ।

● **प्रेम जैसी गहरी अनु ूति एवं प्रकृति के सौंदर्य के प्रति हमारी अद्भुत चेतना के बारे में आपका क्या कहना है।**

☐ ओह! ये सब विचित्र रोमानी कूड़ा-करकट हैं। शुद्ध कविता! ऐसा नहीं है कि मैं रोमानी बातों या कविता का विरोधी हूँ। ऐसा नहीं है। वस्तुतः तुम्हारे पास सूर्यास्त को देखने का कोई तरीका है ही नहीं, क्योंकि तुम्हारा अस्तित्व सूर्यास्त से अलग नहीं है। कविता लिखना भी कमोवेश ऐसा ही है। जब सूर्यास्त की ओर देखने पर तुम्हें कुछ अद्भुत अनुभव होता है, तब तुम अपने उस अनुभव को लोगों के साथ बाँटना चाहते हो। कविता, संगीत या चित्रकारी जैसे माध्यमों से तुम अपने अनुभवों को दूसरे के साथ बाँटने की कोशिश करते हो। इसमें बस यही है। सच्चा सूर्यास्त तो तुम्हारे अनुभव से परे है, जिसे तुम पकड़ ही नहीं सकते। अनुभव करने वाला ही अनुभव है। तुम जो कुछ

भी देखते हो, उससे अपने आपको अलग नहीं कर सकते। तुम जिस क्षण सूर्यास्त से स्वयं को अलग करते हो वैसे ही तुम्हारे अंदर का कवि बाहर आ जाता है। इसी पृथकता से कवि और चित्रकारों ने अपने अनुभवों को दूसरों के साथ बाँटने की कोशिश की है। यही संस्कृति है। संस्कृति अपने आप ही प्रतिक्रिया व्यक्त करती है। इससे अधिक कुछ नहीं है।

● **तब क्या होगा, जब संस्कृति अथवा जटिल संस्कृति से अप्रभावित कोई एक आदिवासी सुंदर सूर्यास्त के प्रति अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करता है? उसकी व्याख्या आप कैसे करेंगे?**

□ देखो, यह सब इस बात पर निर्भर करता है कि तुम्हारे लिए संस्कृति का क्या अर्थ है। संस्कृति का वह भाग; जो तुम्हें शांति, आनंद, स्वर्ग, मोक्ष आदि प्रदान करने की बात करता है, वह एक समस्या है। शेष संस्कृति से अपने को अलग करके आनंद लेना, भोजन करना तथा भाषा बोलना एक प्रकार की गलती है। तथाकथित साधु-संत भी बिलकुल उसी तरह काम करते थे, जैसे हम आज कर रहे हैं। मूलतः उनमें कोई अंतर नहीं है। चाहे वह आदिम संस्कृति हो, या आधुनिक संस्कृति, शांति कहीं नहीं है।

● **तो आपका संदेश यह हुआ कि व्यक्ति अपने आप में शांति से नहीं रह सकता। क्या आप यही कहना चाहते हैं?**

□ नहीं, मनुष्य तो अपने आप में पहले से ही शांति में है। यह विचार कि शांति कहीं और है और यहाँ तक कि भविष्य में है, यही समस्या की जड़ है। करुणा, आनंद तथा प्रेम जैसे सभी धार्मिक अनुभव एक ऐसी शांति की तलाश में हैं, जिसका अस्तित्व ही नहीं है। इस प्रकार शरीर में पहले से ही उपस्थित नैसर्गिक शांति को भंग कर रहे हैं।

● **शांति नहीं है। धर्म नहीं है। करुणा नहीं है। आशा नहीं है। तो फिर हम कैसे और कहाँ रहें?**

□ कहीं नहीं। मैं तो संपूर्ण आध्यात्मिक अनुभव के बारे में ही प्रश्न खड़े कर रहा हूँ। मेरी कोशिश इसे ही परिपक्व बनाने की है।

● **उन सुंदर, प्राचीन और उदात्त कर्मकांडों के बारे में आप क्या कहना चाहते हैं, जो हमारे धार्मिक अनुभवों को इतना व्यापक बनाते हैं। क्या उनकी कोई उपयोगिता या अर्थ हमारे जीवन में है?**

☐ मनुष्य हमेशा किसी-न-किसी वस्तु के द्वारा मनोरंजन प्राप्त करना चाहता है। सदियों से कर्मकांड उसे ऐसा ही आवश्यक मनोरंजन प्रदान करता रहा है। आज उसके स्थान पर सिनेमा, वीडियो, दूरदर्शन, सर्कस तथा जे कृष्णमूर्ति के उपदेश आ गए हैं। ऐसी ढेर सारी चीजें हैं। इनमें से हर कोई अपनी-अपनी वस्तुएँ बेचना चाहता है। हमें वे पसंद आती हैं। यहाँ इन आध्यात्मिक वस्तुओं के लिए बाजार है। यही कारण है कि वे लोग ऐसी वस्तुएँ बेच रहे हैं। लेकिन यही कूड़ा-करकट कोई मुझे नहीं बेच सकता, क्योंकि मेरी उसमें कोई रुचि नहीं है। दूसरे की रुचि हो सकती है।

● **यह तो ठीक है। लेकिन आपकी रुचि है किसमें ?**

☐ जो कुछ भी यहाँ है, मेरे लिए वही सब कुछ है। इस क्षण जो भी घट रहा है, वही मेरे लिए पर्याप्त है।

● **ऐसा न कहें। अंततः आप भी एक व्यक्ति ही हैं।**

☐ नहीं। उसकी इस तरह से व्याख्या करना भ्रम में डालना होगा। मैं नहीं जानता कि इसकी व्याख्या कैसे की जाए।

सुनो, मैं वैज्ञानिक उपन्यास पढ़ता हूँ। क्यों ? क्योंकि उसमें रोमांच है। मेरी इसके परिणाम में तनिक भी रुचि नहीं है, क्योंकि मेरी रुचि लगातार घटने वाली रोमांचक घटनाओं में ही रहती है। यह उन छिलकों की तरह है, जो एक के बाद एक उतरते चले जाते हैं। मुझे यह कभी खत्म न होने वाला सिलसिला पसंद आता है। अंत की परवाह कौन करता है ? इसी प्रकार तुम्हारा संपूर्ण अतीत, तुम्हारा संपूर्ण ज्ञान तथा तुम्हारा संपूर्ण आत्म अतीत की मरी हुई वस्तुएँ हैं। ये सभी स्मृतियाँ तुम्हारी भावुकता के तत्त्व हैं। लेकिन मेरे लिए ऐसा नहीं है। मेरी रुचि केवल इसी में है कि इस क्षण क्या हो रहा है। इसमें नहीं कि कल क्या हुआ या कल क्या होगा ?

● **बिना अतीत की भावुकतापूर्ण स्मृतियों के तथा बिना भविष्य की संभावनाओं के फिर रह ही क्या जाता है ?**

☐ मेरे लिए न तो वर्तमान है और न ही भविष्य। जो कुछ भी है, वह केवल अतीत है। इसलिए तुम्हारा 'यहाँ और अभी' शब्द का मेरे लिए कोई अर्थ नहीं है। इस क्षण केवल अतीत ही क्रियाशील रहता है।

मुझे नहीं मालूम कि मैं अपने आपको स्पष्ट कर पा रहा हूँ या नहीं। यदि

में तुम्हें पहचान रहा हूँ और तुमसे बातें कर रहा हूँ, तो यह अतीत ही है, जो क्रियाशील है। मैं वस्तुओं को देख रहा हूँ। यदि मैं उन्हें पहचानकर उन्हें कोई नाम दे रहा हूँ, तो यह अतीत की ही क्रियाशीलता है। यह उसी की अभिव्यक्ति है, जो मैं जानता हूँ। अनिश्चित भविष्य अतीत की ही संशोधित निरंतरता है। 'क्षण' ऐसी वस्तु नहीं है, जिसे पकड़ा जा सके, अनुभव किया जा सके, या अभिव्यक्त किया जा सके। जैसे ही तुम इस क्षण को पकड़ने की कोशिश करते हो, तब तक वह अतीत का हिस्सा बन चुका होता है।

इससे यह अर्थ निकलता है कि हम एक ही स्थान को उसी समय स्पर्श नही कर सकते। यह कुछ ऐसा ही है, जैसे दो टेपरिकार्ड एक ही कमरे में चल रहे हों।

● **इसका मतलब तो यह हुआ कि व्यक्ति भविष्य के बारे में जो भी घोषणाएँ करता है, वे सब आरंभ से ही बेकार हैं? संवाद करना, ज्ञान का आदान-प्रदान करना और एक-दूसरे का सामना करना क्या बिलकुल व्यर्थ है?**

□ हाँ, व्यर्थ है। इसके कारण व्यक्ति अपने कर्मों की सच्ची स्वतंत्रता को परे कर देता है। तुम किसी एक की बजाय दूसरा संगीत और भोजन पसंद कर सकते हो, लेकिन वह केवल तुम्हारी अपनी पृष्ठभूमि और संस्कृति को ही अभिव्यक्त करता है।

● **यदि आप जो कह रहे हैं, वह सच है, तब तो यह हुआ कि किसी भी कर्म में स्वतंत्रता नहीं है। प्रत्येक कार्य का कोई कारण है तथा प्रत्येक कारण का कोई अंतिम कारण है।**

□ ओह! तुम ऐसा क्यों सोचते हो कि प्रत्येक वस्तु का आरंभ होना ही चाहिए और उसका एक अंतिम कारण भी होना चाहिए। कारण और उसका प्रभाव केवल एक सामान्य चीज भी हो सकती है। घटनाएँ सामान्य ढंग से घट सकती हैं। विकास की यह संपूर्ण प्रक्रिया एक के बाद एक घटनाओं का घटते चला जाना भी हो सकता है। तुम इस बात पर जोर क्यों देते हो कि प्रत्येक वस्तु का कोई-न-कोई सर्जक होना चाहिए तथा सभी वस्तुएँ किसी-न-किसी कारण से उत्पन्न होनी चाहिए?

● **हाल के ही वैज्ञानिक अविष्कार यह बताते हैं कि........**

□ यह तुम्हारी कल्पना है। हो सकता है कि 'बिंग बैंग' जैसी कोई वस्तु हो ही नहीं। वे इसका उपयोग एक ठोस स्थिति में सर्जक की धारणा के विरोध में करते हैं। इस प्रकार यहाँ दो सिद्धांत हैं, जो अपने आपको ही समाज के रूप में स्थापित करने की कोशिश कर रहे हैं। इनमें से प्रत्येक एक-दूसरे से संघर्ष कर रहा है तथा अपने आपको सबसे अधिक सत्य के रूप में स्थापित करना चाह रहा है।

● सच है कि यही वह रास्ता है, जिससे नए विचार पैदा होते हैं और इसी कसौटी पर तर्कों को तर्क द्वारा कसा जाता है। यह एक अच्छी बात है कि सत्य और ज्ञान को पाया जाए।

□ मैं वैज्ञानिक तरीके का विरोधी नहीं हूँ। मैं इस सत्य को बताने की कोशिश कर रहा हूँ कि ज्ञान की 'परिशुद्ध' खोज जैसी कोई वस्तु नहीं है। यह नादान चीज नहीं है। ज्ञान की आवश्यकता इसलिए होती है, क्योंकि वह शक्ति देती है; चाहे वह वैज्ञानिक ज्ञान हो या काई दूसरा। प्रेम क्षण की खोज ह, जिसका उपयोग शक्ति को विस्थापित करने के लिए किया जाता है। चूँकि तुम प्रत्येक तरीके से इस शक्ति की स्थिति को पाने में असफल रहे हो, इसलिए अब तुमने तथाकथित प्रेम की खोज कर ली है।

● तो इसका मतलब यह हुआ कि प्रेम शांति के खेल का दूसरा नाम है। क्या आप चाहते हैं कि हम इस पर ही विश्वास करें?

□ क्यों नहीं।

● उस प्रेम के बारे में आप क्या कहना चाहेंगे, जिसका पालन मदर टेरेसा ने किया? करुणा के बारे में आपका क्या कहना है?

□ ये सब व्यक्ति की खोजपरक चेतना से पैदा हुआ है और इस सबकी समाप्ति उन कारणों को नष्ट करने में ही होगी, जिनकी मैं खोज कर रहा हूँ। मदर टेरेसा को घेरे हुए लोग उनकी प्रसिद्धि से अपना स्वार्थ साध रहे हैं। उन सबकी रुचि केवल धन में है, ताकि वे अपने काम को आगे बढ़ा सकें। आखिर ऐसी चीजों का संस्थानीकरण क्यों किया जाना चाहिए। तुम देखते हो कि किसी को दुःख है या कोई भूखा है। तुम तुरंत उसके बारे में कुछ करते हो। बस यही होना चाहिए। फिर इस बात का संस्थानीकरण क्यों किया जाए। तुम इसके द्वारा उस अनुभव और उस तात्कालिक प्रतिक्रिया को प्रदूषित करते हो, जो केवल

विचार या मात्र भावना ही नहीं हैं। स्थिति के प्रति तात्कालिक प्रतिक्रिया का ही महत्त्व होता है, न कि संस्थानीकरण का।

● संस्थानीकरण का मतलब यह होता है कि किसी भी एक स्थिति के बारे में प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए एक स्थायी वस्तु बना दी जाए। इससे अच्छे काम करने का एक रास्ता मिल जाता है। अपने पड़ोसी से प्रेम करना तब यथार्थ में बदलता है, जब कोई इसे सही में करने लगे, न कि करुणा के एकांत भाव से।

□ मैं इसे करुणा नहीं समझता। वही एक ऐसी चीज है, जिसे आप एक विशेष स्थिति में कर सकते हैं। पशु आश्चर्यजनक स्तर तक एक-दूसरे की सहायता करते हैं। मनुष्य भी प्राकृतिक तौर पर एक-दूसरे के सहयोगी हैं। लेकिन जब संस्थाएँ इस प्राकृतिक संवेदना को कमजोर कर देती हैं, तब मैं इसे करुणा नहीं कहता। मेरे जीवन में जितनी भी घटनाएँ घटी हैं, वे अन्य घटनाओं से स्वतंत्र हैं। ऐसा कुछ भी नहीं है कि उन्हें एक-दूसरे से जोड़ा जा सके, या उनका संस्थानीकरण किया जा सके।

● क्या यही कारण है कि आप अपने विचारों का प्रचार करने के लिए सीधे-सीधे मना कर देते हैं।

□ पहली बात तो यही है कि मेरे पास कोई विचार ही नहीं है। आपको पता होगा कि अमेरिका में मुझे दूरदर्शन पर बुलाया गया था। उनके यहाँ एक कार्यक्रम होता है—'प्वाइंट ऑफ व्यू'। मैंने उनसे कहा—''मेरे पास कोई 'प्वाइंट ऑफ व्यू' है ही नहीं।'' मेरे पास मानव जाति को देने के लिए कोई संदेश नहीं है और न ही मेरे अंदर सेवा करने का कोई उत्साह ही है।

मैं न तो मानवजाति का संत हूँ और न ही इस तरह की कोई अन्य वस्तु हूँ। लोग मेरे पास आते हैं। वे क्यों आते हैं, इसकी मैं चिंता नहीं करता। वे अपनी स्वतंत्र इच्छा से मेरे पास आते हैं, क्योंकि उन्होंने मेरे बारे में सुन रखा है, या फिर वे केवल उत्सुकतावश आते हैं। मेरे लिए इसका कोई अर्थ नहीं है। कोई व्यक्ति यहाँ अनेक कारणों से आ सकता है। यहाँ आने के बाद वह मुझे बिलकुल ही अलग पाता है, एक ऐसे व्यक्ति के रूप में, जो उसके अपने ज्ञान के ढाँचे में फिट नहीं बैठता। वह यह बात अपने मित्रों को बताता है और इसके बाद वह फिर मेरे दरवाजे पर पहुँच जाता है। मैं उनसे यह तो नहीं कह सकता कि तुम सब यहाँ से चले जाओ।

मैं उन्हें नहीं बुलाता, क्योंकि मैं जानता हूँ कि मेरे पास उनको देने के लिए कुछ भी नहीं है। मैं यही कह सकता हूँ कि अंदर जाओ और आराम से बैठो। कुछ हम लोगों की बातचीत को रिकार्ड कर रहे हैं। यह उनका मामला है, मेरा नहीं। वह उनकी संपत्ति होगी, मेरी नहीं।

मेरी इसमें कोई रुचि नहीं है कि मैं तुमसे वे प्रश्न पूछूँ, जो तुम चाहते हो। मेरे पास दैनिक जीवन में काम आने वाली कुछ वस्तुओं के सिवाय कुछ और प्रश्न हैं ही नहीं। ये प्रश्न हैं—अभी कितने बजे हैं? बस स्टाप कहाँ है? मेरे लिए ये ही प्रश्न हैं। इनके उत्तर भी सरल हैं, जो इस संगठित समाज में रहने के लिए जरूरी हैं। अन्यथा मैं कभी भी कोई प्रश्न नहीं पूछता।

● **क्या आप सोचते हैं कि यह समाज सचमुच में संगठित है?**

□ यह एक जंगल है, जो हम लोगों ने बनाया है। तुम इसके बिना दुनिया मे नहीं रह सकते। यदि तुम किसी पेड़ से एक फल भी तोड़ते हो, तो वह पेड भी किसी व्यक्ति का या समाज का होता है। इस प्रकार तुम समाज के एक हिस्से हो जाते हो। यही कारण है कि मैं हमेशा यह कहता हूँ कि इस दुनिया ने मेरे जीने का ठेका नहीं ले रखा। यदि मैं संगठित समाज के लाभों का फायदा उठाना चाहता हूँ, तो मुझे उसके लिए कुछ योगदान करना चाहिए। इस समाज ने ही हम सबको बनाया है। समाज हमेशा अपनी यथास्थिति को बनाए रखना चाहता है, ताकि उसकी अपनी निरंतरता बनी रहे।

● **समाज ने मुझे नहीं बनाया है। वासना की एक सामान्य क्रिया ने मुझे बनाया है।**

□ यह सच है। लेकिन यह वासना उस मस्तिष्क से उत्पन्न होती है, जो समाज का ही एक भाग है। शुद्ध जैविकी का निर्माण, जो शायद हमारे शरीर के प्रत्येक सेल में है, भी किसी का दिया हुआ है और वह हमारी चेतना के मूल का निर्माण करती है। समाज की रुचि इसी बात में रहती है कि हम उसकी निरंतरता के लिए अपना योगदान करते रहें और यथास्थिति बनी रहे। समाज थोड़े-से परिवर्तन की अनुमति देता है, ज्यादा की नहीं। इसलिए मेरे जैसा आदमी समाज में भला क्या योगदान कर सकेगा? कुछ भी नहीं। इसलिए मैं समाज से भी कुछ उम्मीद कैसे कर सकता हूँ? समाज ने मेरे जीवन का कोई ठेका तो ले नहीं रखा है। इसके बिलकुल विपरीत मैं जो कुछ भी कह रहा हूँ, वह समाज के वर्तमान

ढाँचे के लिए एक चुनौती है। मैं जिस तरीके से सोच रहा हूँ, कार्य कर रहा हूँ और बता रहा हूँ, वह वर्तमान समाज के लिए चुनौती है। यदि मैं समाज के लिए सचमुच चुनौती बन जाऊँगा, तब समाज मुझे समाप्त कर देगा। शहीद या इसी तरह का कुछ और बनने मे मेरी कोई रुचि नहीं है। ये सब मुझे अच्छे नहीं लगते। इसलिए यदि वे मुझसे कहते हैं कि 'बात मत करो', तब ठीक है। तब मैं बात नहीं करूँगा।

● इस प्रकार आकपो मनुष्य पर विवास नहीं है, जैसा कि जे. कृष्णमूर्ति को है?

□ नहीं, नहीं। बिलकुल नहीं। एकदम नहीं। यदि वे यह उम्मीद करते है कि मुझे शहीद बनाकर वे अपनी आस्था को सुदृढ़ कर लेंगे, तो उन्हें बुरी तरह निराश होना पड़ेगा। यह उनकी समस्या है, मेरी नहीं। यदि वे मुझे समाज के लिए एक चुनौती समझते हैं, तो मैं क्या कर सकता हूँ? वे मुझे यातना दे सकते है, जैसा कि साम्यवादी देशों में किया जाता है, तो इससे भी क्या? तब क्या मै अभी जो कुछ बोल रहा हूँ, उससे अलग बोलना शुरू कर दूँगा? सच तो यह है कि मैं नहीं जानता कि मैं क्या करूँगा। मैं किसी भी काल्पनिक स्थिति में अपने को नहीं उलझाता।

● क्या आपके कोई राजनीतिक विचार हैं? क्या आपके इस समाज के बारे में राजनीतिक दृष्टिकोण है? क्या आप किसी सरकार विशेष में विश्वास करते हैं?

□ मेरे पास छोटी-मोटी बीमारियों से लेकर ब्रह्म जैसी बड़ी बातों तक के बारे में अपने विचार हैं, क्योंकि मैंने इनके बारे में सभी ज्ञान अध्ययन, यात्रा तथा अनुभव आदि से प्राप्त किए हैं। लेकिन मेरे इन विचारों का महत्त्व उस औरत से अधिक नहीं है, जो वहाँ बर्तन साफ कर रही है और खाना बना रही है। भला मेरे विचार और राय को क्यों अधिक महत्व दिया जाना चाहिए?

तुम कह सकते हो कि मैं बहुत अध्ययनशील व्यक्ति हूँ और इस अध्ययन के कारण, यात्रा के कारण, बुद्धिजीवियों, वैज्ञानिकों और दार्शनिकों से बातचीत करने के कारण मुझे प्रत्येक विषय पर अपने विचार व्यक्त करने का अधिकार है। लेकिन मेरा यह विश्वास है कि कुछ भी महत्त्वपूर्ण नहीं है। क्या तुम इसे समझ रहे हो? मैं यह बताने की कोशिश कर रहा हूँ कि वह सारा ज्ञान; जिसका तुम्हें गर्व है, रत्ती भर भी काम का नहीं है।

● **तो फिर ज्ञान का हमारे लिए इतना महत्त्व क्यों हो गया है ?**

□ ऐसा इसलिए, क्योंकि वह तुम्हें शक्ति देता है। जैसा कि मैंने शुरू मे कहा था, ज्ञान शक्ति है। मैं जानता हूँ कि तुम नहीं जानते। मेरे पास आध्यात्मिक अनुभव है और तुम्हारे पास नहीं, बस यही तुलना तुम्हें शक्ति देती है।

● **आप थियोसोफिकल सोसायटी से जुड़े रहे। क्या उसने जीवन को समझने में आपकी कोई सहायता की है ?**

□ मेरे साथ जो कुछ भी घटा है, वह इनके कारण नहीं घटा। बल्कि इनके न रहते हुए भी घटा है और ऐसा हो जाना चमत्कार है। मैं सचमुच में नहीं जानता। मैं कोई विनम्र आदमी नहीं हूँ। अपने अतीत को देखते हुए, मैं तुम्हे अपने बारे में कुछ नहीं बता सकता, क्योंकि बताने के लिए कुछ है ही नहीं। मैं केवल इतना ही जानता हूँ कि मैं अपने अतीत से मुक्त हूँ और इसके लिए ईश्वर को धन्यवाद देता हूँ।

● **आप हमें जे. कृष्णमूर्ति के बारे में कुछ बताएँ, जिनसे आप दूर होते चले जा रहे हैं।**

□ मैं समझता हूँ कि वे एक बहुत बड़े ढोंगी हैं। इसीलिए मैं जे. कृष्णमूर्ति का विरोधी हूँ। वे कभी भी स्पष्टता के साथ बाहर नहीं आते। यदि आप पूछें कि ऐसा क्यों है, तब उनका तर्क होगा कि वे जो कुछ भी कहते हैं, वह या तो उनके पक्ष में हो जाता है, या उनके विरोध में। लेकिन यह एक राजनीतिक चाल है, जो उन्होंने अपना रखी है। सच तो यह है कि वे पहले से ही सैकड़ों-हजारों लोगों के लिए पूजनीय बन चुके हैं।

● **और शायद यही वह चीज है, जो आप नहीं जानना चाहते.... ?**

□ नहीं, कभी नहीं। यही मैं कह रहा हूँ.....

● **क्या ऐसा है कि आपके पास जो शक्ति है, उसे आप उपयोग में नहीं लाना चाहते। या फिर आप दूसरों के ऊपर शक्ति का प्रयोग करने के विचार को ही निरस्त करते हैं.... ?**

□ नहीं। विनयशीलता एक कला है, जो सबको सीखनी चाहिए। विनयशीलता जैसी कोई वस्तु है ही नहीं। जब तक तुम इसे जानते हो, तब तक विनयशीलता नहीं होती, क्योंकि जानना और विनयशीलता एक साथ रह ही नहीं सकते। ऐसा कहकर मैं तुम्हें विनयशीलता की कोई नई परिभाषा नहीं दे रहा हूँ।

मेरा विश्वास है कि विनयशीलता जैसी कोई चीज होती ही नहीं। चूँकि मैं समाज का विरोधी नहीं हूँ कि दुश्मनी की स्थिति पैदा करूँ, इसलिए मेरे पास विनयशीलता जैसा शब्द ही नहीं है। समाज जैसा है, उससे भिन्न वह कुछ नहीं हो सकता। इसलिए चूंकि मैं नहीं चाहता कि मेरे अंदर कोई परिवर्तन आए, इसलिए इसी प्रकार मेरे अंदर समाज को बदलने की भी कोई चाह नहीं है। मैं कोई सुधारक नहीं हूँ। मैं क्रांतिकारी भी नहीं हूँ। सच तो यह है कि क्रांति जैसी कोई चीज होती ही नहीं। ये सब झूठे हैं। यह एक और वस्तु है, जिसे बाजार में बेचा जा सकता है—लोगों को मूर्ख बनाने के लिए।

● **दूसरे शब्दों में गांधी की दुनिया और हो ची मिन्ह की दुनिया में या कि ईसा मसीह के उपदेश तथा लेनिन के विचारों के बीच कोई अंतर नहीं है।**

□ बिलकुल सही कहा तुमने। इनमें कुछ भी अंतर नहीं है।

● **मुझे इस बारे में बताएँ। जे. कृष्णमूर्ति ने बातचीत के दौरान मुझसे कहा था कि उनकी समस्त वैश्विक दृष्टि अमर है, क्योंकि वे जीवन को विराग के दृष्टिकोण से देखते हैं। वे पहले व्यक्ति नहीं हैं, जो ऐसा कह रहे हैं। अनेक धार्मिक महापुरुषों और कलाकारों ने भी यही बात कही है। क्या आप उनकी बात से सहमत हैं ?**

□ यह बात कृष्णमूर्ति ने स्वयं कही है या उनके किसी शिष्य ने ?

● **वे तो दावा करते हैं कि उनका कोई शिष्य है ही नहीं।**

□ पहली बात तो यह कि मेरे पास कोई विश्व-आदर्श नहीं है। विचारों का कोई ऐसा स्वरूप नहीं है, जो तुम्हारी सहायता कर सके।

● **लेकिन शायद आपने विचारों के लिए स्वरूप की संरचना की है, जो आपकी सहायता करते हैं।**

□ नहीं। कोई भी मेरी सहायता नहीं करता। मेरे अंदर जो निश्चिंतता है, वह एक ऐसी वस्तु है, जिसे किसी दूसरे को बताया ही नहीं जा सकता।

● **आप इस निश्चिंतता तक कैसे पहुँचे ?**

□ यह संयोगवश हुआ। आपको मालूम है कि मैं मद्रास से हूँ और उसी वातावरण में जे. कृष्णमूर्ति भी रहे हैं। तब मैं धार्मिक लोगों तथा सभी प्रकार के विचित्र लोगों से घिरा रहता था। मैंने जल्दी अनुभव किया कि ये सब झूठे हैं और

इनके जीवन और आदर्श व्यर्थ हैं। इसलिए जहाँ तक मेरा संबंध है, मेरे लिए वह सब व्यर्थ था। मैं इन साधु-संतों और महात्माओं के बारे में सब कुछ जानता हूँ। ये सब अपने आपको भी धोखा देते हैं तथा अन्य लोगों को भी मूर्ख बनाते हैं। लेकिन तुम इतना निश्चित जानो कि मुझे कोई मूर्ख नहीं बना सकता। मैं यह कहने की स्थिति में हूँ कि वे सभी गलत हैं।

तुम जिस परिवर्तन की बात कर रहे हो, वह मेरे लिए पूरी तरह शारीरिक घटना थी। इनमें कोई रहस्य या आध्यात्मिकता जैसी बात ही नहीं है। जो भी व्यक्ति इस तरह की शारीरिक घटनाओं को धर्म का रूप देता है, वह अपने साथ ही पूरी मानव जाति को धोखा दे रहा है। तुम जितने भी अधिक चालाक और चालबाज होओगे, दूसरे लोगों को अपने पीछे-पीछे ले जाने में उतने ही अधिक सफल रहोगे। इस प्रकार यह तुम्हें भ्रम देता है कि अपने आसपास के लोगों को तुम प्रभावित कर रहे हो। इसके बाद तुम इस तरह का कोई हास्यास्पद वक्तव्य देते हो कि तुम्हारी बातों ने संपर्णू मानव जाति की चेतना को प्रभावित किया है, जबकि सच तो यह है कि इसका कोई भी मनोवैज्ञानिक या सामाजिक संदर्भ है ही नहीं।

ऐसा नहीं है कि मैं असामाजिक हूँ। जैसा कि मैंने कहा, मैं समाज के साथ सघर्ष की स्थिति में हूँ ही नहीं। मैं न तो मंदिर या चर्चों को जलाने आ रहा हूँ, और न ही धार्मिक ग्रंथों को फाड़ रहा हूँ। मैं ऐसा कुछ नहीं कर रहा हूँ। मनुष्य उससे अतिरिक्त कुछ नहीं हो सकता, जो वह है। वह जो भी है, उसी तरह का समाज वह बनाएगा और फिर उसमें स्वयं को देखेगा।

● **यह तो ठीक है, लेकिन आपके साथ प्रज्ञा का यह संयोग हुआ कैसे?**

□ ओह! अच्छा तो यह प्रश्न है!

● **यह तो स्पष्ट है कि आप इसे चाँदनी रात में किसी पेड़ के नीचे बैठकर प्राप्त नहीं कर सकते।**

□ नहीं, वहाँ तो प्राप्त करने के लिए कुछ है ही नहीं......।

● **मैं किसी रोमानी उपलब्धि की बात नहीं कर रहा हूँ, बल्कि उस निश्चिंतता की बात कर रहा हूँ, जो आपने प्राप्त की है। मुझे ऐसा लगता है कि मेरे पास और दूसरों के पास वह निश्चिंतता नहीं है। न ही मैं यह जानता हूँ कि मैं उसे कैसे प्राप्त कर सकता हूँ।**

☐ तुम्हें अपना मूल प्रश्न पाना चाहिए। मेरा मूल प्रश्न था—"धार्मिक लोगों ने जो कुछ भी मुझ पर लादा है, क्या उस अमूर्तता के पीछे भी कुछ है ?" मैं इसे चाहता नहीं था, बल्कि मेरे पास यह प्रश्न स्वत: ही आ गया। इसलिए मैंने स्वाभाविक रूप से कई प्रयोग किए। मैंने बहुत-सी कोशिशें कीं। बाद में एक दिन ऐसा लगा कि पाने जैसी कुछ भी चीज नहीं है। इसके बाद मैंने उसे पूरी तरह और एकदम निरस्त कर दिया। यह निरस्तता विचारों की गतिशीलता बिलकुल भी नहीं है और न ही कोई सतही अस्वीकृति है। यह सब कुछ प्राप्त करने के लिए नहीं किया गया है।

● **आध्यात्मिक जैसी कुछ प्राप्ति के लिए.... ?**

☐ पाने के लिए कुछ है ही नहीं। इस तथ्य का ज्ञान हो जाना कि ज्ञान प्राप्त करने के लिए कुछ है ही नहीं, यही मेरे अंदर है। हालाँकि यह भी एक अनुमानित वक्तव्य है। दूसरे शब्दों में ऐसी कोई वस्तु है ही नहीं, जिसे समझा जा सके।

● **यह सच्चाई है कि ऐसी कोई वस्तु नहीं है, जिसे समझा जा सके, कि निश्चितता आपके लिए है, मेरे लिए नहीं।**

☐ पहली बात तो यह है कि इस प्रश्न का उत्तर पाने की तुममें उत्सुकता ही नहीं है। इसलिए तुम इसके बारे में कुछ नहीं कर सकते। जब तुम इसे स्थायी बनाने के लिए कुछ भी करते हो, तब वह तुम्हारी भूख को किनारे कर देता है। मेरे साथ जो कुछ भी हुआ है, ऐसा नहीं है कि इससे मेरी भूख मिट गई है। बल्कि उस भूख को कोई संतोषजनक उत्तर नहीं मिला है और उसने अपने आपको जलाकर नष्ट कर दिया है। प्यास को मिटाने वाली ये सभी चीजें मेरी प्यास को मिटाने में सहायता नहीं करतीं। लेकिन किसी तरह मेरे साथ हुआ यह कि उस प्यास ने अपने आपको ही जला डाला। मैं जले हुए से निकला हुआ एक व्यक्ति हूँ। लेकिन उन शब्दों में नहीं, जिस तरह से इन शब्दों का प्रयोग तुम करते हो। यहाँ 'जलने से उत्पन्न' (बर्न आउट) का अर्थ बिलकुल अलग ही है। अब मेरे अंदर जीवन उपस्थित है। इसलिए मुझे बातचीत करने की आवश्यकता महसूस नहीं होती। उस स्तर पर बातचीत करना संभव ही नहीं है। ज्ञान की इच्छा या किसी के भी बारे में निश्चित होने जैसी कोई बात मेरे अंदर रह ही नहीं गई है।

● मैं समझा नहीं.....।

□ यह उसी तरह से है, जैसे वहाँ वृक्ष खड़ा है। तुम वृक्ष के साथ क्या करना चाहते हो। उसे तो इस बात का भी ज्ञान नहीं है कि वह दूसरे के जीवन के लिए भी उपयोगी है; जैसे छाया देकर। वृक्ष की तरह ही मैं इस बारे में कभी सचेत नहीं रहता कि मैं किसी के कुछ भी काम आ सकता हूँ।

● क्या आपके पास दूसरे के प्रति प्रेम या यहाँ तक कि विलासिता की सामान्य इच्छा भी नहीं है। क्या आपने कभी कोई सुंदर नारी नहीं देखी और उसके साथ प्रेम करने की इच्छा नहीं हुई?

□ इच्छा की गति इतनी तीव्र है कि वह एक क्षण के लिए भी नहीं रुकती। मैं यह नहीं कहूँगा कि यह अधिक रोचक है या अधिक आकर्षक है, लेकिन वह तुम्हारे क्षणों को बदल देता है और तुम्हारे पूरे ध्यान की माँग करता है। उन क्षणों में घटने वाली प्रत्येक घटना तुम्हारा पूरा और संपूर्ण ध्यान चाहती है। ऐसी स्थिति में वहाँ दो भिन्न चीजें रह ही नहीं जातीं, जैसे—प्रेम और प्रेमिका। जिसे तुम एक सुंदर नारी कह रहे हो, जो एक विचार है, वह तुम्हें कोई और रास्ता दिखाता है। और तब फिर वह समय आता है, जब तुम उसे पुराने तरीके से प्रेम नहीं कर सकते।

● क्या आप यह कहना चाह रहे हैं कि जब आप एक सुंदर नारी को देखते हैं, तब आप बिना उसमें डूबे ही पूरी तरह डूब जाते हैं?

□ मेरे अंदर तो यह विचार ही नहीं आता कि वह नारी है। अब तुम ही समझ सकते हो कि वह नारी तुम्हें क्या दे सकती है। मेरे अंदर यह विचार नहीं आता कि मैं उस नारी से क्या पा सकता हूँ। सारी चीजें सतत गतिशील हैं। इसमें धर्म का कोई तत्त्व है ही नहीं।

● धर्म के बारे में भूल जाइए। हम एक सुंदर नारी के बारे में बात कर रहे हैं। आपने कहा कि वे आपको दूसरे तरीके से प्रभावित करती हैं। जब आप सुंदर नारी के साथ रहते हैं, तब आप उस तरह की कामुकता का अनुभव नहीं करते, जैसा हममें से बहुत-से लोग करते हैं। इसके बाद भी आप प्रभावित हैं। मैं सुंदर नारियों और वासना से बुरी तरह प्रभावित हूँ और अपने पर उनके प्रभाव को कम करना चाहता हूँ, जैसा कि आप किए हुए लगते हैं?

☐ इस बारे मे अधिक चिंता करने की जरूरत नहीं है। कृपया याद रखें कि.

● **क्या आप ऐसा नहीं समझते कि यदि किसी ने प्रकाश देख लिया है तो वह उससे दूसरे का मार्ग प्रकाशित करे? क्या आप अपने अनुयायियों के प्रति कर्त्तव्य की भावना महसूस नहीं करते? क्या आप यह नहीं समझते कि आपने संयोगवश जो सत्य पा लिया है, उसे दुनिया के साथ बाँटें?**

☐ नहीं। ऐसा कोई रास्ता नहीं है कि मैं अपने उस अनुभव को दूसरे तक पहुँचा सकूँ। ऐसा कोई तरीका नहीं है कि तुम उसे जान सको।

● **ठीक है। लेकिन क्या आप अपने चारों ओर की दुनिया को प्रेरणा नहीं देना चाहते?**

☐ प्रेरणा देना अर्थहीन है। बहुत-सी वस्तुएँ और लोग हमें प्रेरित करते हैं। लेकिन प्रेरणा से उत्पन्न कर्म अर्थहीन होते हैं। निराश लोग प्रेरणा का बाजार तैयार करते हैं। इसलिए किसी को भी प्रेरित करने में मेरी कोई रुचि नहीं है। सभी प्रेरित करके तुम्हें क्रमश: नष्ट करते हैं। यह सच है!

● **क्या इसे रोकने का कोई तरीका है?**

☐ वह क्या है, जिसे तुम रोकना चाहते हो। तुम्हारे अंदर प्रेम और घृणा पैदा होते हैं। मैं उसे उस तरह नहीं कहना चाहता, क्योंकि प्रेम और घृणा एक ही छोर के विरोधी नहीं हैं, बल्कि वे एक हैं और एक ही वस्तु हैं। वह प्रेमी का चुंबन लेने जैसा है।

यदि आप अपने तथाकथित प्रेम से अपने आशानुकूल परिणाम प्राप्त नहीं कर पाते, तब उसके प्रति घृणा करने लगते हैं। मैं 'घृणा' शब्द का प्रयोग कर रहा हूँ, जो शायद तुम्हें पसंद न हो। यह भी एक उदासीनता ही है, जो अन्य से अलग नहीं है। मैं मानता हूँ कि 'प्रेम' और 'घृणा' एक ही हैं। मैं दुनिया में जहाँ भी जाता हूँ, यह बात लोगों से कहता हूँ।

● **आप अपने हर वर्ष के चार महीने अमेरिका में, चार महीने भारत में और चार महीने स्विटजरलैंड में बिताते हैं। क्या आपकी यात्रा की यह योजना जे. कृष्णमूर्ति जैसी ही नहीं है? वे भी हर साल एक ही जगह को दोहराते हैं।**

☐ मैं नहीं जानता कि वे ऐसा क्यों करते हैं। मैं तो मौसम के कारण ऐसा करता हूँ। जब भारत में गर्मी होती है, तो मैं स्विटजरलैंड चला जाता हूँ। जब

स्विटजरलैंड में बहुत ठंड हो जाती है, तो मैं केलीफोर्निया चला जाता हूँ। और फिर भारत वापस आ जाता हूँ। जे. कृष्णमूर्ति की यात्रा में मेरी कोई रुचि नहीं है।

● हो सकता है। फिर भी आपने उनकी प्रत्येक गतिविधि को बड़े ध्यानपूर्वक देखा है, क्योंकि आप उनके हिस्से रहे हुए हैं।

□ शुरुआत के दिनों में उनके पास आज की तरह विशाल संगठन नहीं था। यह थोड़ी-सी पुस्तकें छापने वाला छोटा-सा सामान्य संगठन था। वे कुछ घूमे, कुछ लोगों से बात की। बस यही था। लेकिन अब तो वह एक लिमिटेड कंपनी की तरह किसी भी अन्य व्यवसाय जैसा उद्योग बन गया है। अब तो यह एक बड़ी संस्था है, जिसकी दुनिया भर में संपत्ति है। बोर्ड के ट्रस्टी हैं। उनके उपदेशों की रिकार्डिंग होती है तथा उनके पास करोड़ों डालर हैं। ऐसा करके आप सत्य को नहीं पा सकते। उन्हें आध्यात्मिकता के नाम पर अपना यह साम्राज्य खड़ा नहीं करना चाहिए था।

● क्या आप अब तक भारत के किसी 'गॉड मैन' से मिले हैं ? आप उस प्रसिद्ध व्यक्ति को तो जानते ही होंगे, जो धर्म के व्यापार के क्षेत्र में तेजी से आगे बढ़ रहा है ?

□ नहीं, मैं कभी भी दुकानदार नहीं रहा। अपनी यात्रा के दौरान चंद मिनटों के लिए ही मेरी उनसे मुलाकात हुई थी। बस इतना ही है, इससे अधिक नहीं।

मैं आज जो कुछ भी हूँ, वह अपने संघर्ष से हूँ। मैंने अपने बारे में सब कुछ अपने से ही सीखा है। धर्मनिरपेक्षता और धर्म; दोनों के ही विचार मुझे उत्तेजित करते हैं। इसलिए भी गुरु और 'गॉड मैन' आदि में मेरी कोई रुचि नहीं है। हमने उन्हें अमेरिका और यूरोप भेज दिया है।

● हाँ, आदरणीय मून, जीम जोंस, ये सब धोखेबाज लोग....

□ अब एक और जोंस है—डॉ. जोंस, जो अपनी बात संस्कृत में कहता है। वहाँ किसी भी धार्मिक घोटाले का स्वागत है, चाहे वह इंडोनेशिया से हो, जापान से हो, भारत से हो या नेपाल से। यदि वे पश्चिम में अधिक लोकप्रिय हो जाएँ, तब हम उन्हें भारत ले आएँगे। यह ठीक उसी तरह से है, जिस तरह से भारतीय औरतें पश्चिम से यहाँ साड़ी लेकर आएँ और वहाँ तीन गुना अधिक कीमत दें।

● क्या आप महर्षि महेश योगी से कभी स्विटज़रलैंड में मिले हैं ?

☐ नहीं, कभी नहीं। मैं अपने कमरे से बाहर नहीं जाता। इसलिए मैं कुछ नहीं कह सकता। भारत में जो कुछ भी होता है, उससे मेरा कोई संपर्क नही रहता। मैं अखबार भी नहीं पढ़ता। भारत में होने वाली घटनाओं में मेरी कोई रुचि नहीं रहती। भारत ऐसी स्थिति में नहीं है कि वह दुनिया पर प्रभाव डाल सके। हालाँकि यह निश्चित नहीं है कि कौन-सा विचार आध्यात्मिक है या राजनीतिक है। लेकिन तुम मेरे इस विचार को राजनीतिक विचार कह सकते हो।

भारत दुनिया को दिशा कैसे दे सकता है, या उसे प्रभावित कैसे कर सकता है ? भारत के पास न तो शक्ति है और न ही नैतिक दृढ़ता। हालाँकि तुम उसकी आध्यात्मिकता के बारे में दावा कर सकते हो। लेकिन राष्ट्र के जीवन में उसका विशेष महत्त्व नहीं है। तुम्हें यह देखना होगा कि सदियों से जीवन के जिस एकत्व का तुम उपदेश देते रहे हो, वह इस देश के दैनिक जीवन में लागू है या नहीं। लेकिन यह बहुत कठिन है।

भारत जो कहता है या करता है, उसमें किसी की रुचि नहीं है। उसका व्यक्तित्व ऐसा नहीं है, जो विश्व की घटनाओं को प्रभावित कर सके। भारत के बारे में पूरी दुनिया केवल इस बात में रुचि रखती है कि वहाँ के लाखों/करोडो लोगों का क्या होगा, भारत किस दिशा में और किस खेमे में जाएगा। इससे अधिक कुछ नहीं है।

● क्या मार्क्सवाद से धर्म को कोई मदद मिलती है ? क्या इसका कोई आध्यात्मि पक्ष भी है ?

☐ धर्म के रूप में मार्क्सवाद असफल हो गया है। यहाँ तक कि माओवाद भी नष्ट हो चुका है। यहाँ तक कि अब मार्क्सवादी देश भी नए ईश्वर की ओर देख रहे हैं। वे मनुष्य में अपना विश्वास खो चुके हैं तथा एक नए ईश्वर, नए चर्च, नए बाइबिल और नए पादरी की ओर देख रहे हैं। यह खोज एक अलग तरह की स्वतंत्रता के लिए है।

● लेकिन हिंदूवाद तो स्वतंत्रता को काफी स्वीकार करता है। यह कभी भी ईसाई, इसलाम या मार्क्सवाद की तरह एक रूढ़ धर्म नहीं रहा।

☐ पूर्व और पश्चिम में एक अंतर केवल यह है कि उनके धर्म अलग-अलग हैं। ईसाइयत ने चरित्र की उतनी विविधता नहीं पैदा की, जितनी हमारे

देश ने की है। यहाँ धर्म एक व्यक्तिगत मामला है। प्रत्येक ने अपनी दुकान खोल रखी है और उसमें अपना विशेष सामान बेच रहा है। यही कारण है कि हमारे यहाँ इतनी भिन्नता है। जबकि पश्चिम में इसका अभाव है। यह भिन्नता हमारी तथाकथित धार्मिक विरासत का सबसे आकर्षक अंग है।

हिंदूवाद एक धर्म नहीं है। यह अनेक चीजों का समन्वय और भ्रम है। 'हिंदू' शब्द गैर संस्कृत शब्द है, जिसका अब उपयोग नहीं होता। तुम इसके बारे में कुछ नहीं जानते। समाज में ब्राह्मणों की संरचना करने वाले आक्रामक आर्यों ने मूल भारतीयों को काले रंग का पाया और उन्होंने इन काले लोगों के धर्म को कहा—'हिंदू'। मेरी इस व्याख्या को विद्वान और पंडित लोग पसंद नहीं करेंगे। लेकिन यह सही है और ऐतिहासिक है।

मैं फिर से दोहरा रहा हूँ कि हिंदूवाद अपने सही अर्थों में धर्म नहीं है। बल्कि यह सैकड़ों दुकानों वाली एक स्ट्रीट की तरह है।

● **आपके कहने का मतलब है, रजनीश के सेक्स की दुकान, उसके बाद जे. कृष्णमूर्ति की जागृत अवस्था की दुकान, बगल में महर्षि के ध्यान योग की दुकान और उसके बगल में साईं बाबा की जादुई दुकान। उसके बगल में......।**

□ मूलतः ये सब एक ही हैं, बिलकुल एक। इनमें से हर कोई यह दावा करता है कि उसका सामान इस बाजार में सबसे उत्तम है। कुछ सामान जैसे पियर्स साबुन बाजार में इतने लंबे समय से है कि अब लोग उस पर निर्भर रहने लगे हैं और उसे दूसरे से अच्छा समझने लगे हैं। कोई सामान कितने लंबे समय तक टिकेगा, इसका कोई विशेष अर्थ नहीं है।

● **भारतीय मनोरंजन व्यापार के बारे में आपकी क्या राय है? वे कहते हैं कि उनके बहुत-से अनुयायी इसी उद्योग से आते हैं।**

□ इस देश में प्रत्येक वस्तु मनोरंजनीय है। राजनीतिक और धार्मिक व्यक्ति दूसरों के भलेपन का नाजायज फायदा उठा रहे हैं और हम सब ठस्स मूर्ख बने हुए हैं।

● **मानव जाति के बारे में ऐसी धारणा होने के कारण उसके भविष्य के बारे में तो आपको कोई बहुत आशा नहीं होगी?**

□ मैं नहीं सोचता कि मनुष्य के पक्ष में कुछ अच्छी घटनाएँ होंगी।

● **लेकिन यह निश्चित है कि पिछले सौ सालों में; विशेषकर पश्चिम में तकनीकी के क्षेत्र में जो अविश्वसनीय प्रगति हुई है, वह मनुष्य के कल्याण का सूचक है।**

□ यह सच है। लेकिन ऐसा औद्योगिक क्रांति के कारण हुआ है। रूस, अमेरिका तथा अन्य पश्चिमी देशों ने इस औद्योगिक क्रांति का लाभ उठाते हुए टैक्नोलोजी को आगे बढ़ाया है।

● **ऐसा लगता है कि मनुष्य ने पिछले सौ सालों में जितनी तरक्की की है, उतनी वह पिछले चार करोड़ वर्षों में भी नहीं कर सका था।**

□ यही तो वह बात है, जो मैं कह रहा हूँ। औद्योगिक क्रांति के कारण ही ये दूरगामी परिवर्तन विश्व पर छा रहे हैं। इन परिवर्तनों का क्या प्रभाव होगा, इसका अनुमान ही लगाया जा सकता है। विज्ञान और तकनीकी का साम्राज्य पहले से ही..... ।

● **आप क्या सोचते हैं कि यह हमें कहीं ले जाएगा ?**

□ इसे हमें कहीं क्यों ले जाना चाहिए? किसलिए? प्रगति का अर्थ है— "शत्रु के क्षेत्र में प्रवेश करना।" तुम्हें उम्मीद है कि यह अनियंत्रित प्रगति हमारी समस्याओं का समाधान करेगी। यदि ऐसा है, तो हमें कंप्यूटर में सारे कार्यक्रम डालकर यह देखना चाहिए कि वह हमारे भविष्य और हमारे गंतव्य के बारे मे क्या कहता है।

● **लेकिन यदि हम अपने अतीत के संग्रह के सिवाय कुछ हैं ही नहीं, तब इस तरह की भविष्यवाणियाँ अधिक आसान और सही हैं...।**

□ यह हमें इस बात की कोई गारंटी नहीं दे सकेगा कि हम भविष्य में किधर जाएँगे।

● **नहीं। भविष्य पर हमारा कोई नियंत्रण नहीं है।**

□ कुछ अप्रत्याशित और अविश्वसनीय घटना हो जाती है और तुरंत ही सब कुछ बदल जाता है। हम इस बात की गारंटी मानकर चलते हैं कि हम अपने जीवन को उसी दिशा में ले जा सकते हैं, जहाँ हम चाहते हैं। लेकिन इसकी कोई गारंटी नहीं है कि हम सफल होंगे। घटनाएँ एक-दूसरे से पूरी तरह स्वतंत्र होती हैं। हम उन्हें बताते हैं और एक साथ रख देते हैं। हमने विचारों का दार्शनिक स्वरूप बनाया है। लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि प्रत्येक वस्तु पूर्व निर्धारित है।

● लेकिन आशा के बारे में आपका क्या कहना है? यह तो निश्चित है कि मनुष्य आशा में जीता है।

□ मनुष्य हमेशा आशा में जीवित रहा है और शायद आशा में ही मरेगा। अभी उसने जितनी ध्वंसात्मक शक्तियों पर अधिकार कर लिया है, उससे यह निश्चित है कि जब वह यहाँ से जाएगा, तब अन्य जीवधारियों को भी लेता जाएगा। यह मेरा कोई 'विषाद गीत' नहीं है। लेकिन यदि तुम स्थितियों को यथार्थ रूप में देखोगे, तो तुम्हें भी ऐसा ही लगेगा। यदि तुम ऐसा सोचते हो या ऐसा करते हो कि तुम मानवीय इतिहास की गति को किसी भिन्न रास्ते पर ले जाओगे, तो तुम गलत कर रहे हो। हमें उन साधु और संतों से अपने आपको बचाना है, जो सतयुग का वायदा करते हैं।

● इन लोगों से बचाने में आप किस तरह सहायता कर सकते हैं।

□ यह 'किस तरह' शब्द ही एक अन्य संत को जन्म दे देता है।

● तो क्या आध्यात्मिकता के अतिरिक्त स्थिति को बदलने का कोई अन्य मार्ग है।

□ देखो, पहला तो यही है कि जीवन को भौतिक और आध्यात्मिकता में विभाजित करने का मेरे लिए बिलकुल कोई अर्थ नहीं है। आध्यात्मिक जीवन के बारे में तुम्हारी बेकार की धारणा इस कल्पना से पैदा हुई है कि आत्मा का कोई अपना स्वतंत्र अस्तित्व है। इस तरह की कल्पना का कोई मतलब नहीं होता।

● तब इस धारणा का क्या मतलब हुआ कि शरीर नष्ट हो जाता है, किंतु आत्मा जीवित रहती है...?

□ यह एक आस्था मात्र है। इसका कोई मतलब नहीं होता। मेरे पास ऐसा कोई तरीका नहीं है कि मैं अपनी निश्चितता को तुम्हारे अंदर स्थानांतरित कर सकूँ। ऐसा कुछ नहीं है, जो मेरी मृत्यु के बाद मुझसे पुनर्जन्म लेगा। तुम्हारे लिए इसके परे सोचने का कोई अर्थ नहीं है।

● ऐसा लगता है कि शरीर पुनर्जन्म के द्वारा अपनी अमरता की खोज करता है।

□ यह जीवन का स्वभाव है। अस्तित्व की रक्षा की इच्छा तथा अपने आपको फिर से उत्पन्न करने की भावना जीवन में निहित वंशानुगत स्वभाव हैं। तुम्हारी काम वासना, तुम्हारी संतान, तुम्हारी पारिवारिक संरचना और इसी तरह

की चीजें कमोबेश अस्तित्व की रक्षा एवं पुनरुत्पत्ति की मूल स्वभाव का विस्तार ही है।

● **इसका मतलब तो यह हुआ कि जब आप मर जाएँगे, तब आपका अंत हो जाएगा........?**

□ जब मेरे इस शरीर को जला दिया जाएगा, तब लोग उसके साथ मेरी यादे भी जला देंगे। यही मेरे जीवन का अंत होगा।

● **आपके कुछ अनुयायी आपकी राख को बिखेरना चाहते हैं...?**

□ किसलिए? कुछ लोग मुझसे पूछते हैं कि आप हम लोगों को यह संकेत क्यों नहीं देते कि "आपके मृत शरीर का अंतिम संस्कार हम कैसे करें?" क्या फालतू की बात करते हैं ये! भला इस बारे में मैं क्यों संकेत छोड़ना चाहूँगा। मरने के बाद यह शरीर दुर्गंध देने लगेगा और समाज के लिए समस्या पैदा करेगा......। यह समाज की समस्या है, मेरी नहीं। मैं पहले से ही नर्क में हूँ, इसलिए मरने के बाद वहाँ जाने की जरूरत ही क्या है।

● **क्या आपका परिवार कहीं रह रहा है?**

□ मेरी दो लड़कियाँ हैदराबाद में हैं। मेरे लड़के बसंत की हाल ही मे कैंसर से मृत्यु हो गई। दूसरा लड़का कुमार अमेरिका में पैदा हुआ। वह वहाँ इलैक्ट्रॉनिक इंजीनियर है। जब मैं अमेरिका जाता हूँ, तब कभी-कभी उससे मिलता हूँ। मेरे अपने परिवार से कोई बहुत संबंध नहीं हैं। वे कभी-कभी मेरे पास आते हैं। बस इतना ही है। मेरा उनसे या अन्य किसी से भी कोई भावनात्मक संबंध नहीं है। यहाँ तक कि स्विटजरलैंड की वेलेंतीन के साथ भी नहीं; जिसके साथ मैं पिछले बीस वर्षों तक रहा। मैं नहीं समझता कि मेरा किसी के साथ भी भावनात्मक संबंध है।

● **क्या आपका किसी के भी साथ अब तक भावनात्मक संबंध रहा है?**

□ मैं नहीं जानता। यहाँ तक कि मेरी उस पत्नी के साथ भी ऐसे संबंध नहीं रहे, जिसके साथ मैंने बीस वर्ष बिताए हैं। मैं सचमुच नहीं जानता कि किस तरह के संबंध होने चाहिए।

● **क्या किसी भी स्त्री या पुरुष के प्रति आपके कभी भी अभिभूत करने वाले संबंध नहीं रहे?**

☐ मेरे अंदर हमेशा अपने प्रश्नों का उत्तर पाने की इच्छा ही प्रबल रही है। यही एक बात थी, जो हमेशा मुझ पर हावी रही। मैं नहीं जानता कि जे.कृष्णमूर्ति सहित अन्य लोगों के साथ क्या रहा है। यदि उनके साथ भी कुछ नहीं रहा होता, तब दुनिया में ये सब अनिष्टकारी चीजें क्यों बनतीं। मैं जानता था कि तुम स्वयं को और दूसरों को छल सकते हो। लेकिन मैं उत्तर चाहता था। मुझे यह उत्तर कभी नहीं मिला और बाद में उस प्रश्न ने अपने आपको स्वयं जला डाला।

इसका यह मतलब नहीं कि मुझे परमानंद की प्राप्ति हो गई या मैं सत्य को जान गया। जो इन बातों का दावा करते हैं, वे स्वयं को और दूसरों को मूर्ख बनाते हैं। वे सब गलत हैं। ऐसा नहीं है कि मैं उनसे या ऐसी किसी भी वस्तु से श्रेष्ठ हूँ, लेकिन यह जरूरी है कि वे जो दावा करते हैं, उनका कोई सच्चा आधार है ही नहीं। इस बात की समाप्ति हो जाना ही मेरी निश्चितता है। दुनिया में ऐसी कोई शक्ति नहीं है, जो मुझे किसी भी वस्तु को स्वीकार करने के लिए मजबूर कर सके। इसलिए मेरा समाज के ढाँचे से कोई संघर्ष नहीं है। किसी से भी कुछ भी पाने में मेरी कोई रुचि नहीं है।

● हम आप में एक प्रकार की दूरस्थता या अरुचिपन पाते हैं। क्या एक सुन्दर नारी, सूर्यास्त या संगीत का छोटा-सा अंश आपको अपने साथ बहाकर नहीं ले जा पाता? क्या ऐसी कोई वस्तु नहीं रही है, जो आपको अभिभूत करके सभी वस्तुओं से अलग ले जा सके। मैं नहीं जानता कि कहाँ ले जाएँ...... ?

☐ मैं और क्या होता या क्या नहीं हुआ, मेरे अंदर कभी भी इस प्रकार की कोई रोमानी भावना नहीं रही। रोमांसवाद मेरा यथार्थ नहीं है। न तो आज तक और न ही भविष्य में कभी कोई बात मेरे इन पैरों को कमजोर करके मुझे बहाकर ले जा सकती है। ऐसा नहीं है कि मैं तर्क के विरोध में खड़ा हुआ व्यक्ति हूँ। बल्कि मेरे अंदर तर्क के ऐसे तत्त्व हैं, जो अपने विरोधी से विद्रोह करते हैं। मैं न तो तर्क विरोधी हूँ और न ही अतार्किक। इस तार्किकता की व्याख्या तुम अपने ढंग से जैसा चाहो, कर सकते हो। इससे मेरा कोई सरोकार नहीं है। आनंद, रोमांस या पलायनवाद की खोज में मेरी कोई रुचि नहीं है।

● यह रोमांसवाद से भी कुछ अधिक हो सकता है। यह आत्मनिर्वासन, पागलपन, सनकीपन, भयानक, भव्य, आध्यात्मिक या वासनात्मक अनुभव

कुछ भी हो सकता है।

☐ यदि मेरे अंदर अनुभव ही नहीं है, तब फिर ये सब नाटकीय अनुभव कैसे हो सकते हैं ? मेरे पास घटना से स्वयं को अलग करने का कोई तरीका नहीं है। बल्कि घटना और मैं दोनों एक हैं, बिलकुल एक। मैं जानता हूँ कि तुम नही चाहते कि मैं सेक्स के बारे में कुछ कठोर बात कहूँ। यह केवल तनाव से राहत पाने की क्रिया है। मैं इस प्रकार के कूड़ा-कर्कट को रोमांसवाद नहीं कहता। मैने एक बार अपनी पत्नी से कहा था—"मेरे साथ प्रेम और लगाव की बातें मत करो। हम दोनों को जोड़कर रखने वाला एकमात्र तत्त्व है 'काम'।" मेरे साथ समस्या यह है कि कारण चाहे जो भी हो, मैं किसी अन्य नारी के साथ शारीरिक सबंध स्थापित नहीं कर सकता। यह मेरी समस्या है। इस समस्या से अपने आपको मुक्त करने का मेरे पास कोई रास्ता नहीं है। मैं नहीं जानता कि इन सब बातों का तुम्हारे लिए कोई अर्थ है या नहीं। लेकिन प्रेम की इन सब बातों का मेरे लिए कोई अर्थ नहीं है। मेरे लिए 'सेक्स' का आतंक यहीं समाप्त हो जाता है।

● **लेकिन जीवन में किसी समय तो आपने किसी अन्य नारी से प्रेम किया ही होगा.... ?**

☐ लेकिन वह एक ऐसी स्थिति थी, जो मेरे अपने द्वारा पैदा नहीं की गई थी। मैं यह नहीं कह रहा हूँ कि मैं सम्मोहित हो गया था। इससे कोई फर्क नही पडता कि कोई दूसरे को सम्मोहित करता है, या स्वयं सम्मोहित हो जाता है। सच्चाई यह है कि ऐसा होता है। यह नहीं है कि इसके लिए कोई दूसरा जिम्मेदार था। बल्कि मैं स्वयं ही जिम्मेदार था। मेरे मामले में यह एक विचित्र किस्म का स्व-कामुकतावाद था।

● **आप ऐसा कैसे कह सकते हैं ?**

☐ मैं नारी का उपयोग कर रहा था। अपने आनंद के लिए किसी दूसरे का उपयोग करना एक भयानक बात है। चाहे तुम कोई विचार, धारणा, नशीले पदार्थ या नारी या अन्य किसी भी वस्तु का उपयोग करो, तुम्हें उपयोग के बिना आनंद नहीं मिलेगा। इसी कारण मेरे अंदर विद्रोह पैदा हुआ। (हँसी)। तुम हँस क्यों रहे हो। यही मेरी जिंदगी है, चाहे तुम इसे स्वीकार करो या अस्वीकार।

किसी का उपयोग करने, किसी को प्रभावित करने या किसी को बदलने में मेरी कोई रुचि नहीं है। यही मेरा वक्तव्य है। इससे अधिक कुछ नहीं। इसका

मानव जाति के लिए कोई बहुत महत्त्व नहीं होगा और इसे किसी समृद्धि के लिए बचाकर भी नहीं रखा जाना चाहिए। मैं समृद्धि में विश्वास नहीं करता। मेरे पास कोई उपदेश नहीं है। इसलिए ऐसा कुछ भी नहीं है, जो बचाकर रखा जा सके। उपदेश का मतलब होता है—कोई ऐसी बात; जिससे परिवर्तन लाया जा सके। लेकिन मेरे पास कोई उपदेश नहीं है। मेरे पास केवल असंपृक्त तथा असंबद्ध वाक्य भर हैं। यहाँ जो कुछ भी है, वह केवल तुम्हारी अपनी व्याख्या है। उससे अधिक कुछ नहीं है। इससे तुम्हें जो उत्तर मिलता है, वह तुम्हारा अपना है, वह तुम्हारी अपनी समृद्धि है, मेरी नहीं। इसलिए न तो अभी और न ही भविष्य में मैं जो कुछ भी कह रहा हूँ, उस पर मेरा अपना कोई अधिकार होगा। मेरा कोई दावा नहीं है।

● **यू.जी. आप हमें अपने बचपन के बारे में बताएँ?**

□ जब मैं सात वर्ष का था, तभी मेरी माँ गुजर गई थी। मेरे ननिहाल वालों ने मुझे पाला। मेरे दादा ब्रह्मविद्यावादी थे। धनी आदमी थे और अपने घर में जबरदस्त धार्मिक वातावरण बनाए रखते थे। इस मायने में मेरे जीवन की पृष्ठभूमि में जे. कृष्णमूर्ति भी रहे हैं। हमारे घर की हर दीवार पर उनका चित्र था। मैं उनकी उपेक्षा नहीं कर सका। मैं उनके पास किसी वस्तु की खोज में नहीं गया था। मेरे जीवन की केवल यही पृष्ठभूमि रही। यह अच्छा होता, यदि मैं वहाँ जाता ही नहीं। मेरी समस्या यह थी कि मैं किसी प्रकार भी अपनी इस सारी पृष्ठभूमि से आजाद होऊँ, जो मुझे बुरी तरह परेशान कर रहा था।

● **आप बड़े कहाँ हुए?**

□ ज्यादातर मद्रास के थियोसोफिकल सोसायटी में। मैं मद्रास विश्वविद्यालय में भी रहा। अपने जीवन के निर्माणकाल के अधिकतम वर्ष मैंने ब्रह्मविद्यावादियों के बीच बिताए।

● **क्या उन्होंने शुरुआत में ही आपके अंदर विकर्षण पैदा कर दिया?**

□ कुछ मायनों में शुरुआत में ही। लेकिन मैं लगातार अपना बचाव करता रहा। मैं स्वयं को अपने अतीत से मुक्त करना चाहता था। इसके लिए मैंने बहुत कोशिश की। अंत में मैं जे. कृष्णमूर्ति को छोड़कर बिलकुल अलग हो गया, बिलकुल।

● क्या आपको एनी बेसेंट की कुछ याद है?

□ हाँ, है। वे बहुत अद्‌भुत नारी थीं। जब मैं 14 वर्ष का था, तब उनसे मिला था। मुझे उनके व्याख्यान याद हैं। मेरे दादा ऐनी बेसेंट के बहुत करीबी थे। वे तो एक संस्था ही थीं। मैं समझता हूँ कि भारत को अन्य देशों की अपेक्षा उनके प्रति अधिक कृतज्ञ होना चाहिए। लेकिन आज की पीढ़ी उनके बारे में कुछ नही जानती। यहाँ तक कि गांधी के बारे में भी कुछ ज्यादा नहीं जानती। इसलिए यह कहना मुश्किल है कि लोग उन्हें आज कितना याद करते हैं। उन पर जो नई फिल्म बन रही है, वह शायद उनके प्रति लोगों में कुछ उत्सुकता पैदा कर सके।

● गांधी जी के विचारों के बारे में आप क्या सोचते हैं?

□ तुम मेरी राय जानना चाहते हो? मैं तुम्हें राय दूँगा। कुछ कारणों से गांधी मुझे कभी पसंद नहीं आए। शायद ऐसा मेरी ब्रह्मविद्यावादी पृष्ठभूमि के कारण हो। अंततः वे संत और राजनीतिज्ञ के मिश्रण थे। मैं समझता हूँ कि सभी लोगों में वे ही एकमात्र व्यक्ति थे, जिन्होंने अपने जीवन को उसी के अनुकूल ढालने की कोशिश की, जिसमें वे विश्वास करते थे। वे असफल हो सकते थे और मेरी राय में वे असफल ही हुए। लेकिन चूँकि उन्होंने अपने विश्वास के अनुकूल ही जीवन जिया, इसलिए यह बात उनके प्रति उत्सुकता पैदा करती है। उनके आसपास जो और लोग थे, वे भारत की आजादी को प्राप्त करने के उपकरण थे। उन्होंने इस देश के लिए क्या छोड़ा, कुछ भी नहीं। हर साल उनके जन्मदिन पर भाषण देना केवल एक भावनात्मक चीज है। उनके अनुयायी उनके बारे में लगातार बातें करते रहते हैं। लेकिन जैसा कि यह नई फिल्म दिखाती है, उन्होंने शुरू से लेकर अंत तक हिंसा का सहारा लिया।

● लेकिन यही बात आप ईसा मसीह, बुद्ध और मोहम्मद साहब के बारे में भी कह सकते हैं। गांधी वगैरह तो वे लोग हैं, जो इन महापुरुषों के बाद आए और उनकी शिक्षाओं को गलत ढंग से......

□ तुम धर्म के संस्थापकों और नेताओं को इससे मुक्त नहीं कर सकते। मनुष्य के लिए इन सभी साधु-महात्माओं की शिक्षाओं का परिणाम हिंसा ही हुआ है। प्रत्येक संत प्रेम और शांति की बात करता है, जबकि उनके अनुयायी हिंसा का आचरण करते हैं। ऐसा लगता है कि इस सारे व्यापार के पीछे कुछ-न-कुछ हास्यास्पद चीज है। कथनी और करनी के बीच के अंतर ने ही मुझे यह

सकेत दिया कि इसमे कुछ-न-कुछ खामी हे। मैंन अनुभव किया है कि शिक्षाएँ गलत थीं और उनमें निश्चितता की कमी थी। मेरे पास उन सबको किनारे कर देने तथा अपनी चेतना से पूरी तरह निकालकर अलग कर देने का कोई तरीका नहीं था। मैं इनमें से किसी को भी भावना के स्तर पर स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं था। यहाँ तक कि जब इनसे मुक्त होने के मेरे प्रयासों का अंत ईसा और बुद्ध के ज्ञान प्राप्ति जैसी घटना में हुआ, तो भी मैं संतुष्ट नहीं था। मैं जानता था कि कहीं-न-कहीं कुछ गलत है। यही मेरी सारी समस्या थी।

● **आप भावना और तर्क; दोनों ही स्तरों पर चीजों को निरस्त करते हैं। तब फिर बच ही क्या जाता है?**

□ यह उस आदमी जैसा है, जो चीते की ही सवारी करता है और बाद में गिर जाता है। चीता अपनी गति को बनाए रखता है। वह चलता जाता है। ऐसा ही मेरे साथ हुआ। तुम चीते के साथ और कुछ नहीं कर सकते। इसलिए तुम्हारे अदर चीते से टकराने या उस पर सवारी करने का भय कभी नहीं आता। वह चला जाता है, हमेशा के लिए। इसलिए मैं यह समझता हूँ कि लोग समाज के लिए जो कुछ भी कर रहे हैं, उसका कोई अर्थ नहीं है। समाज अपनी गति से चलता है। यदि तुम कुछ करने की कोशिश करोगे और अपने आपको इसमें शामिल करोगे, तो वह इस गति में थोड़ा अपना कुछ जोड़ दोगे। आखिर मनुष्य जाति की रक्षा करने का यह सब अधिकार इन लोगों को दिया किसने है? करुणा और प्रेम: ये दोनों उनकी चालबाजियाँ हैं।

● **जब आप थियोसोफिकल सोसायटी में थे, तब क्या आप उस अनोखे ब्रह्मविद्यावादी बीटर से कभी मिले थे?**

□ हाँ, मैं मिला था। वह भी मेरी पृष्ठभूमि का एक हिस्सा था। उसने मुझे कभी बहुत प्रभावित नहीं किया। मैं जानता था कि उसके बारे में समलैंगिक होने की अफवाह है। लेकिन इससे मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता था, क्योंकि 'काम' भी तो जीवन का एक हिस्सा है, चाहे वह समलैंगिक हो अथवा विपरीतलैंगिक या स्त्री समलैंगिक, सब एक ही हैं। मेरे लिए नैतिकता का कोई अर्थ नहीं है। समाज ने अपने लिए नैतिकता के रास्ते की जो खोज की है, वह अपने आपको नैतिकता से बचाने के लिए की है। समाज ने ही संत और पापियों को बनाया है। मैं उन्हें इस रूप में स्वीकार नहीं करता।

मेरे लिए गलती और कमजोरी हो सकती है, लेकिन पाप नहीं। मैं व्यक्तिगत रूप से ऐसा कोई कारण नहीं समझता कि हमें बाइबिल, कुरान, गीता या धम्मपद की परवाह करनी चाहिए। हमारे पास राजनीतिक निकाय है, जिसके अपने दीवानी और आपराधिक नियम हैं। इन समस्याओं के निराकरण के लिए उन्हें ही पर्याप्त होना चाहिए।

शरीर एक प्रयोगशाला है

□ तुम अनेक कल्पनाओं के अनुसार काम करते हो। तुम्हारी पहली कल्पना यह है कि सभी मनुष्य एक जैसे हैं। जबकि मैं यह मानता हूँ कि कोई भी दो व्यक्ति एक जैसे नहीं हो सकते। तुम्हारा यह सोचना आत्म-रक्षा का ही एक प्रकार है।

● **वैज्ञानिक यह खोज कर रहे हैं कि क्या लोगों में ऐसा कोई तत्त्व ढूँढ़ा जा सकता है, जो उनको एक-सा बनाए। हमारी रुचि मनुष्य की असमानता और अपवाद में है। योगी और धार्मिक नेता एक तरह के अपवादी एवं अनोखे लोग होते हैं। हम उनका अध्ययन करना चाहते हैं। आप भी।**

□ क्या तुम्हारे पास इन योगियों और उनके उन अनुयायियों के पास जाकर इसे पाने के अतिरिक्त कोई दूसरा रास्ता नहीं है, जो अपनी सामग्री इस बाजार में बेच रहे हैं। यह तुम्हारे लिए बहुत बड़ी समस्या होगी। तुम्हें मदद के लिए जे. कृष्णमूर्ति, साईं बाबा या मुक्तानंद नहीं मिल सकते। इस तरह के प्रयोग करने लायक लोग दर्जनों के भाव मिल रहे हैं।

● **लेकिन हम आंतरिक रूपांतरण के मूल को पाने के लिए क्या करें?**

□ मैं नहीं जानता। मैं सलाह दूँगा कि ये धार्मिक लोग जो भी तुम्हें बताते हैं, उन पर विश्वास मत करो। हर एक बात का परीक्षण किया जाना चाहिए।

● **यही तो मुख्य बात है कि हम उनकी विश्वसनीयता का वैज्ञानिक आधार पर परीक्षण करने के तरीके की तलाश कर रहे हैं।**

□ यहाँ तक कि तुम उनके इस दावे को इस लायक समझकर भी बहुत बडी गलती कर रहे हो।

● **यही है कि हम प्राप्त आँकड़ों के आधार पर उनकी सामान्य प्रवृत्तियाँ जानने की कोशिश कर रहे हैं। इससे अधिक कुछ नहीं है।**

□ तुम्हारी जो भी समस्याएँ हैं। उन सबके उत्तर तुम्हें अपने अंदर से ही प्राप्त करने चाहिए, न कि इन योगियों और साधुओं से। ऐसा करके तुम बहुत बड़ी गलती करोगे। यही बात मैं पश्चिम के मनोवैज्ञानिकों से भी कहता हूँ। तुम जो भी आँकड़े और ज्ञान इकट्ठा करोगे, उसका तुम्हारे साथ तटस्थ संबंध नहीं होता। आँकड़ों की सतत व्याख्या करने का अर्थ यह है कि तुम अपने अध्ययन मे रत हो। अर्थात् तुम्हारा इससे पृथक अस्तित्व नहीं है। व्याख्याकार ही है, जो

सबसे महत्त्वपूर्ण है।

● **लेकिन फिर भी क्या मनुष्य का अध्ययन करना संभव और आवश्यक......**

□ पहली बात तो यह है कि उसने अपने आपको ही नहीं समझा है। वे ऑकड़े, ज्ञान और वे सिद्धांत; जो तुम इनसे प्राप्त करने जा रहे हो, क्या इस बारे में सहायक होंगे? जहाँ तक ज्ञान का प्रश्न है, अपने आपको समझने के लिए कोई उपाय नहीं है। कंप्यूटर अपने आपसे कभी यह नहीं पूछता कि "मैं काम कैसे कर रहा हूँ।" अपने आपको पूरी तरह समझने के लिए केवल आँकड़ों के संग्रह की जरूरत नहीं है, बल्कि एक बहुत बड़े उछाल की जरूरत है। इस बारे में मैं न्यूटन के भौतिकशास्त्र का उदाहरण देना चाहूँगा। न्यूटन के सिद्धांत के अनुसार चीजें एक निश्चित तरीके से कार्य करती हैं। इसके बाद कोई दूसरा वैज्ञानिक आता है और न्यूटन के सिद्धांत को झुठलाकर भौतिकशास्त्र में एक नया अध्याय जोड़ता है। मैं पिकासो का भी उदाहरण देना चाहूँगा। उसकी भी बिलकुल ऐसी ही समस्या थी। वह कुछ नया करना चाहता था, नई तकनीक पाना चाहता था। अचानक कुछ हुआ और एक नया नियम उसके हाथ लग गया। बाद के वैज्ञानिक उसी की इस शैली का अनुकरण कर रहे हैं। इसी प्रकार एक दिन ऐसा आएगा, जब आइंस्टीन के नियमों को किनारे करके एक नया नियम सामने आ जाएगा। मेरे कहने का मतलब यह है कि प्रकृति हमेशा कोई अनोखी चीज बनाने की कोशिश करती रहती है। ऐसा नहीं लगता कि प्रकृति किसी भी चीज को एक प्रतिरूप (मॉडल) के रूप में इस्तेमाल करती है। जब वह कोई एक अनोखी चीज तैयार कर लेती है, तब विकास की प्रक्रिया में वह उसे किनारे कर देती है और वह उसमें कोई रुचि नहीं रखती।

यही कारण है कि मैं जो कुछ भी कह रहा हूँ, उसे ज्यों-का-त्यों दोहराया नहीं जा सकता। चूँकि इसे दूसरों तक पहुँचाया नहीं जा सकता, इसलिए इसका कोई सामाजिक मूल्य नहीं है। न तो प्रकृति के लिए मेरी कोई उपयोगिता है, और न ही समाज के लिए। ईसा मसीह, गौतम बुद्ध या कृष्ण को मॉडल के रूप में प्रयोग करके हमने प्रकृति की उन संभावनाओं को समाप्त कर दिया है, जो अनोखी चीजें वह बनाती है। जो तुमसे यह कहता है कि अपने प्राकृतिक चरित्र को भूल जाओ और किसी दूसरे संत-महात्मा जैसा बनो, वह तुम्हें गलत रास्ते

पर ले जा रहा है। यह उसी तरह है, जैसे कोई अंधा अंधे को रास्ता दिखा रहा हो।

जैसे ही तुम किसी योगी या धर्म पुरुष के संपर्क में आते हो, तुम पहला गलत रुख यह अख्तियार करते हो कि अपने कार्य करने की शैली को उन लोगों के काम करने की शैली के अनुसार ढालने लगते हो। ऐसा हो सकता है कि वे जो कुछ भी कह रहे हैं, उसका संबंध तुम्हारे कार्य करने की शैली से बिलकुल हो ही नहीं। अनोखापन कोई ऐसी वस्तु नहीं है, जो किसी फैक्टरी में तैयार हो जाए। समाज का स्वार्थ केवल अपनी यथास्थिति को बनाए रखने में होता है। इसीलिए वह सबके सामने इस तरह के प्रतिरूप प्रस्तुत करता है। तुम उसी मॉडल (जैसे—संत, महात्मा या क्रांतिकारी) जैसा बनना चाहते हो। लेकिन यह असंभव है। तुम्हारा जो समाज स्वीकृत मॉडल के अनुरूप तुम्हें बदलने में रुचि रखता है, वही सच्चे व्यक्ति से चुनौती महसूस करने लगता है, क्योंकि वह उसकी निरंतरता को चुनौती देता है। एक सच्चे विलक्षण व्यक्ति के पास कोई सांस्कृतिक पृष्ठभूमि नहीं होती और वह कभी नहीं जानता कि वह विलक्षण है।

● **लेकिन क्या यह संभव नहीं है कि एक विलक्षण व्यक्ति की उपस्थिति, एक पूरी तरह खिला हुआ व्यक्ति दूसरे के लिए कुछ उपयोगी हो सके, मॉडल प्रस्तुत करने के अर्थ में नहीं, बल्कि दूसरे के अंदर परिवर्तन लाने या विलक्षणता पैदा करने के अर्थ में?**

□ मैं कहता हूँ कि नहीं, क्योंकि यह विलक्षण व्यक्ति अपने आपको शारीरिक या आध्यात्मिक तौर पर पुनरुत्पन्न नहीं कर सकता। प्रकृति उसे व्यर्थ घोषित कर देगी। प्रकृति ही पुनरुत्पादन में रुचि रखती है और समय-समय पर कोई विलक्षण नमूना या मनोविनोद प्रस्तुत करती रहती है। यह नमूना पुनरुत्पादन करने में असमर्थ होता है, जो विकास की प्रक्रिया में नष्ट हो जाता है तथा स्वय को दूसरे के लिए प्रतिरूप बनाने में रुचि नहीं रखता। मेरा यही कहना है।

● **क्या आप ऐसा नहीं समझते कि प्रकृति द्वारा यह विलक्षणता पैदा करने का अर्थ है—व्यक्ति के अंदर की विलक्षणता को विकसित करना?**

□ यह घटना उन लोगों के साथ होनी ही है, जो अचानक या संयोगवश अपने आपको समस्त अतीत के बोझ से मुक्त कर लेते हैं। यदि मनुष्य के समस्त संचित ज्ञान और अनुभव को हटा दिया जाए, तो जो कुछ भी बचेगा, वह मूल स्थिति होगी—बिना प्राचीनता के। समाज के लिए उस तरह के व्यक्ति की कोई

उपयोगिता नहीं होगी। एक घने वृक्ष की तरह यह व्यक्ति छाया तो दे सकेगा, लेकिन उसे इसका एहसास कभी नहीं रहेगा कि वह छाया दे रहा है। यदि तुम उस वृक्ष के नीचे बैठोगे, तो तुम्हारे सिर पर एक नारियल गिर सकता है। अर्थात्, वहाँ खतरा हो सकता है। इसलिए समाज ऐसे व्यक्तियों से खतरा महसूस करता है। जिस तरह से इस समाज की रचना हुई है, उसमें वह ऐसे व्यक्ति का कोई उपयोग नहीं कर सकता। मैं जन सेवा में, लोगों की सहायता करने में, दु:ख से करहाते हुए दुनिया के प्रति दया दिखाने में, दुनिया को ऊपर उठाने में तथा इसी तरह की अन्य बातों में विश्वास नहीं करता। किसी ने भी मुझे मनुष्य जाति का रक्षक नियुक्त नहीं किया है।

● **क्या आप यह कह रहे हैं कि कोई भी वैज्ञानिक सिद्धांत, यौगिक दृष्टिकोण या ध्यान का संबंध विलक्षणता एवं स्वतंत्रता से नहीं है।**

□ मैं इस बारे में तुम्हें एक कहानी सुनाता हूँ। जब मैं युवा था, तब मैंने शिवानन्द सरस्वती के साथ हिमालय में सात साल तक योग किया। चूँकि मुझे उससे कोई मदद नहीं मिली, इसलिए मैंने उसे छोड़ दिया। सन् 1967 की घटना के बाद मैंने महसूस किया कि मेरा शरीर निसृत हो रही उस अबाध ऊर्जा को बरदास्त करने में असमर्थ है, जो मेरे शरीर में है। मैंने यह बात अपने मित्र देसिकाचार को बताई, जो योग के शिक्षक थे। उन्होंने कहा—"मैं नहीं समझता कि मैं इसमें तुम्हारी सहायता कर सकूँगा।" शायद मेरे पिता (मद्रास के डॉ कृष्णामाचारी) तुम्हारी कुछ सहायता कर सकें। इसलिए मैंने फिर दूसरी बार कुछ योग का अभ्यास किया। मैंने जल्दी ही यह महसूस किया कि ये जितने भी योग हैं, सब शरीर के काम करने की स्वाभाविक प्रक्रिया के विरोधी हैं। मैंने इस बारे में उनसे बातचीत करने की कोशिश की। लेकिन मैं जो कुछ भी कहता था, वह पातंजलि के योगसूत्र के अनुकूल नहीं बैठता था। इसलिए हम लोग बातचीत नहीं कर सके। नतीजे के तौर पर मैंने योग अभ्यासों को छोड़ने की घोषणा की। जब एक बार अवयवी (आर्गेनिज़्म) स्वयं को विचारों की पकड़ से मुक्त कर लेता है और तुम वहाँ शांति और समन्वय लाने की कोशिश करते हो, तब वहाँ शांति और असमन्वय का वातावरण बनता है। यह एक प्रकार से एक शांतिपूर्ण विश्व में युद्ध के द्वारा शांति लाने जैसी बात है। यदि खोज समाप्त होती है, तो वह बहुत बड़े रूप में समाप्त होती है। शांति तो एक ऐसी चीज है, जिसका न

तो अभ्यास किया जा सकता है और न ही इसे सिखाया जा सकता है।

● **मैं नहीं समझता कि हम लोग सचमुच इस तरह की किसी भारी-भरकम चीज में रुचि रखते हैं। हम तो कुछ ज्ञान, कुछ प्रशांति चाहते हैं...।**

□ इसका अर्थ यह हुआ कि एक भूखा आदमी अपने सामने फेंके गए कुछ टुकड़ों से ही संतुष्ट था। अब वह रोटी का पूरा टुकड़ा चाहता है, जिसका वायदा बाजार में बसे हुए धार्मिक पुरुष करते हैं। यहाँ प्रश्न भूखे को संतुष्ट करने का नहीं है, बल्कि यह है कि भूख अपने आपको संतुष्ट किए जाने के बिना ही जला डाले। भूख को और उसकी खोज, दोनों को जोड़ देना ही समस्या है।

यदि तुम संत और धार्मिक पुरुषों द्वारा पेश किए गए इन क्षुद्र प्रतिरूपों को छोड़ दोगे, तब तुम स्वाभाविक जैविकीय अवस्था में आ जाओगे। विचारों की पृथकतावादी संरचना, जो व्यक्ति के अंदर सदियों से डाल दी गई है, ने इस हिंसात्मक विश्व की रचना की है और शायद वह व्यक्ति को और इस धरती के शेष जीवन को विनाश के कगार पर ले जाकर छोड़ेगी। लेकिन जैविकीय दृष्टि से शरीर के एक-एक सेल में बुद्धिमत्ता है, जो अपने अस्तित्व की रक्षा करना जानती है और आपस में सहयोग करती रहती है। विकास के आतंक से मनुष्य एक-दूसरे का सहयोग करना सीखेगा, प्रेम और करुणा से नहीं।

● **इस जैविकीय सहयोग एवं व्यक्ति के खिलने के पीछे क्या कोई भावातीत वस्तु प्राप्त होने की कोशिश नहीं हो रही है?**

□ मैं नहीं समझता कि ऐसा है। यह पूरी तरह व्यक्तिवादी बात है। यह उस अर्थ में नहीं, जिस अर्थ में इसको तुम्हारी संस्कृति परिभाषित करती है। बल्कि बिलकुल दूसरे अर्थ में। विचारों के द्वारा शरीर को नियंत्रित करने की प्रक्रिया ने मनुष्य के संपूर्ण विकास की संभावना को नष्ट कर दिया है। तुम अपनी वर्तमान की प्रबल धारणाओं को छोड़ सकते हो और वह सचेतनता तुम्हारे अंदर कोई गुणात्मक परिवर्तन लाने में सहायक हो सकती है। प्रकृति विलक्षण व्यक्तित्व तैयार करने का प्रयास कर रही है। वह क्षमता पहले से ही तुम्हारे अंदर मौजूद है। लेकिन दुर्भाग्य से मनुष्य गलत रास्ते पर चला गया है और वहाँ से निकलने का कोई रास्ता दिखाई नहीं देता।

● **व्यक्तित्व के खिलने के संबंध में जो प्रश्न मुझे हमेशा कुरेदता रहता है वह है कि मेरे अंदर ऐसा क्यों नहीं है?**

☐ इसको भूल जाओ। तुम्हें ऐसा मौका नहीं मिलेगा। इस बारे में तुम कुछ नहीं कर सकते। मैं नहीं जानता कि मैं तुम्हें क्या करने की सलाह दूँ। तुम फँस गए हो। शायद जैविक विज्ञान या माइक्रोवैज्ञानिक कुछ उत्तर दे सकें। मैं तुम्हें भरोसा दिलाता हूँ कि ये धार्मिक कर्मकांड तुम्हारी तनिक भी सहायता नहीं कर सकेंगे। आगे यदि जिनेटिक इंजीनियरी में कुछ विकास हुआ, तो वह स्वतंत्रता का और भी हनन कर लेंगे। तब इन सबका सही रूप से अंत हो जाएगा।

अब कंप्यूटर इतने तेज हो गए हैं कि वे चिंतन करने लगे हैं और अपनी गलती को सुधारने भी लगे हैं। कोई दिन ऐसा आएगा कि हम उन्हें अपने अंदर प्लग से जोड़ लेंगे और उनकी सलाह से काम करने लगेंगे। यदि तुम भी अपने शरीर को कंप्यूटर की तरह काम करने दो, तो तुम स्वयं ऐसा कर सकते हो। अच्छे जीवन के लिए इन जैविकीय अवयवों की असाधारण बुद्धिमत्ता जरूरी है। लेकिन हम हैं कि हर समय उसकी प्रकृति तथा क्रिया प्रणाली में विचारों के माध्यम से हस्तक्षेप करते रहते हैं। तुम्हारा यह जो प्राकृतिक शरीर रूपी कंप्यूटर है, उसमें पहले से ही कार्यक्रम पड़े हुए हैं। उसको दबाने भर से कार्यक्रम प्रस्तुत हो जाएगा। तुम्हें कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं है। आदिम समय में लंबे काल तक हम इस तरह रहे थे। हमारे अंदर बिजली की तरह कुछ तड़पता है और वहाँ मौजूद सभी चीजों को जला डालता है। यह व्यक्ति तब न तो पापी रह जाता है और न धर्मात्मा। वह समाज के ढाँचे से बहुत दूर हो जाता है।

● **तो इस प्रकार हमें अहस्तक्षेप का अभ्यास करना चाहिए ?**

☐ कोशिश करो कि तुम कुछ भी अच्छी घटना घटने की प्रतीक्षा करने से बाहर हो जाओ। ऐसी प्रतीक्षा किसी भी चीज के घटने की संभावना को रोकती है। मैं तुमसे यह सब अनुभव के आधार पर कह रहा हूँ। मैं 49 वर्षों तक 'यू.जी.' नामक व्यक्ति को ढूँढ़ता रहा। मेरी संपूर्ण संस्कृति मुझे गलत रास्ते पर ले गई। मैंने मृत गुरुओं और जीवित गुरुओं के जरिए भी कोशिश की। अचानक मैंने यह जाना कि यह खोज अर्थहीन है और मैं ही अपना दुश्मन था। मेरा दिमाग ही मेरा दुश्मन था। अब मेरे अंदर से संपूर्ण 'नॉलेज' एवं खोज की उत्सुकता पूरी तरह समाप्त हो गई है।

● **और आप हैं कि इस बात को दूसरों को समझाने की कोशिश नहीं करते......**

□ यह बाजार में बेचे जाने योग्य कोई वस्तु नहीं है। यह झूठी माँग की अनुपस्थिति है, जो तुम्हारे अंदर समाज और संस्कृति ने रख दी है। मेरे अंदर से अपने आपको बदलने तथा दुनिया को बदलने की इच्छा; दोनों ही समाप्त हो गई हैं। न तो मैं समाज विरोधी हूँ और न ही उसके प्रति कृतज्ञ। मुझे ऐसा नहीं लगता कि मैं लोगों की सहायता करने के अपने दायित्व को निभाने के लिए मजबूर हूँ। इस तरह की सब चीजें बकवास हैं।

● इसका मतलब यह हुआ कि विश्व को बदलने की इच्छा, चाहे उसके बारे में लोग कितना ही उदात्त क्यों न अनुभव करें, मुख्यत: स्व-केंद्रित एवं अहम्‌पूर्ण गतिविधि है। क्या आप यही कहना चाहेंगे ?

□ वह व्यक्ति; जो स्वयं को विश्व से या जिसे वह बुराई कहता है, उससे मुक्त होना चाह रहा है, वह सबसे अधिक अहम्‌वादी व्यक्ति है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह समझना है कि अहम् जैसी कोई वस्तु नहीं होती। जब इस बात की आंतरिक समझ पैदा हो जाती है, तब वह तुम्हारे अंदर की प्रत्येक वस्तु को पूरी शक्ति के साथ आघात पहुँचाती है। यह एक ऐसा अनुभव है, जिसे दूसरे के साथ बाँटा नहीं जा सकता। यह अनुभव ही नहीं है, बल्कि यह एक दुर्घटना है, जिसमें अनुभव एवं अनुभवकर्ता दोनों ही समाप्त हो जाते हैं। इस स्थिति वाला व्यक्ति न तो यथार्थ से भागता है और न ही उसके पास कोई रोमानी प्रवृत्ति रह जाती है। वह अपने अंदर दुनिया को बचाने जैसी कोई मानवतावादी धारणा नहीं पालता, क्योंकि वह जानता है कि इसे बचाने की स्थति में केवल इसकी गति में कुछ जोड़ना भर होगा। वह जानता है कि इसके बारे में वह कुछ नहीं कर सकता।

● लेकिन हमें तो जानना है और कुछ करते रहना है। हम एक ऐसे कर्म की धारणा कैसे बनाएँ, जो इस समाज की व्यवस्था को कुछ गति न दे ?

□ यह भी केवल एक अन्य धारणा ही है। तुम्हारे कर्म और कर्मों के परिणाम एक ही घटना को जन्म देते हैं। यह तार्किकता तथा कारण एवं प्रभाव का ही विचार है, जो घटनाओं के क्रम को जन्म देता है। बिजली के स्विच को दबाना और प्रकाश का फैल जाना मुख्यत: एक ही वस्तु हैं, दो नहीं। तुम्हें दो या उससे अधिक घटनाएँ दिखती हैं, क्योंकि समय ने दोनों के बीच में अंतराल पैदा

कर दिया है। लेकिन समय एवं स्थान, 'समय' एव 'स्थान' के विचार क अतिरिक्त कुछ नहीं है।

निर्माण और विध्वंस एक साथ चल रहे हैं। इसी प्रकार विचारों का उत्पन्न होना एवं उनका नष्ट होना भी एक साथ हो रहा है। इसीलिए मैं इस बात पर जोर देता हूँ कि मृत्यु जैसी कोई चीज है ही नहीं। यहाँ तक कि यह शरीर भी नही मरता। यह केवल अपना रूप ही बदलता है। चूँकि सचमुच मृत्यु का अस्तित्व ही नहीं है, इसलिए तुम्हारे लिए इसका अनुभव करना असंभव है। तुम जो अनुभव करते हो, वह केवल किसी शरीर के अदृश्य हो जाने से उत्पन्न खालीपन या शून्यता का अनुभव है। न तो मृत्यु का अनुभव किया जा सकता है और न ही उस दृष्टि से जन्म का। जीवन की स्वाभाविक स्थिति में जहाँ शरीर को विचारों के हिसाब के बिना स्वाभाविक रूप से कार्य करने की अनुमति है, वहाँ जीवन और मृत्यु हर समय एक साथ चल रहे हैं।

● जिस स्वाभाविक स्थिति के बारे में आप बात कर हरे हैं, क्या उसका कोई मनोवैज्ञानिक अस्तित्व, अहम्, आत्म या कोई पहचान है?

□ कोई व्यक्ति नहीं है और कोई स्थान भी नहीं है, जो आत्म की रचना कर सके। विचारों की निरंतरता से असंबद्ध, स्वतंत्र तथा अंतर्क्रियाओं की श्रृंखला उत्पन्न होती है। मेरे चारों ओर के वातावरण में अभी जो हो रहा है, वह मेरे अन्दर भी हो रहा है। यहाँ कोई विभाजन नहीं है। यदि तुम अपने चारों ओर लपेटे हुए कवच को उतार दोगे, तब तुम्हें चंद्रमा की कलाओं, मौसम के परिवर्तन तथा विभिन्न ग्रहों की गतियों की असाधारण संवेदनशीलता का अनुभव होगा। मेरे अपने अंदर किसी भी प्रकार का अकेलापन, पृथकत्व तथा विभाजन नहीं है।

● आप मृत्यु की जिस प्रक्रिया से गुजरे हैं, क्या आप उसके बारे में हमें थोड़ा-बहुत बताएँगे?

□ हालाँकि इसे बताया नहीं जा सकता, फिर भी मैं यह कह सकता हूँ कि मृत्यु की उस स्थिति में यह सामान्य साँस बिलकुल रुक जाती है और शरीर अन्य शारीरिक अवयवों से साँस लेने योग्य हो जाता है। मैंने इससे अनोखी घटना के बारे में कई चिकित्सिकों से बात की। लेकिन केवल बाल विशेषज्ञ डॉ. लेबोयर ने इसके बारे में मुझ थोड़ा-बहुत बताया। उन्होंने बताया कि नवजात बच्चा भी

इसी प्रकार साँस लेता है। शायद यही प्राणायाम का अर्थ भी है। यह शरीर प्रतिदिन मृत्यु की प्रक्रिया से गुजरता है। यहाँ तक कि हर क्षण यह अपने आपको पुनर्जीवित करता है। लेकिन जब वह अपने आपको पुनर्जीवित नहीं कर पाता, तब उसका अंत हो जाता है और वह राख के ढेर में बदल जाता है।

मृत्यु की यही प्रक्रिया योग है, न कि सैकड़ों मुद्राएँ एवं श्वास के अभ्यास। जैसे ही विचार की प्रक्रिया स्वयं को दो में विभाजित करना बंद कर देती है, वैसे ही इस शरीर की मृत्यु हो जाती है। पहले मृत्यु होनी चाहिए। इसके बाद योग का प्रारंभ। वस्तुत: योग शरीर की एक ऐसी कला है, जिसके माध्यम से वह मृत्यु की स्थिति से वापस लाती है। ऐसा लगता है कि यह घटना कुछ ही लोगों के साथ घटी है; जैसे श्रीराम, कृष्ण एवं श्री रमण महर्षि। पुनर्जीवन का यह योग एक असाधारण वस्तु है। यदि तुम नवजात बच्चे को देखो, तो तुम पाओगे कि उसकी मुद्राओं और संपूर्ण शरीर की भाषा में एक प्राकृतिक लय है। जब श्वास और हृदय की गति पूरी तरह रुक जाती है, तब यह शरीर फिर से वापस लौटना शुरू कर देता है। शरीर की शव की स्थिति, उसकी कठोरता, उसका ठंडापन आदि अदृश्य होने लगते हैं। शरीर गर्म होने लगता है। उसकी पाचन-क्रिया गतिशील हो जाती है। साथ ही उसकी नब्ज भी शुरू होने लगती है। यदि तुम वैज्ञानिक उत्सुकता के कारण मेरा परीक्षण करना चाहते हो, तो उसमें मेरी रुचि नहीं है। मैं तो केवल एक बात भर कर रहा हूँ न कि अपना उत्पाद बेच रहा हूँ।

यह शास्त्रीय योग आसन की बजाय चीन के ताई ची के समान है। मृत्यु के बाद शरीर में जिस तरह का कड़ापन आ जाता है, वह बहुत सुंदर होता है, बहुत अच्छा होता है, मानो किसी नवजात बच्चे की मुद्राएँ हों। योगी अन्य मुद्राएं करने के बाद शवासन करते हैं। यह पीछे जाना है। तुम अत्यंत कड़ेपन के रूप में योग का आरंभ करते हो और बाद में यह स्वाभाविक लयात्मक गतियों के माध्यम से पुनर्नवी होता है। ऐसा लगता है कि कोई ऐसा गुरु था, जो मृत्यु की इस स्वाभाविक प्रक्रिया से गुजरा था और उसके शिष्यों ने उसे फिर से जीवित होते देखा था। तब अपनी साँस और मुद्राओं की तकनीकी के द्वारा उस गुरु की मृत्यु की प्रक्रिया को दोहराने की कोशिश की। लेकिन उन्होंने उसका उलटा किया। पहले तुम्हें मरना पड़ेगा। तब फिर योग होगा।

मृत्यु एवं पुनर्जीवन की यह संपूर्ण प्रक्रिया मेरे लिए हमेशा जिज्ञासापूर्ण रही

है और यह प्रक्रिया मेरे साथ एक दिन में कई बार होती है। यह किसी समय भी हो जाती है। यहाँ तक कि तब भी, जब आत्म या अहम् का विचार नष्ट हो चुका होता है। फिर भी ऐसा कुछ है कि मृत्यु का अनुभव किया जा सकता है, अन्यथा मैं इस समय तुम्हें कुछ भी नहीं बता पाता।

● **तो बिना फेफड़ों के साँस लेना मृत्यु की प्रक्रिया की अनुघटना (एपीफिनामन) है।**

□ जरूरी नहीं कि ऐसा ही हो। कभी ऐसा भी होता है कि तुम बैठे हुए हो, और अचानक ही साँस की कमी महसूस करते हो, हवा की तलाश करते हुए। यह वायु द्वितीयक वायु (सैकंड विंड) है। योगी विभिन्न तकनीकों के माध्यम से इस 'द्वितीयक वायु' को प्राप्त करने की कोशिश करता है। धावक भी ऐसा ही करता है। यदि धावक को ध्यान से देखो, तो तुम पाओगे कि वह बहुत तेजी से साँस छोड़ता है और वायु की कमी महसूस करता है। वह इस 'द्वितीयक वायु' की सहायता से दौड़ता है। मुझे कुछ ऐसा ही लगता है।

● **क्या इस मृत्यु-प्रक्रिया में होने वाले परिवर्तनों के बारे में पश्चिमी देशों के चिकित्सकों ने कुछ नहीं कहा है?**

□ कहा है। लेकिन पश्चिमी चिकित्साशास्त्र भी इसके प्रभाव को बहुत थोडा ही जान सका है। अमेरिका के डॉ. पाल लिन ने इस बारे में कुछ बताया था, जिसमें थाएमस गलैंड के कार्य के बारे में कहा था। लेकिन इसके अतिरिक्त भी कुछ ऐसी ग्रंथियाँ हैं, जो प्रभावित होती हैं। शरीर की प्रत्येक गतिविधि साँस और समन्वय को नियंत्रित करने वाली पीनियल ग्रंथि सबसे अधिक प्रभावित होती है। जब पृथकत्त्व विचार संरचना नष्ट हो जाती है, तब ये सभी ग्रंथियाँ और स्नायु शरीर के अंगों के ऊपर काम करने लगते हैं। ग्रंथियों के ऊपर विचारों की पकड़ बनाना बहुत दर्दनाक प्रक्रिया है। इसका अनुभव किया जा सकता है। इसे जलाना होगा। किसी भी वस्तु के जलने के लिए ऊर्जा एवं स्थान की आवश्यकता होती है। इसीलिए जब शरीर की सीमा समाप्त हो जाती है, तब चारों दिशाओं से ऊर्जा निःसृत होने लगती है। शरीर की अपनी सीमा है, और जब वह इस ऊर्जा को धारण करना चाहती है, तो उससे दर्द बढ़ता है। हालाँकि उस दर्द का अनुभव नहीं होता।

मृत्यु की यह प्रक्रिया दर्दपूर्ण होती है, जिसे कोई नहीं चाहता। यहाँ तक कि सबसे अधिक उत्सुक धार्मिक व्यक्ति एवं योगी भी नहीं चाहता। यह बहुत ही

कष्टपूर्ण है। यह इच्छा का परिणाम नहीं है, बल्कि अणुओं का आकस्मिक सम्मिलन है।

यह सब तुम्हारी वैज्ञानिक व्याख्या में किस तरह फिट बैठेगा, मैं नही जानता। इस क्षेत्र में काम करने वाले वैज्ञानिक इस परिवर्तन को जानना चाहते हैं और इसे एक रहस्यात्मक रूप में नहीं, बल्कि शारीरिक रूप से व्याख्यायित कर रहे हैं। ये वैज्ञानिक यह मानते हैं कि इस तरह का व्यक्ति जैविकीय विकास के अंतिम उत्पाद का प्रतिनिधित्व करता है, न कि वैज्ञानिक उपन्यासों द्वारा कल्पित किए गए अतिमानव या अतिधार्मिक व्यक्ति का। प्रकृति की केवल इसी में रूचि है कि वह ऐसे जीवों की रचना करे, जो उद्वेलन के प्रति पूरी तरह संवेदनशील हों और स्वयं को पुनर्जीवित कर सकें। प्रकृति के लिए बस इतना ही है। इस शरीर में असाधारण कल्पना एवं संवेदनशीलता की क्षमता हैं। यह अद्‌भुत है। मै नहीं जानता कि किसने यह अद्‌भुत वस्तु बनाई है।

विकास के क्षेत्र में काम करने वाले वैज्ञानिक अब यह सोचने लगे हैं कि इस ग्रह पर वर्तमान में रहने वाले हम सब लोग शायद निम्न श्रेणी के जीवों से उत्पन्न हैं। निम्न श्रेणी के जीवों में एक चेतनागत परिवर्तन हुआ, तब हमारा जन्म हुआ। यही कारण है कि हमने सारी चीजों को अस्त-व्यस्त कर दिया। कोई भी व्यक्ति यह नहीं बता सकता कि इस संपूर्ण वस्तु को बदला भी जा सकता है।

● **क्या यह संभव है कि मृत्यु की प्रक्रिया में इस तरह होने वाला परिवर्तन मानवता के भाग्य को बदल दे?**

□ वह संपूर्ण मानवता की चेतना को प्रभावित करने का जो दावा करता है, सचमुच, उसका कोई आधार ही नहीं है। मैं मानता हूँ कि संपूर्ण मानवीय चेतना में अपनी शक्तिशाली गतिशीलता के साथ अद्‌भुत शक्ति है। मैं नहीं समझता कि जिसके बारे में वे बातें कर रहे हैं, उसे समझते भी हैं। संपूर्ण मानवीय चेतना अत्यंत विकट वस्तु है। वे केवल उसी चेतना को जानते हैं, जिसकी रचना विचारों ने की है। मनुष्य की विचारपूर्ण चेतना को प्रचार-प्रसार या नशीले पदार्थों द्वारा प्रभावित किया जा सकता है। चूँकि इस तरह के साधनो से किया गया परिवर्तन पुराने ढाँचे के अंतर्गत ही होगा, इसलिए वह व्यर्थ है। आखिर हम किस चीज को बदल सकते हैं? क्या यह परिवर्तन आवश्यक है? यदि है तो फिर किसलिए? मैं नहीं जानता।

● **आपकी बातों से ऐसा लगता है कि आप जिस परिवर्तन की बात कर रहे हैं, उसके लिए अलग तरह की जमीन चाहिए। हम सब एक बंजर साधारण जमीन में पैदा हुए हैं। क्या कोई अन्य जमीन हमारी सहायता नहीं कर सकती?**

□ बंजर जमीन होने के बावजूद तुम्हारे अंदर संवेदना मौजूद है। तुम्हारे अंदर भी वे सारे तत्त्व मौजूद हैं, जैसे यहाँ रखे पौधे में। यदि तुम इसमें खाद-पानी नहीं दोगे तो यह मर जाएगा। मानव जाति के साथ भी कुछ ऐसा ही है। नए जीवन विकसित करने की कोशिश मत करो। पेड़-पौधों के साथ हम यही करते रहे हैं और यह करके हमने इस पूरी धरती को प्रदूषित कर दिया है। यदि मनुष्य के लिए भी अच्छी जमीन तैयार करने की कोशिश की गई, तो उसके साथ भी यही होगा।

● **आप जिस तरह से बता रहे हैं, उससे यह अर्थ निकल रहा है कि पृथकत्व ढाँचे के नष्ट होने के बाद ही व्यक्ति में मूलभूत परिवर्तन हो सकता है। क्या इस विस्फोट के बाद 'आत्म' बचा रहता है। क्या मस्तिष्क में केवल 'मैं'.........?**

□ मुझमें 'मैं' नहीं है। 'मैं' केवल प्रथम पुरुष के वाक्य का सर्वनाम है। मानव जाति के विचार, अनुभव, संवेदना और आशाओं की संपूर्णता ही इस 'मैं' को बनाती है। यह अतीत से पैदा हुआ है। यह 'मैं' मनुष्य की संपूर्ण चेतना का प्रतीक है। वस्तुतः मेरे अंदर कोई भी पृथकत्व अथवा भिन्न मनोवैज्ञानिक तत्त्व नहीं है। इसी प्रकार मेरे अंदर न तो 'मस्तिष्क' जैसा शब्द है और न ही 'तुम्हारे मस्तिष्क' और 'मेरे मस्तिष्क' जैसा। 'मस्तिष्क' शब्द की रचना इसलिए की गई है, ताकि हम सब अपनी-अपनी निरंतरता को बनाए रख सकें। इस पृथकत्व ढाँचे ने, जिसे हम 'मस्तिष्क' कहते हैं, शरीर की प्राकृतिक तौर पर पुनर्जीवित रहने की क्षमता को उस सीमा तक विषाक्त कर दिया कि हमारे समाज ने उसे सहनशीलता के स्तर तक ढकेल दिया है। हाइड्रोजन बम पुलिस का ही विस्तार है, जो मेरे और मेरी संपत्ति की रक्षा के लिए बनाया गया है। इन दोनों के बीच विभाजन रेखा खींचना संभव नहीं है।

● **आपकी ये सब बात हमें कोई क्रांतिकारी कदम उठाने के लिए प्रोत्साहित क्यों नहीं कर रही हैं?**

□ इसकी जो भी संभावनाएँ थीं, वे पहले ही समाप्त हो चुकी हैं, क्योंकि मैंने जो कुछ भी तुम्हें बताया है, वे सब तुम्हारे पुराने ढाँचे के हिस्से बन गए हैं। जो कुछ भी मैंने कहा, वह तुम्हारी तथाकथित संवेदनशीलता की गहराई तक प्रवेश नहीं कर पाया है। जो चीजें उसे रोक रही थीं, वे अभी भी मौजूद हैं। सच तो यह है कि इस बातचीत के द्वारा वे अवरोध और अधिक मजबूत ही हुए हैं। आत्म स्वयं को शाश्वत बनाने के लिए प्रत्येक वस्तु का उपयोग करेगा। उसके लिए कोई चीज अवांछनीय नहीं है। यदि तुम कहीं जाकर अपने में उपस्थित पहले की वस्तुओं को नष्ट करना चाहोगे, तो उसके लिए भी तुम विचारों की ही सहायता लोगे।

● आप ऐसा क्यों सोचते हैं?

□ क्योंकि यह इस तरह से ही काम करता है। जो कुछ भी मेरे साथ घटा, वह आकस्मिक था। बस घट गया। मेरे सभी प्रयास, संघर्ष और उद्देश्य के बावजूद यह घटा और वह 'जादू का जादू' था। तुम इसे सायास नहीं पा सकते। तुम इसे दोहरा भी नहीं सकते, क्योंकि जब तुम पर घटता है, तो एक ऐसे दिक्क-काल में घटता है, जिसने तुम्हारे जीवन का कभी स्पर्श नहीं किया है। यह एक अनुभव है ही नहीं। इसलिए इसे दूसरे को बताया नहीं जा सकता, और न ही दूसरे तक पहुँचाया जा सकता है। यह ऐसा नहीं है कि इसे तुम बाँट सको। यह एक अनोखी चिड़िया है, एकमात्र चिड़िया। तुम यही कर सकते हो कि इसे संग्रहालय में रख दो और देखते रहो। तुम इसे न तो कभी दोहरा सकते हो और न ही कभी बाँट सकते हो।

● **बिना केंद्र के, बिना आत्मा के और बिना उल्लेख बिंदु (रिफ्रेंस प्वाइंट) के जीवन के बारे में सोचकर भय लगता है।**

□ 'मैं' की समाप्ति तुम्हारे किसी भी संकल्प से नहीं की जा सकती। अंतिम निष्कर्ष के रूप में यही है कि यह तुम्हारे अंदर शुक्राणुओं के द्वारा लिखा गया अभिलेख है। वंशानुगत चरित्र ने तुमको पूर्व निर्धारित कर दिया है। इस दुःखद वंशानुगत चरित्र से मुक्त होना तथा मस्तिष्क में उपस्थित पूर्व लेखों को फेंक देना अद्‌भुत साहस की माँग करता है। इसके लिए तुम्हें सारी चीजों को हटाकर अलग कर देना होगा। तुम्हारी समस्या यह नहीं है कि किसी से कोई वस्तु कैसे पाई जाए, बल्कि यह है कि यदि तुम्हें कोई वस्तु देना चाहता है, तो

उस वस्तु के लिए कैसे मना किया जाए। मेरे मामले में 'कैसे' का प्रश्न नही है। इसके लिए अत्यंत साहस की आवश्यकता होती है।

अभी मैं यहाँ बैठा हूँ और मेरी आँखें खुली हुई हैं, तो मेरा संपूर्ण अस्तित्व इस आँख में है। अपने सामने से गुजरती हुई प्रत्येक वस्तु को देखने का दृश्य अद्भुत है। मेरा यह देखना इतना गहन और अड़ियल है कि पलकें कभी नहीं झपकतीं तथा देखते समय 'मैं' का भाव नहीं रहता। प्रत्येक वस्तु मुझे देखती है, मैं नहीं देखता। यह बात जिस प्रकार आँखों के साथ है, उसी प्रकार अन्य इंद्रियों के साथ भी है। मेरी प्रत्येक इंद्रिय स्वस्थ रूप से अपना काम करती है। इनसे मुझे जो संवेदनाएँ प्राप्त होती हैं, उनमें न तो परिष्कार होता है, न नियंत्रण, और न ही कोई सामंजस्य, बल्कि वे अकेले मेरे शरीर में अपनी तरंगें प्रस्तुत करती हैं। उनमें थोड़ा-सा सामंजस्य तब होता है, जब शरीर के अंगों को अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए सरल मशीनी तरीके से काम करने की आवश्यकता होती है। इनमें केवल उतना ही सामंजस्य होता है, जितनी आवश्यकता किसी एक स्थिति विशेष में पड़ती है। इसके बाद वे सभी फिर से अपनी स्वतंत्रता एवं असंबद्ध अवस्था में लौट जाती हैं।

मैं जो कुछ भी कह रहा हूँ, उसे 'आनंद', 'परमानंद' या 'ब्रह्मानंद' के रूप में मत समझो। वस्तुतः यह भयभीत करने वाली और भटकाने वाली स्थिति है। इसका तथाकथित रहस्यात्मक या चरम आनंद के अनुभव से कुछ लेना-देना नहीं है। मैं यह बिलकुल नहीं समझ पाता कि इन सबको केवल आध्यात्मिक या धार्मिक शब्दावली क्यों दी जाती है। मैं मनुष्य के शरीर की एक सरल जैवीय गतिविधि से अधिक कुछ भी नहीं बता रहा हूँ। हालाँकि यह सब प्रकृति का एक भाग है, फिर भी यह वैज्ञानिक ज्ञान या प्राकृतिक अध्ययन के किसी साँचे मे फिट नहीं बैठेगा।

● **इसका मतलब यह हुआ कि आप प्रत्येक वस्तु को निरस्त करते हैं।**

□ निरस्त नहीं। जिस चीज को तुम निरस्त कर रहे हो और जो निरस्त कर रहा है, उसका उस तरीके से कोई लेना-देना नहीं है, जिस तरीके मे तुम्हारा शरीर अभी क्रियाशील है। यदि तुम उसे साफ तौर पर देख लोगे, तब निरस्त करने या परित्याग करने जैसी कोई चीज नहीं रह जाएगी। तुम इसलिए निरस्त

करने को तैयार हो, ताकि तुम कुछ पा सको। तुम्हारे उपनिषद कहते हैं कि यह तुम्हारा सबसे प्रिय और उच्चतम उद्देश्य होना चाहिए। लेकिन मैं ठीक इसके विपरीत इस बात पर जोर देता हूँ कि इच्छाओं का ही अंत हो जाना चाहिए। यह अपने आपमें एक खोज है। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि इसे तुम कितना महान समझते हो। यह तुम्हें विचलित कर रहा है। उन क्षुद्र इच्छाओं को भूल जाओ, जिनको नियंत्रित करने के लिए तुमसे कहा गया है। जब इच्छाओं की इच्छा ही समाप्त हो जाएगी, तब दूसरों का कोई महत्त्व नहीं रह जाएगा।

● **क्या आप यह नहीं कह रहे हैं कि जो कुछ भी आपके साथ घटा है, उसे समझा नहीं जा सकता?**

□ निश्चित रूप से, हाँ। इस ढाँचे के अंतर्गत प्रत्येक वस्तु सही है, सापेक्षिक रूप से सही है। लेकिन तुम यथार्थता का अध्ययन मनोविज्ञान और आत्म को मिलाकर करना चाहते हो। और मैं इन दोनों को स्पष्ट तौर पर अस्वीकार करता हूँ। इसलिए यथार्थता, मनोवैज्ञानिक विश्वसनीयता तथा अस्मिता की तुम्हारी खोज मेरे लिए निरर्थक हैं। ये सभी किसी भयभीत व्यक्ति के उत्पाद हैं। आत्म नहीं, बल्कि वैज्ञानिक कार्यप्रणाली तुम्हें कुछ ऐसा पैमाना दे सकती है, ताकि तुम मेरे कहे हुए की सच्चाई और झूठेपन को पा सको।

देखो, मैंने अपने जलते हुए प्रश्न का उत्तर पाने के लिए सब कुछ किया। मेरा प्रश्न था---क्या ब्रह्मानंद (इंलाइटमैंट) जैसी कोई वस्तु है भी? या हम सबको मूर्ख बनाया जाता रहा है? इस प्रश्न का उत्तर पाने की असफलता तथा झल्लाहट ने मेरे अंदर एक तीव्रता पैदा की। मेरे जीवन के आरंभ में एक तिहाई भाग भारत में थियोसोफिस्ट, जे. कृष्णमूर्ति, योगी, धार्मिक-पुरुष-संत, रमण महर्षि तथा रामकृष्ण जैसे लोगों के आसपास रहने में बीता। आध्यात्मिक मामलो में रुचि रखने वालों को ये सभी फायदा पहुँचा सकते थे। लेकिन मैंने पाया कि मेरे लिए यह सब बिलकुल व्यर्थ है और बेकार है। मेरा पूर्व और पश्चिम दोनों की ही संपूर्ण धार्मिक परंपराओं से भ्रम पूरी तरह टूट गया और मैं आधुनिक मनोविज्ञान, विज्ञान तथा भौतिक जगत में डूब गया। तब मैंने पाया कि आत्मा और मनोविज्ञान का संपूर्ण विचार ही झूठा है। जब मैंने इस भौतिक जगत पर प्रयोग और अध्ययन किया, तब आश्चर्यजनक ढंग से पाया कि 'वस्तु' (मैटर) जैसी कोई चीज है ही नहीं। इस प्रकार आध्यात्मिक और भौतिक आधारों को

अस्वीकार करने के बाद मेरे लिए कुछ भी नहीं बचा। कहीं से भी उत्तर पाने में असमर्थ होकर मैं यूँ ही बेमतलब भटकने लगा। लेकिन एक दिन अचानक मुझे यह ज्ञान हुआ कि मैं जो कुछ कर रहा था, वह व्यर्थ था और जिस प्रश्न ने मेरे संपूर्ण जीवन को अभिभूत कर रखा था, वह जीकर नष्ट हो गया है। इसके बाद से मेरे पास कोई प्रश्न शेष नहीं रहा है। प्यास बुझने से पहले ही समाप्त हो गई है। उत्तर नहीं, बल्कि प्रश्नों का अंत ही सबसे महत्त्वपूर्ण है। हालाँकि मेरे अंदर की प्रत्येक वस्तु जल चुकी है, इसके बावजूद अंगारा बचा हुआ है, जो स्वयं को स्वाभाविक लय में अभिव्यक्त करता है। मेरी इस अभिव्यक्ति का समाज पर क्या प्रभाव होगा, इसकी मुझे चिंता नहीं।

□□□

पारिभाषिक शब्दावली

ज्ञानोदय	(Enlightenment)
तत्क्षण	(Unitary)
स्वचालित	(Automatic)
मृत्यातीत	(Transcend)
जागरूकता	(Awarness)
खोज	(Discovery)
परमानंद	(Beatitude)
सततता	(Continuity)
महापरमानंद	(Infinite bliss)
सत्व	(Being)
चेतना	(Consciousness)
भ्रम	(Illusion)
निश्चितता	(Certainty)
आत्म-स्वीकृति	(Self-relization)
चाहत	(Wanting)
प्रशांति	(Tranquility)
नीरवता	(Quietness)
दिक्	(Space)
आत्मरहित	(Selfless)
मुक्त	(Free)
संवाद	(Happiness)
सम्पर्क	(Communication)
समयातीत	(Timeless)
परे	(Beyond)
परिशुद्ध	(Pure)